ओ३म्

गोदुग्ध अमृत है

(दूध से चिकित्सा)

— स्वामी ओमानन्द सरस्वती

भारत के प्राचीन मुद्रांक

लेखक—स्वामी ओमानन्द सरस्वती। मूल्य ५०१ रु०

पुरातत्त्वीय शोध के आधार पर लिखे गये इस मौलिक ग्रन्थ में भारत के प्राचीन प्रसिद्ध नगर कौशाम्बी, अहिच्छत्रा, स्रुघ्न, सुनेत, प्रकृतानाकनगर, रोहीतक आदि से उपलब्ध प्राचीन सैकड़ों मुद्रांक (मोहरों) का सचित्र विवरण प्रकाशित किया गया है। हिन्दी भाषा में इस विषय का प्रथम और स्तुत्य प्रयास किया गया है। श्री स्वामी जी ने पन्द्रह वर्ष और लाखों रुपये लगाकर यौधेय, वृष्णि, पाञ्चाल आदि गणराज्यों के सेनापति, महासेनापति आदि राज्याधिकारियों के मुद्रांक एकत्र किये हैं। प्राचीन भारत के लुप्त इतिहास के पुनर्लेखन में यह सामग्री अपना बेजोड़ स्थान रखती है। पुस्तक संग्रहणीय और पठनीय है।

भारत के प्राचीन टकसाल

लेखक—स्वामी ओमानन्द सरस्वती। मूल्य २०० रुपये।

पुरातत्त्व की विशुद्ध सामग्री के आधार पर प्रस्तुत किये गये इस ऐतिहासिक शोध ग्रन्थ में प्राचीन भारत की मुद्रा निर्माण पद्धति पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थ में कार्षापण यौधेय, भारतीय यवन राजा, कुषाण, सामन्तदेव, आदिवराह मिहिरभोज, गदिया और भारत सासानी आदि विविध प्रकार की स्वर्ण, रजत और ताम्र मुद्राओं के सांचों का सचित्र और विशद वर्णन किया गया है। यह १८ वर्षों के परिश्रम का अद्भुत और मौलिक प्रयास है। ग्रन्थ वस्तुतः पठनीय और संग्रहणीय है।

प्रकाशक—

हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय

गुरुकुल झज्जर, रोहतक (हरयाणा)

ओ३म्

गोदुग्ध अमृत है

अर्थात्

दूध से चिकित्सा

लेखक

श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती

प्रकाशक—

धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालय,

कन्या गुरुकुल, नरेला, दिल्ली

डॉ० सुधीर [illegible]

प्रकाशक :

धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालय

कन्या गुरुकुल, नरेला, दिल्ली—११००४०

दूरभाष—८६३४०

प्रथम संस्करण : २०००

संवत् २०३६

मूल्य : ५ रुपये

मुद्रक :

भाटिया प्रेस, गुरु नानक गली,

गांधी नगर, दिल्ली—३१

विषय सूची

भूमिका

मैंने "गो दुग्ध अमृत है" इस नाम से एक लेख सन् १९५४ में जनवरी फरवरी के सुधारक के गौ विशेषांक में लिखकर प्रकाशित कराया था। उसी समय से ऐसा विचार था कि इस विषय पर विस्तार से लिखूं। किन्तु समय वीतता गया और सन् १९७९ का जौलाई मास आ गया अर्थात् साढ़े २५ वर्ष से अधिक समय वीत गया और मैं इस लेख को विस्तार से नहीं लिख सका। "गौ दुग्ध अमृत है" इस विषय पर अनेक गोरक्षा सम्मेलनों और आर्य समाज के वार्षिक उत्सवों में सैकड़ों व्याख्यान दिये होंगे। गो रक्षा आन्दोलन में जेल में इस विषय पर एक मास से अधिक प्रतिदिन वोलता रहा, न जाने कितने गो रक्षा प्रेमी भाई और वहिनों ने सैकड़ों वार वलपूर्वक आग्रह किया कि मैं इस विषय पर अपने विचार शीघ्राति-शीघ्र विस्तृत रूप से लिखकर पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर दूं। इससे जनता को वहुत लाभ होगा और साथ ही गौ रक्षा का प्रचार भी होगा। किन्तु एक तो मैं लिखने में सदा से प्रमादी हूं, दूसरे वहुधन्धी भी हूं। अत: कार्य इतने वर्षों से खटाई में ही पड़ा रहा।

अनेक वार ब्रह्मचारी विरजानन्द जी दैवकरणि ने हमारे सुधारक के गो विशेषाङ्क, और गो विशेषाङ्क का परिशिष्टाङ्क जिनमें मेरे लिखे इसी विषय के अनेक लेख प्रकाशित हुये थे वे लाकर दिये। मेरे अनेक सुयोग्य, विद्वान्, मित्रों और स्नातकों के भी इसी विषय के वहुत से लेख उनमें छपे हुए थे, जिनको देखकर यह प्रलोभन भी अनेक वार मेरे आगे आया कि इस विषय की वहुत सी सामग्री तो इकट्ठी हो ही चुकी है थोड़े से ही प्रयास से "गो दुग्ध अमृत है" इस नाम का एक अच्छा पुस्तक पूरा लिखा जा सकेगा और लिखने पर प्रकाशित तो हो ही जायेगा, इससे मेरी यह धारणा वन गई कि जो गो रक्षा प्रचार का यज्ञ हमने सम्वत् २०१० विक्रमी के पौष माघ मास में गौ विशेषाङ्क के रूप में प्रारम्भ किया था और गौ विशेषाङ्क का परिशिष्टाङ्क सम्वत् २०१० विक्रमी फाल्गुन चैत में प्रकाशित करके उस यज्ञ में दूसरी आहुति डाली थी हमारा वह यज्ञ लम्वे समय तक अधूरा ही रहा है। इस यज्ञ के अग्नि को हमने सर्वथा वुझने तो न दिया था, कभी गो रक्षा सम्मेलन, कभी गो रक्षा आन्दोलन में और कभी जेल यात्रा, कभी आर्य समाज के उत्सवों पर "गौ रक्षा की महत्ता" पर व्याख्यान

ये सब उस यज्ञ के अग्नि को थोड़ा बहुत चेतन रखते रहे। वह यज्ञाग्नि शान्त नहीं हो पाया था। आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा ने गोशाला स्थापना का प्रथम शताब्दी महोत्सव हरयाणा के प्रसिद्ध नगर रेवाड़ी में बहुत धूम-धाम से किया। इसने मुझे फिर झिंझोड़ा, फिर मानसिक चेतना आई।

कुछ ही समय पश्चात् भारत के प्रसिद्ध सन्त श्री विनोवा भावे ने आमरण अनशन की घोषणा भारत की पवित्र भूमि से गोहत्या सर्वथा बन्द करवाने के लिए कर दी किन्तु सरकार ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और विवश होकर भारत के इस सन्त ने गो रक्षार्थ आमरण अनशन कर ही दिया। इससे प्रजा और सरकार दोनों में हलचल मच गई, तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने घोषणा कर दी कि शीघ्र ही लोकसभा में गो रक्षार्थ और गो हत्या को सर्वथा बन्द करने के लिए राज नियम बनाने के लिए बिल पेश कर देंगे। यह आश्वासन देने पर सन्त विनोवा जा ने चार दिन के पश्चात् अपने आमरण अनशन का परित्याग कर दिया।

इन दिनों भी गो रक्षार्थ अनेक सम्मेलन हुए। मैं भी जन-जागरण के लिए गो रक्षा विषय पर बहुत स्थानों पर बोलता रहा। अनेक व्याख्यान इसी विषय पर दिये, फिर अनेक प्रेमियों ने उसी पुराने आग्रह को दोहराया कि मैं अपने इस लेख और व्याख्यान "गो दुग्ध अमृत है" को विस्तार से लिखकर पुस्तक का रूप दे दूं। श्री ब्रह्मचारी विरजानन्द जी दैवकरणि ने पुनः याद दिलाया और सुधारक के गो विशेषाङ्क मेरे हाथ में लाकर दे दिये। मैं भी यह निश्चय करके लग गया कि अभी से लेख को पूरा करके और पुस्तक का रूप देकर इस यज्ञ की पूर्णाहुति करें। मेरी प्रिय पुत्री ब्रह्मचारिणी कृष्णा आर्या (मातनहेल) ने मेरा पूर्ववत् साथ दिया और प्रैस कापी साथ-साथ लिखकर तैयार करनी प्रारम्भ कर दी। मैं भी यह विचार कर जुट गया कि ईश्वर की कृपा और साथियों के सहयोग से इस साहित्य-सृजन रूपी यज्ञ की पूर्णाहुति अवश्य ही हो जायेगी। और इसी का परिणाम है कि "गौ दुग्ध अमृत है" यह पुस्तक शीघ्र ही पाठकों के हाथ में देने में ईशकृपा से हम समर्थ हुए हैं।

कन्या गुरुकुल
नरेला, दिल्ली

—ओमानन्द सरस्वती

पुस्तक के नाम के विषय में दो शब्द

गो दुग्ध अमृत है क्योंकि जव वालक माता के गर्भ से वाहर आता है, जिसे वालक का जन्म कहते हैं, उस समय वालक वा शिशु के मुख में दाँत नहीं होते उस समय वह किसी भी फल फूल कन्दमूल अन्नादि के खाने में सर्वथा अशक्त होता है। उस समय उसके प्राणों की रक्षार्थ जननी माता के स्तनों (दूधियों) में अमृत रूपी दूध की धारा वा स्रोत प्रभु चालू कर देता है जिससे जन्म से लेकर २-३ वर्ष की आयु तक यह दूध ही जीवन का विशेष आधार वा सहारा वनता है। वड़ा होने पर और मुख में दाँत उत्पन्न होने से अन्न, फल, शाक, भाजी आदि भी वालक खाने लगता है। किन्तु संसार में दुग्ध के समान अन्य कोई भोज्य पदार्थ नहीं है। जन्म से मृत्यु पर्यन्त किसी भी दशा में दुग्ध वर्जित नहीं है सदैव सर्वथा सेवनीय है। शरीर के विकास वा वृद्धि के लिये जितने उपादान आवश्यक हैं वे सव दूध में विद्यमान हैं। इसीलिए दूध को पूर्णाहार माना गया है।

आदि सृष्टि से लेकर आज तक चतुर स्याने मनुष्य ऐसे पदार्थ की खोज में लगे हुए हैं जिसे अमृत कहते हैं। देवतावों और असुरों ने समुद्र का मन्थन करके अमृत कलश निकाला था यह कथा पुराणों और महाभारत में आती है। इसी अमृत की खोज में सिकन्दर महान् का गुरु द्वीप द्वीपान्तरों में मारा मारा फिरा। हमारे वैदिक साहित्य में भी इस अमृत के वड़े गीत गाये हैं। "देवाऽमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।" देवता अमृत का पान करके तृतीय धाम प्रभु की गोद में वैठ कर मोक्ष का आनन्द अधिकार पूर्वक अर्थात् स्वतन्त्रता से भोगते हैं। "मृत्योर्माऽमृत गमय" प्रभु मुझे मृत्यु से छुड़ाकर अमृत का पान करावो। "विद्ययाऽमृतमश्नुते" विद्या से अमृत को प्राप्त करते हैं। इन सवसे यही सिद्ध होता है कि मृत्यु को जीतना और अमृत मोक्ष को प्राप्त करना मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है। उस अमृत की प्राप्ति तो प्रभु की कृपा से होती है। प्रभु की वाणी वेद में इसकी इस प्रकार पुष्टि की है। "तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय" अर्थात् उसी ईश्वर को जानकर वा प्राप्त करके जीवात्मा मृत्यु को जीत सकता है। उसका प्राप्ति का दूसरा मार्ग नहीं है। यह अमृत वा अमरपद तो जन्मजन्मान्तर की तपस्या वा ब्रह्मचर्य साधना तथा ईश्वरोपासनादि अनेक साधनों से किसी विरले महात्मा को मिलता है। किन्तु

इस संसार में भी अमृत नाम का पदार्थ है जो थोड़े ही परिश्रम से प्रत्येक मनुष्य प्राप्त कर सकता है। वह अमृत गो दुग्ध है, महाभारत में इसकी पुष्टि की है।

अमृतं वै गवां क्षीरमित्याह त्रिदशाधिपः ।
तस्माद् ददाति यो धेनुममृत स प्रयच्छति ॥ म०भा०अनु०६६/४६

अर्थात् गौवों का दूध ही निश्चय से अमृत है यह देवराज इन्द्र ने कहा है। अतः जो दुधारु गाय (धेनु) दान देता है वह अमृत का ही दान करता है। आयुर्वेद शास्त्रों में पीयूष और अमृत नाम गो-दुग्ध के ही लिखे हैं। अथर्ववेद काण्ड ९ सूक्त ४ में वृषभ सांड की प्रशंसा करते हुए आया है—"प्रतिधुक् पीयूषः" प्रतिदिन अमृतरूपी गो दुग्ध का दोहन करता है। इन शास्त्रीय प्रमाणों से सिद्ध होता है कि "अमृतस्य नाभिः" गोमाता की नाभि में बनकर उसके स्तनों से अमृतरूपी दूध स्रवित होता है। अतः संसार में कोई अमृत है तो वह निश्चय से गो दुग्ध ही है। क्योंकि—

यथा सर्वौषधीसारं क्षीरोदे मथितं पुरा।
सम्भूतममृतं दिव्यममरा येन देवताः ॥
तथा सर्वौषधीसारं गवादीनां कुक्षिषु ।
क्षीरादुत्पद्यते तस्मात् कारणादमृतोपमम् ॥

जिस प्रकार पौराणिक भाई यह मानते हैं कि क्षीर सागर को मथ कर सब औषधियों के सार अमृत की प्राप्ति की गई और उस अमृत का पान देवराज इन्द्र तथा सब देवतावों ने किया। यह अलंकार ही है। गोमाता को छोड़कर किसी अन्य क्षीर सागर की कल्पना करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं दिखाई देती। यथार्थ में गोमाता ही क्षीर सागर है। जब वह सब औषधियों का भक्षण करती है उनका साररूप जो रस बनता है, उससे ही क्षीररूपी अमृत की उत्पत्ति होती है। शास्त्रों में इसी सार दूध को अमृत वा पीयूष कहा गया है।

आगे के पृष्ठों को पढ़कर सब पाठक यह अनुभव करेंगे कि यथार्थ में "गाय का दूध ही अमृत है।" चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तकों के प्रकाशनार्थ हमें डा० सुधीर कुमार जी आनन्द से तथा उनके परिवार से जो धन की सहायता मिलती रहती है उसके लिए मैं इन सब का आभारी हूँ और बार बार धन्यवाद करता हूँ। भगवान् कृपा करें कि सदैव उनका धन धर्म में लगता रहे।

ओमानन्द सरस्वती

गो दुग्ध अमृत है

आयुर्वेद शास्त्रों में सभी प्रकार के दूधों के गुण और दोषों पर प्रकाश डाला है। दुग्ध के अनेक नाम हैं, वे नीचे लिखता हूं। धन्वन्तरीय निघण्टु में जो नाम दिये हैं वे इस प्रकार हैं—

दुग्ध के नाम

दुग्धं क्षीरं पयः स्वादु रसायनसमाश्रयम्।
सौम्यं प्रस्रवणं स्तन्यं वारि सात्म्यं च जीवितम् ॥१६१॥

अर्थात् दुग्ध, क्षीर, पय, स्वादु, रसायन, समाश्रय, सौम्य, प्रस्रवण, स्तन्य, वारि, सात्म्य, जीवित ये ११ नाम दूध के हैं।

राजनिघण्टु में दुग्ध के नाम

क्षीरं पीयूषमूधस्यदुग्धं स्तन्यं पयोऽमृतम्।

क्षीर, पीयूष, ऊधस्य, दुग्ध, स्तन्य, पयः और अमृत ये सात नाम राजनिघण्टु में दूध के दिए हैं। इस प्रकार दोनों निघण्टुओं को मिलाकर दूध के १४ नाम होते हैं। पीयूष, ऊधस्य और अमृत तीन नाम दूध के अधिक वा भिन्न राज निघण्टु में मिलते हैं।

भावप्रकाश निघण्टु में

दुग्धं क्षीरं पयः स्तन्यं बालजीवनमित्यपि ॥१॥

अर्थात्—दुग्ध, क्षीर, पयः स्तन्यं और बालजीवन ये दूध के पाँच नाम दिये हैं। इसके अतिरिक्त अन्य निघण्टुओं में दूध के दोहज, अवदोह और दोहापनयादि नाम भी मिलते हैं।

अन्य भाषाओं में दूध के नाम

हिन्दी—दूध, गुजराती—दूध, बंगला—दूध, मराठी—दूध, पंजाबी—दूध,

हरयाणवी—दूध, कन्नड़—हाल, तैलुगु—पाल, फारसी—शीवे, अरबी—जुवन, इंगलिश मिल्क Milk लैटिन Lactus—अरबी में दूध को लवनुख भी कहते हैं।

हमारे शास्त्रकारों ने दुग्ध के नामों में ही एक विचित्र रहस्य भर दिया है। अर्थात् दूध के यथा नाम तथा गुण हैं अथवा यह कहना चाहिए, दूध के नाम ही इसके गुणों का गान करते हैं। जैसे—बछड़े, बछड़ी और अपने स्वामी के प्रेम के कारण गौ माता का दूध ऊध (ओंढे) में भर जाता है। अधिक दुधारु गायों का दूध ऊध में भरकर दूध देने के समय प्रेम के कारण स्तनों द्वारा टपकने लगता है। इसलिये ऊध दूध के रहने के कारण इसका नाम ऊधस्य रखा है। गौ आदि पशुओं को दोहकर दुग्ध निकाला जाता है, इसलिये इसके नाम दुग्ध, दोहज, अवदोह आदि हैं। यह अत्यन्त मधुर और रुचिकर है। आबाल वृद्ध वनिता यह सबको बड़ा स्वाद लगता है। इसलिए दूध का नाम स्वादु यथार्थ है। संसार में सभी पदार्थों को स्वादु बनाना दूध और उससे बने पदार्थों घी, मक्खन, दही, मलाई और तक्र का ही मुख्य कार्य है। हरयाणा में तो प्रसिद्ध है "घी, दूध बनाये भोजन को स्वाद और बड़ी बहू का नाम" सारे संसार में स्वादु भोजन मिठाई आदि घी दूध से ही बनाये जाते हैं दूध पीया जाता है तथा शरीर को बढ़ाता है अतः इसे पयः कहते है। क्षरित होकर प्राप्त होता है। इसलिए इसका नाम क्षीर और प्रस्रवण है।

सर्वप्रिय सात्विक होने से यह सौम्यता शान्तिप्रदान करता है। इसलिए इस का नाम सौम्य अथवा सोम है। सोम दूध का नाम है। सुरा व शराब का नाम नहीं है। यूरोप के धूर्तों ने शराब जैसी गन्दी वस्तु का नाम सोम सिद्ध करने का निरर्थक प्रयास किया है। यह उनकी व्यर्थ की खींचातानी है। स्तनों द्वारा प्राप्त होता है इसलिए दूध का नाम स्तन्य है। जिन माताओं के स्तनों में दूध नहीं होता उनके स्तनों में गो-दुग्ध के सेवन से दूध बढ़ता है अतः इसे स्तन्य कहना यथोचित है। दूध बच्चे से लेकर बूढ़े तक सबको जीवन देने वाला है इसलिए इसका जीवन नाम यथार्थ में है। जिन बालकों की माता दुर्भाग्य वश मर जाती हैं उनके शिशुओं बालकों को दुग्ध पिलाकर ही पाला जाता है। जननी माता के दूध को छोड़कर यदि कोई दूध बालकों को पुष्ट करने वाला वा जीवन देने वाला है तो वह गो-दुग्ध ही है। इसलिये इसका नाम बाल जीवन भी पड़ गया है। गौ दुग्ध के

सेवन से मानव की आयु बढ़ती है वह मृत्यु को धकेल कर अमृत की ओर चलता है। इसके सेवन से मनुष्य दीर्घजीवा होता है। इसलिये इसे रसायन, अमृत और पीयूष का नाम दिया गया है। जैसे पौराणिक गाथा है--

यथा सर्वौषधीसारं क्षीरोदे मथितं पुरा।
सम्भूतममृतं दिव्यममरा येन देवताः ॥
तथा सर्वौषधीसारं गवादीनां तु कुक्षिषु।
क्षीरमुत्पद्यते तस्माद् कारणादमृतोपमम् ॥

क्षीर सागर को मथ कर सब औषधियों के सार अमृत की प्राप्ति की थी और उस अमृत का पान देवराज इन्द्र तथा सब देवताओं ने किया। यह तो एक अलंकार ही समझना चाहिये। गोमाता को छोड़कर और किसी क्षीर-सागर की कल्पना करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं दिखायी देती। यथार्थ में गोमाता ही क्षीर सागर है। यह जब सब औषधियों का भक्षण करती है उनका सार रूप जो रस बनता है उसी से गौ माता के कोख वा उदर में क्षीर रूपी अमृत की उत्पत्ति होती है। सब औषधियों का सार होने क्षीर वा दूध को अमृत पीयूष तथा रसायन कहा गया है। इस के सेवन से वा पान करने से देवता विद्वानों की आयु बढ़ती है। जहाँ विद्वान् देवता अमृत रूपी दूध का सेवन करते हैं, वहाँ ब्रह्मचर्य का भी पालन करते हैं। कहते हैं "ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत" वे ब्रह्मचर्य रूपी तप से मृत्यु को दूर भगा देते हैं। मृत्यु को जीत लेते हैं अर्थात् वे दीर्घ जावी हो जाते हैं। उनकी आयु ३०० या ४०० वर्ष तक की हो जाती है।

इस प्रकार गो दुग्ध सब प्राणियों के जीवन को सुखी करने वाला शरीरों को स्वस्थ रोग रहित करने वाला रसायन है अमृत है, पीयूष है। गौ-दुग्ध तो अमृत निश्चय से है इस में सन्देह करने का तनिक मात्र भी स्थान नहीं है। दूध सभी प्राणियों के लिए बहुत गुणकारी है। भावप्रकाशनिघण्टु में दूध के सामान्य रूप से गुण इस प्रकार लिखे हैं—

दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं सरम् ॥१॥
सद्यः शुक्रकरं शीतं सात्म्यं सर्वशरीरिणाम्।
जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजिकरं परम्।

वयः स्थापनमायुष्यं सन्धिकारि रसायनम् ।।२।।
विरेकवान्तिबस्तीनां तुल्यमोजो विवर्द्धनम् ।।३।।

अर्थात् दूध मधुर मीठा वा स्वादु होता है तथा स्निग्ध चिकना होता है सर्व प्रकार की रूक्षता खुश्की को दूर करता है । वात तथा पित्त के विकारों का नाश करने वाला है । रेचक दस्तावर कब्ज को दूर करने वाला है । वीर्य को शीघ्र उत्पन्न करने वाला है । क्योंकि दूध पहले धातु रस का एक रूप होता है । वह पचकर शीघ्र दूसरी धातु रक्त बन जाता है । एक प्रकार से इस पर हमारी जठराग्नि को पाँच दिन और भोजन की अपेक्षा वीर्य बनाने के लिये न्यून से न्यून कार्य करना होता है इसलिये सद्यः(शीघ्र) दूध ही शुक्र वीर्य का निर्माण करता है। दूध की अपेक्षा अन्य भोजनों से वीर्य देर से बनता है दूध, शीतल (ठण्डा) हो तो शरीर में शांति ठंडक उत्पन्न करता है । दूध सभी प्राणियों को अनुकूल अर्थात् शक्ति देने वाला है तथा जीवन देता है । पुष्टि कारक और बल को देने वाला है । बुद्धि को उत्तम करने वाला अत्यन्त वाजीकरण अर्थात् घोड़े के समान शक्ति शाली बनाने वाला, पुंस्त्व प्रदान करता है । आयु की स्थापना करने वाला अर्थात् आयु वर्द्धकहै । दीर्घ आयु प्रदान करने वाला आयुस्य पदार्थ है । सन्धान कारक टूटी हुंई हड्डियों को जोड़ने वाला, सब शरीर के जोड़ों को सुदृढ़ करने वाला है । उत्तम रसायन है, विरेचन वमन क्रिया तथा वस्ति क्रिया के अनुकूल है सब धातुओं के सार अर्थात् सर्वोत्तम धातु ओज का वर्द्धक है । दूध में ओज के समान ही गुण होते हैं जिन पर आगे प्रकाश डालेंगे ।

दूध रोग नाशक है

जीर्ण ज्वरे मनोरोगे शोष मूर्च्छाभ्रमेषु च ।
ग्रहण्यां पाण्डुरोगे च दाहे तृषि हृदामये ।।४।।
शूलोदावर्त्त गुल्मेषु वस्तिरोगे गुदाङ्कुरे ।
रक्तपित्तेऽतिसारे च योनिरोगे श्रमे क्लमे ।।५।।
गर्भस्रावे च सततं हितं मुनिवरैः स्मृतम् ।
बालवृद्धक्षतक्षीणाः क्षुद् व्यवायकृशाश्च ये ।
तेभ्यः सदातिशयितं हितमेतदुदाहृतम् ।। ६।।

अर्थात्—दूध जीर्ण ज्वर पुराने बुखार, मानसिक रोग (पागलपनादि),

उन्माद, शोथ (सूजन), मूर्छा, भ्रम, संग्रहणी, पाण्डुरोग, दाह, (प्यास) तृषणा, हृदय रोग, शूल उदावर्त्त (गैस बनना), गुल्म (गोला), वस्तिरोग, बवासीररक्त पित्तातिसार, योनिरोग, स्त्रियों के गर्भाशय सम्बन्धी रोग परिश्रम ग्लानि और गर्भस्राव इनमें हितकारी है। ऐसा ऋषि मुनियों का कथन है। जो बालक वृद्ध क्षत वाला क्षीण हुआ, भूख से दुर्बल अथवा मैथुन से दुर्बल है वा किसी भी कारण से दुर्बल है। दूध उसके लिए अत्यन्त हितकारी है। ये गुण दूध के सामान्य रूप से बताये हैं। विशेष रूप और विस्तार से इस विषय पर इस पुस्तक में आगे प्रकाश डाला जायेगा। गौ माता के दूध के गुणों की चर्चा वा गुण गान करने से पूर्व ऋषियों के मत से अन्य पशुओं के दूध के विषय में लिखना उचित समझता हूँ।

भैंस के दूध के गुण

माहिषं मधुरं गव्यात्स्निग्धं शुक्रकरं गुरु।
निद्राकरमभिष्यन्दि क्षुधाधिक्यहरं हिमम् ॥१५॥

भैंस का दूध गाय के दूध से अधिक मीठा, स्निग्ध, चिकना, अधिक घृतवाला वीर्य को बढ़ाने वाला, भारी, निद्रा लाने वाला, कफकारी, अधिक क्षुधा को दूर करता है, (भारी) और शीतल होता है। यह भावप्रकाश में लिखा है।

धन्वन्तरीय निघण्टु में भैंस के दूध के गुण इस प्रकार हैं—

महाभिष्यन्दि मधुरं माहिषं वह्निनाशनम्।
निद्राकरं शीतकरं गव्यात् स्निग्धतरं गुरु ॥१७०॥

भैंस का दूध महाभिष्यन्दि होता है। इसका अर्थ अत्यन्त कफकारी और आँखों की पीड़ा या दुःखने के रोग को अत्यन्त बढ़ाने वाला है। अर्थात् आँखों के लिये अत्यन्त हानिकारक है। मधुर (मीठा) जठराग्नि का नाश करने वाला और निद्रा लाने वाला तमोगुणी, ठंडक करने वाला अर्थात् कफवर्धक है गाय के दूध से अधिक चिकना और भारी होता है अर्थात् देर से पचता है। राजनिघण्टु में भैंस के दूध के गुण इस प्रकार लिखे हैं।

गौल्यं तु महिषीक्षीरं विपाके शीतलं गुरु।
बलपुष्टिप्रदं वृष्यं पित्तदाहस्रनाशनम् ॥२१९॥

भैंस का दूध विपाक में ठण्डा और गुरु भारी होता है। बल और पुष्टि को देने वाला है अर्थात् शरीर को पुष्ट करता है और बलिष्ठ बनाता है। पित्त (गर्मी) दाह (जलन) और रक्त सम्बन्धी रोगों का नाश करने वाला है किन्तु वृष्य है अर्थात् कामवासना या कामशक्ति को बढ़ाने वाला है। अर्थात् वृद्ध युवक और स्त्रियों के अन्दर कामवासना या कामशक्ति को बढ़ाता है। भैंस के दूध में ये दो भंयकर दोष हैं। वह पीने वाले को कामुक बनाता है और नेत्र सम्बन्धी रोगों को उत्पन्न करता है। तमोगुणी होने से बुद्धिनाशक है। भारी होने से निर्बल बालक, वृद्ध और रोगियों के लिये हानिकारक है। महर्षि दयानन्द ने अपना मत भैंस के दूध के विषय में इस प्रकार दिया है—

"गाय दूध में अधिक उपकारक होती है, और जैसे बैल उपकारक हैं वैसे भैंस भी है। परन्तु गाय के दूध घी से जितने बुद्धि वृद्धि से लाभ होते हैं उतने भैंस के दूध से नहीं इससे मुख्योपकारक आर्यों ने गाय को गिना है। और जो कोई अन्य विद्वान् होगा वह भी इसी प्रकार समझेगा।

(महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश दशमसमुल्लास)

यद्यपि गाय के दूध से भैंस का दूध कुछ अधिक और बैलों से भैंसा कुछ न्यून लाभ पहुँचाता है तथापि जितना गाय के दूध और बैलों के उपयोग से मनुष्यों को सुखों का लाभ हाता है। उतना भैंसियों के दूध और भैंसों से नहीं। क्योंकि जितने आरोग्यकारक और बुद्धिवर्धक आदि गुण गाय के दूध और बैलों में होते हैं उतने भैंस के दूध और भैंसे आदि में नहीं हो सकते। इसलिये आर्यों ने गाय सर्वोत्तम मानी है।

—महर्षि दयानन्दकृत गोकरुणानिधि

बकरी का दूध

अजापय:—धन्वन्तरीय निघण्टु में बकरी के दूध के गुण इस प्रकार लिखे हैं—

छागं कषायं मधुरं शीतं ग्राहितरं लघु।
रक्तपित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम् ॥१६७॥

बकरी का दूध कसैला, मधुर, शीतल, ग्राही, लघु (हल्का) और रक्तपित्त, अतिसार, क्षय (तपेदिक), खांसी तथा ज्वर का नाश करता है।

छागं कषायं कधुर शीतं ग्राहि तथा लघु ।
रक्तपित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम् ॥१६॥

भावप्रकाश का यह श्लोक धन्वन्तरीय निघण्टु से मिलता जुलता है और अर्थ भी एक समान है ।

अजानां लघुकायत्वान्नानाद्रव्यनिषेवणात् ।
अत्यम्बुपानाद् व्यायामात्सर्वव्याधिहरं परम् ॥१६८॥

धन्वन्तरीय निघण्टु

भावप्रकाश का श्लोक निम्नप्रकार का है :—

अजानामल्पकायत्वात्कट्वतिवर्तानिषेवणात् ।
स्तोकाम्बुपानाद्व्यायामात्सर्वरोगापहं पयः ॥१७॥

दोनों श्लोक मिलते जुलते ही हैं वहुत थोड़ा ही इनमें अन्तर है अर्थ दोनों के एक समान से हैं ।

अर्थ—वकरी छोटे शरीर वाली होती है । चरपरे तथा कड़वे पदार्थों को खाती है । अथवा नाना प्रकार के पदार्थों जड़ी वूटियों और वृक्षों के पत्तों को खाती है । यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि वकरी ने केवल ढाक छोड़ा है और ऊंट ने केवल आक खाना छोड़ा है । शेष यें दोनों सव घास फूस जड़ी वूटियां औषध वृक्षों को खाती हैं कड़वे चरपरे सभी प्रकार की और सभी रसों वाली औषधियों का सेवन उपरिलिखित दोनों प्राणीकरते हैं । वकरी वहुत अधिक जल-पान करती हैं अथवा वहुत थोड़ा जल पीती हैं । घूमने फिरने का वहुत अधिक व्यायाम वा परिश्रम करती हैं । इसलिये वकरी का दूध सम्पूर्ण रोगों और व्याधियों को हरने वाला होता है । इसे कुछ विद्वान् त्रिदोषनाशक भी मानते हैं । सभी गुण होते हुये भी वकरी का दिल वा हृदय निर्वल होता है इसलिये भीरु कायर को वुजदिल कहते हैं । वुज फारसी में वकरी वा भेड़ कोकहते हैं । अतः निर्वल हृदय वाले व्यक्ति को बुजदिल कहते हैं ।

भेड़ों का दूध

औरभ्रं मधुरं स्निग्धमुष्णं तिक्त कफापहम् ।
गुरु शुद्धानिले पथ्यं शोफे चानिलशोणिते ॥१६९॥

भैड़ का दूध मधुर मीठा चिकना गर्म तिक्त (चरपरा) कफ के रोगों को दूर करने वाला किन्तु भारी होता है। वायु के कारण हुये शोथ सूजन रक्त विकारों को दूर करता है। अर्थात् वात रोगों को दूर करता है वातरोगों में पथ्य है। धन्वन्तरीय निघण्टु का यह मत है।

राजनिघण्टु में—

आविकं तु पयः स्निग्धं कफपित्तहरं परम्।
स्थौल्यं मेहहरं पथ्यं लोमाशं गुरु वृद्धिदम् ॥२१८॥

भेड़ का दूध चिकना, कफ और पित्त के रोगों को सब से अधिक दूर करता है। मोटेपन, प्रमेह, मधुमेह, को दूर करता है। लोमों वाला, भारी तथा वृद्धि का कारण है। भावप्रकाश निघण्टु में भेड़ के दूध के गुण दोष इस प्रकार लिखे हैं—

आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरिप्रणुत्।
अहृद्यं तर्पणं वृष्यं शुक्रपित्तकफप्रदम् ॥
गुरुकासानिलोद्भूते केवले चानिले वरम्॥१६॥

भेड़ का दूध खारी, स्वादिष्ट, स्निग्ध, गर्म, पत्थरी को नष्ट करने वाला हृदय को अप्रिय और हानिकारक है। तृप्तिदायक वृष्य कामवासना बढ़ाने वाला कफ पित्त तथा वीर्य को उत्पन्न करने वाला वात से उत्पन्न हुई खांसी में तथा सभी वात रोगों में हितकारी है। रक्त पित्त तथा हृदय रोग में यह हानि कारक है। चोटों की पीड़ा को दूर करने वाला है।

घोड़ी का दूध

अश्वाक्षीरं तु वृष्याम्लं लवणं दीपनं लघु।
देहस्थैर्यकरं बल्यं गौरवं कान्तिकृत् परम् ॥ १७२ ॥
श्वासवातहरं साम्लं लवणं रुचिदीप्तिकृत् ॥

घोड़ी का दूध वृष्य वाजिकरण पुंस्त्व शक्ति को कामुकता को बढ़ाने वाला है। यह खट्टा, नमकीन, जठराग्नि को दीप्त करता है और पचने में हल्का होता है। रुचिकारक और पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला होता है। शरीर में स्थिरता

लाता है। बल देने वाला, गौरव और परम कान्ति तेज सौन्दर्य प्रदान करने वाला है। श्वास वायु के रोगों को नष्ट करता है और रुचिकारक है। भाव-प्रकाश निघण्टु में घोड़ी के दूध के गुण दोष इस प्रकार लिखे हैं :—

रूक्षोष्णं बडवाक्षीरं बल्यं शोषानिलापहम्।
अम्लं पटु लघु स्वादु सर्वमेकशफं तथा।। २०४ ।।

घोड़ी का दूध रूखा, गर्म, बलदायक, शोथ (सूजन) तथा वायु रोगों का नाश करने वाला, खट्टा-खारी, लघु-हल्का और स्वादिष्ट होता है। इसी प्रकार एक खुर वाले सभी पशुओं के दूध के गुण ऐसे ही होते हैं।

गर्दभी का दूध

कासश्वासहरं क्षीरं गार्दभं बालरोगनुत्।
मधुराम्लरसं रूक्षं लवणानुरसं गुरु ।। १७३ ।।

गधी का दूध खांसी श्वास को नष्ट करता है। बालकों के रोगों का नाश करता है। मधुर, मीठा, स्वादु, खट्टा और नमकीन रस वाला है। रूक्ष और भारी होता है। धन्वन्तरीय निघण्टु और राजनिघण्टु में—

गधी के दूध के गुण

बलकृद् गर्दभीक्षीरं वातश्वासहरं परम्।
मधुराम्लरसं रूक्षं दीपनं पथ्यदं स्मृतम् ।। २२२ ।।

गधी का दूध बलदायक और वायु के रोगों तथा श्वास का परम शत्रु है। मधुर खट्टे रस वाला, रूखा, जठराग्नि को दीप्त करने वाला और पथ्य देने वाला अर्थात् रोगनाशक है।

उष्णं चैकशफं बल्यं शाखावातहरं पयः।
मधुराम्लरसं रूक्षं लवणानुरसं लघु ।। १७४ ।।

धन्वन्तरीय निघण्टु में सभी एक खुर वाले पशुओं का दूध, गर्म, बल देने वाला तथा वायु के सभी रोगों को हरने वाला, मीठा और खट्टे रस वाला, रूखा, नमकीन रस वाला और हल्का होता है।

ऊंटनी के दूध के गुण

रूक्षोष्णं क्षीरमुष्ट्रीणां ईषत्सलवणं लघु ।
शस्तं वातकफानीह कृमि शोफोदहरार्शसाम् ॥ १७१ ॥

ऊंटनी का दूध रूक्ष, गर्म, थोड़ा नमकीन (खारा) और हल्का होता है। महर्षि धन्वन्तरि के अनुसार वायु, कफ, अफारा, कृमिरोग, शोथ सूजन, उदर रोग और अर्श ववासीर रोगों को ऊंटनी का दूध दूर करता है।

राजनिघण्टु में

उष्ट्री क्षीरं कुष्ठशोफापहं तत् ।
पित्तार्शोघ्नं तत्कफारोपहारि ॥
आनाहार्ति जन्तुगुल्मोदराख्यं ।
श्वासोल्लासं नाशयत्याशु पीतम् ॥

ऊंटनी का दूध कोढ़, सूजन को दूर करता है अर्श ववासीर को नष्ट करता है। वह कफ प्रकोप और कफ के रोगों को दूर करता है। अफारा, कृमि, गुल्म, गोला और उदर रोगों को दूर करता है। श्वास और पीत पाण्डु रोग (पीलिये) को नष्ट कर देता है। ॥ २२० ॥
भावप्रकाश में इस प्रकार लिखा है।

उष्ट्रीदुग्धं लघु स्वादु लवणं दीपनं तथा ।
कृमिकुष्ठकफानाहशोथोदरहरं सरम् ॥ २१ ॥

ऊंटनी का दूध हल्का, स्वादु, नमकीन तथा जठर अग्नि को दीप्त तेज करता है। कीड़ों, कोढ़, कफरोग, अफारा, सूजन और उदर के रोगों को नष्ट करने वाला है।

हथिनी का दूध

हस्तिन्या मधुरं वृष्यं कषायानुरसं गुरु ।
स्निग्धं शीततरं चापि चक्षुष्यं बलवर्धनम् ॥ १७६ ॥

महर्षि धन्वन्तरि का कथन है कि हथिनी का दूध मीठा, वृष्य, कषैला, भारी, चिकना (घी वाला) शीत को दूर करने वाला, चक्षुओं के लिए हितकारी और बल को बढ़ाने वाला है।

राज निघण्टु में—

हथिनी के दूध के गुण

मधुरं हस्तिनीक्षीरं वृष्यं गुरु कषायकम्।
स्निग्धं स्थैर्यकरं शीतं चक्षुष्यं बलवर्धनम् ॥ २२४ ॥

हथिनी का दूध मीठा, वृष्य, भारी, कषैला, चिकना, स्थैर्य करने वाला, बलदह, ठण्डा, चक्षुओं के लिये हितकारी और सर्व प्रकार की शक्ति वा बल को देने वाला है। भावप्रकाश निघण्टु में हथिनी के दूध के गुण ये हैं:—

बृंहणं हस्तिनीदुग्धं मधुरं तुवरं गुरु।
वृष्यं बल्यं हिम स्निग्धं चक्षुष्यं स्थिरताकरम् ॥ २२ ॥

हथिनी का दूध पुष्टिकारक, मधुर, कषैला, भारी, वृष्य, बल को देने वाला, शीतल, स्निग्ध, नेत्रों के लिये हितकारी और शरीर को स्थिर वा दृढ़ करने वाला है।

मृगी का दूध

मृगीणां जाङ्गलोत्थानामजाक्षीरगुणं पयः।

जंगल में उत्पन्न हुई मृगी हिरणी का दूध बकरी के दूध के समान ही गुण वाला होता है।

मानुषी पयः अर्थात् स्त्री का दूध

गुणाः— स्निग्धं स्थैर्यकरं चापि चक्षुष्यं बलवर्धनम्।
जीवनं बृंहणं सात्म्यं स्नेहनं मानुषी पयः ॥१७५॥
नाशनं रक्तपित्ते च तर्पणं चाक्षिशूलनुत्।

स्त्री का दूध चिकना, शरीर को सुदृढ़ करने वाला, चक्षुओं के लिये हितकारी बलवर्धक, जीवन देने वाला, शरीर को बढ़ाने वाला, शान्ति, सुख देने वाला और स्नेहयुक्त प्रेमप्रद होता है। रक्तपित्त रोग का नाशक, तृप्ति कारक और आँख की पीड़ा को दूर करने वाला है।

राजनिघण्टु में—

मधुरं मानुषी क्षीरं कषायं च हिमं लघु।
चक्षुष्यं दीपनं पथ्यं पाचनं रोचनं च तत् ॥२२३॥

नारी का दूध मीठा, कषैला, ठण्डा और हल्का होता है। नेत्र दृष्टि बढ़ाने वाला, अग्नि दीप्त करने वाला रोगियों के लिये पथ्य हितकर और सेवन योग्य, पाचक और रुचिकारक होता है।

भावप्रकाश निघण्टु में स्त्रीदूध के गुण

नार्य्या लघु पयः शीतं दीपनं वातपित्तजित्।
चक्षुः शलाभिघातघ्नं नस्याश्च्योतनयोर्वरम्॥२३॥

नारी का दूध हल्का, शीतल, अग्निवर्धक और वातपित्त के रोगों तथा नेत्रों के शूल और अभिघात का नाशक है।

इस प्रकार आयुर्वेद के अनेक ग्रन्थों के प्रमाण देकर अनेक पशुओं के दूध के गुण और दोष बताये जिससे समय पड़ने पर पाठक यथोचित लाभ उठा सकें।

अब गोमाता के दूध के गुण शास्त्रों के आधार पर आगे लिखता हूँ। महर्षि धन्वन्तरि अपने निघण्टु में लिखते हैं—

गोदुग्ध

गुणाः— पथ्यं रसायनं बल्यं हृद्यं मेध्यं गवां पयः।
आयुष्यं पुंस्त्वकृद् वातरक्तपित्तविकारनुत्॥१६४॥

यह सब के लिये पथ्य सेवन करने योग्य अर्थात् हितकारी है। रसायन आयु बढ़ाने वाला, बल देने वाला, हृदय को शक्ति देने वाला वा हृदय रोगों को दूर करने वाला है। मेधा बुद्धि को बढ़ाने वाला है। गाय का दूध, आयु को बढ़ाता है पुंस्त्व शक्ति को बढ़ाता है अर्थात् नपुंसक को पुरुष बनाता है। वायु के रोगों और रक्त पित्त के विकारों का नाश करने वाला है।

गोक्षीरं अनभिष्यन्दि स्निग्धं गुरु रसायनम्।
रक्तपित्तहरं शीतं मधुरं रसपाकयोः॥१६६॥
जीवनीयं तथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतम्।

गोमाता का दूध कफकारी नहीं है। कफ के रोगों को दूर करता है। गौ का दूध चक्षु-पीड़ा, आँखों का दुःखना आदि नेत्र रोगों को उत्पन्न नहीं करता। नेत्र रोगों को दूर भगाता है। इसके विपरीत भैंस का दूध आँखों का शत्रु है। चक्षु रोग उत्पन्न करता है। स्निग्ध चिकना होता है। रूक्षता को दूर करता है। कुछ

भारी होता है। बलशक्ति देने वाले दूध घृतादि भोज्य पदार्थ चाहे कितने भी लघु हल्के हों उनमें कुछ भारीपन गुरुता होती ही है। जितना हम उन्हें पचा सकें उतना ही खायें, अन्धाधुन्ध न खायें। अधिक न खायें, अधिक खाने से बल नहीं आता। अधिक पचाने से शक्ति वा बल प्राप्त होता है।

गोदुग्ध अन्य रसायन औषधों के समान स्वयं रसायन है आयु बढ़ाता है, मनुष्य को युवा रखता है बुढ़ापे को दूर भगाता है। रक्तपित्त रोग को दूर करने वाला है। रस विपाक में शीतल, ठण्डा, मधुर और स्वादु होता है। जो व्यक्ति कुछ काल निरन्तर गोदुग्ध का सेवन कर लेता है उसे भैंस बकरी आदि किसी भी पशु का दूध अच्छा नहीं लगता। गाय का दूध जीवन देने वाला है। मृत प्रायः रोगियों को पुनः जीवन प्रदान करता है। वात पित्त के रोगों को दूर करने के लिये इस से बढ़कर कोई औषध नहीं। यह वात पित्त के रोगों का परम औषध है। राजनिघण्टु में गोदुग्ध के गुण—

गव्यं क्षीरं पथ्यमत्यन्तरुच्यं स्वादु स्निग्ध वातपित्तामयघ्नम्।
कान्तिप्रज्ञामेधाङ्गपुष्टिं धत्ते स्पष्टं वीर्यवृद्धिं विधत्ते ॥२१६॥

गाय का दूध सबके लिये पथ्य अर्थात् सदैव सेवन करने के योग्य अर्थात् सब अवस्थाओं में हितकारी है। अत्यन्त रुचि कारक और स्वादु है। स्निग्ध, चिकना रुक्षता को दूर करने वाला है। सेवन करने से कान्ति, तेज, सुन्दरता, प्रज्ञा, बुद्धि, मेधा को बढ़ाने वाला और सब अङ्गों को पुष्ट और बलिष्ठ बनाता है और प्रत्यक्ष स्पष्ट रूप से वीर्य और बल की वृद्धि करता है। गोदुग्ध के सेवन से व्यक्ति तेजस्वी, कान्तिमान्, सुन्दर, स्वस्थ सुदृढ़, सुगठित शरीर वाला बनता है। बुद्धिमान् और मेधावी बनता है और प्रज्ञा को प्राप्त करता है। दूध सद्यः तुरन्त प्रत्यक्ष रूप से वीर्यवान् बनाता है। गो-दुग्ध शीघ्र और बहुंत अधिक वीर्य की वृद्धि करता है। गोदुग्ध से सर्व प्रकार की मानसिक, बौद्धिक, शारीरिक और आत्मिक उन्नति होती है।

भावप्रकाश निघण्टु में गोदुग्ध के गुण इस प्रकार हैं—

गव्यं दुग्धं विशेषेण मधुरं रसपाकयोः।
दोषधातुमलस्रोतः किञ्चित् क्लेदकरं गुरु ॥७॥

शीतलं स्तन्यकृत् स्निग्धं वातपित्तास्रनाशनम् ।
जरासमस्तरोगाणां शांतिकृत् सेविनां सदा ।।

गाय का दूध रस तथा पाक में विशेष कर मधुर, मीठा, शीतल ठण्डा, दूध को बढ़ाने वाला, वात, पित्त और रक्त विकार को भी दूर करने वाला है। दोष धातुमल तथा नाड़ियों को आद्र करने वाला है। सबका स्नेहन करने वाला है। भारी किन्तु सदैव सेवन करने योग्य है। सर्व प्रकार के रोग और बुढ़ापे की निर्बलता को दूर करने वाला है। गाय का दूध सब गुणों का भण्डार है। सर्वतोमुखी उन्नति करने वाला है।

चरक शास्त्र में—

गोदुग्ध के गुण

स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छिलम् ।
गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दश गुणं पयः ।।

चरक सूत्रस्थान अ०२७ श्लोक २१६।।

गाय का दूध—(१) स्वादु (मीठा), (२) शीत (ठण्डा), (३) मृदु (कोमल) (४) स्निग्ध (स्नेहयुक्त), घृतवाला, (५) घना (गाढ़ा), (६) चिकना, (७) चिपचिपा, (८) कुछ भारी, (९) मन्द देर से विगड़ने वाला), (१०) प्रसन्न (निर्मल) इन दस गुणों से युक्त होता है। "क्षीरमोजकरं पुंसाम्" दूध पुरुषों में ओज पराक्रम की वृद्धि करता है।

तदेवं गुणस्वैवोजः सामान्यादभिवर्धयेत् ।
प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम् ।।

चरक अ०२७ श्लोक २१७

इन दस गुणों वाला होने के कारण गोदुग्ध ओज को बढ़ाता है। क्योंकि ओज में ही ये दस गुण होते हैं। गोदुग्ध और ओज के गुणों में समानता पाई जाती है। इसके लिये चिकित्सा स्थान में चरकशास्त्र में इस प्रकार लिखा है।

ओज के दस गुण

गुरु शीतं मृदु श्लक्ष्मणं बहलं मधुरं स्थिरम् ।
प्रसन्नं पिच्छिलं स्निग्धमोजो दश गुणं स्मृतम् । (अ०२४।३१)

गुरु, शीत, मृदु, स्निग्ध, बहल, मधुर स्थिर, (मन्द) प्रसन्न, पिच्छिल और

श्लक्ष्ण यही दस गुण ओज में कहे गये हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि गाय का दूध वल, तेज पराक्रम और ओज को वढ़ाने वाला है। इसीलिये गाय का दूध जीवनीय द्रव्यों में सबसे श्रेष्ठ जीवन वर्धक और रसायन माना गया है।

जरायुजानां भूतानां विशेषेण तु जीवनम्।
क्षीर सात्म्यं हि बालानां क्षीरं जीवनमुच्यते॥

जरायु (जेर) से उत्पन्न होने वाले जितने प्राणी हैं उनका दूध विशेषरूप से जीवन माना गया है और वालकों का तो पालन पोषण ही दूध पर होता है। अथवा उनके जीवन का आधार है। इसलिये दूध वालजीवन का जीवनीय कहलाता है।

औषधाग्राणि भक्षित्वाद्विरेजयति तत्पयः।
एतस्मात् कारणादुक्तं गवां क्षीरं रसायनम्॥

औषधियों का अग्रभाग खाने के कारण गोमाता का दूध विरेचक होता है अर्थात् मलवन्द को दूर करके पेट को शुद्ध पवित्र रखता है। क्योंकि इसमें अनेक औषधियों के रासायनिक पदार्थ मिले हुए होते हैं। इसलिये गौवों का दूध रसायन वा रसायन समाश्रय कहलाता है। गोक्षीर का यह विशेष गुण है।

महर्षि धन्वन्तरि सुश्रुत संहिता में इन गुणों की पुष्टि इस प्रकार करते हैं:—

तत्वनेकौषधिरसप्रसादं प्राणदं गुरु।
मधुरं पिच्छिलं शीतं स्निग्धं श्लक्ष्णं सरं मृदु॥
सर्वप्राणभृतां तस्मात् सात्म्यं क्षीरमिहोच्यते।

सू० स्थान अ० ४५। श्लोक ४८॥

दूध सव द्रव्यों में निर्मल, प्राण अर्थात् जीवन देने वाला भारी मधुर, चिपचिपा, शीतल, स्निग्ध चिकना रेचक और कोमल आदि रस गुणों वाला है। इसलिए सव प्राणियों के लिए सुखदायी और शान्ति प्रदान करने वाला गोमाता का अमृतरूपी दूध है। इसी प्रकार अन्यत्र भी लिखा है।

तथाऽनेकौषधिरसं प्राणिनां प्राणदं गुरु।
मधुरं पिच्छिलं स्निग्धं शीतं सूक्ष्मं सरं मृदु॥

गाय का दूध अनेक औषधियों का रस वा सार है क्योंकि गो बकरी आदि पशु अनेक प्रकार के तृण वा घास औषधियों आदि जड़ी बूटियों को जंगल में चरते समय खाती हैं। इसीलिए उनका दूध मधुर, पिच्छल, चिपचिपा, स्निग्ध, शातल, सूक्ष्म, हल्का, दस्तावर, और मृदु होता है। इस विषय में कश्यप संहिता में लिखा है :—

तृणगुल्मौषधीनां चरं अग्राग्रं पयः एव हि।
खादन्ति मधुरं प्रायः लवणं च विशेषतः॥
तस्माद् गुणवैशिष्याद् गवां क्षीरं प्रशस्यते॥

गो माता सारे दिन अनेक प्रकार की घास, झाड़ियां और जड़ी बूटियों का ऊपर-ऊपर का अग्र भाग चरती और खाती रहती हैं। उनका जो सार, रस, लवण और मधुर होता है ग्रहण करती हैं। इन सब जड़ी बूटियों का सार गुण के ग्रहण करने के कारण गौओं का दूध सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इन रसों से गाय के दूध में निर्मलता वा सात्विकता सब दूधों से अधिक आ जाती है। 'अनेकौषधीरसम् तथा तत्वनेकौषिरस प्रसादम्' काश्यप संहिता में यह श्लोक लिखा है ये तीनों प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि अनेक औषधियों के शुद्ध निर्मल रस से ही दुग्ध का निर्माण होता है।

जिस प्रकार सर्वप्रथम सभी प्राणियों के शरीर में प्रथम धातु रस ही बनता है। रस भी दूध के समान निर्मल तथा श्वेत रंग का होता है। क्यों कि दूध रस है अथवा रस से ही बनता है अतः डाक्टरों का यह मत कि दूध खून से बनता है यह सर्वथा भ्रमयुक्त और मिथ्या है। पाश्चात्य जगत में यह भ्रम सर्वत्र ही न जाने कैसे फैल गया और बिना विचारे ही नितान्त इस मिथ्या सिद्धान्त को कैसे यूरोप के लोगों ने स्वीकार कर लिया जबकि साधारण पशु पालन करने वाले मनुष्य भी भली-भांति जानते हैं कि दूध बढ़ाने के लिए जब भी कोई अन्न चना आदि व हरा चारा जौ, जई, मूंग, उड़द और बरसीम आदि गौ भैंस आदि को खिलाते हैं तो चार-पाँच दिन में ही पशुओं का दूध भली-भाँति बढ़ जाता है।

रस भी लगभग पाँच दिन में बनता है तथा दूध भी इतने ही दिन में बढ़ता है वा बनता है यह अनुभव सिद्ध है और रक्त (खून) जो दूसरा धातु है, वह दस दिन से अधिक दिन में बनता है क्योंकि "रसाद्रक्तं ततो मांसम्" रस से रक्त

और रक्त से मांस बनता है, इत्यादि। इसमें महर्षि धन्वन्तरि का प्रमाण है। कितने लोगों में भारत में भी यह भ्रम फैला हुआ है कि खून से ही दूध बनता है इस मिथ्या बात का प्रचार भारत में भी पाश्चात्य डाक्टरी मत को मानने वाले लेखकों ने ही फैलाया है। क्योंकि कितने ही लोग अंग्रेज़ी शिक्षा के कारण भारत में भी यूरोप के अन्धे भक्त बन गए हैं।

मांसाहारी लोग निरामिष भोजियों को 'अजी! दूध भी तो खून से ही बनता है।" यह युक्ति देकर दबाना अथवा अपने पाप को छिपाना चाहते हैं किन्तु उपरिलिखित युक्ति और प्रमाणों से उनकी मिथ्या बात चल नहीं सकती "**सत्यमेव जयते नानृतम्**" सत्य का ही विजय होता है, अनृत का—असत्य का कभी नहीं।

एक अन्य स्थान पर गो दुग्ध के गुण इस प्रकार लिखते है :—

धेनोः पयः स्यान्मधुरं सुशीतं,
रंसायनं स्निग्धममलं गुरु स्यात्।
भ्रमश्रमहनं विषसत्सरं च,
कफावहं शुक्रकरं हि वर्ण्यम्॥

गाय का दूध मधुर, अत्यन्त ठण्डा, रसायन, स्निग्ध, मल रहित वा शुद्ध भ्रम रोग नाशक, श्रम (थकावट) को दूर करने वाला, विषनाशक, दस्तावर, कफावह, वीर्य उत्पन्न करने वाला, वर्ण (रंग) को निखारने वाला अर्थात् सुन्दर बनाता है राजवल्लभ ने धातुवर्द्धनम् अर्थात् गो दुग्ध धातु वर्धक है। यह लिखकर इसकी विशेषता दिखायी है। जो गुण मनुष्य के पूर्ण भोजन वा सर्वश्रेष्ठ भोजन में होने चाहिये वे गो दुग्ध में सब विद्यमान हैं। हमारे शास्त्रकारों ने सात्विक भोजन करने के लिए बहुत बल दिया है। और सात्विक भोजन के विषय में गीता में इस प्रकार लिखा है।

आयु सत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रम्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः॥

आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य वा स्वास्थ्य, सुख एवं प्रीति को बढ़ाने वाले रसीले, चिकने, स्थिर व दृढ़ जो शीघ्र नहीं बिगड़ते और हृदय के लिए हितकारी हैं। वे भोजन सात्विक होते हैं और सात्विक लोगों को प्रिय होते हैं। ये

सात्विक भोजन के सारे गुण एक साथ गो-दुग्ध में ही मिलते हैं इस विषय में अनेक शास्त्रों के प्रमाण मैं पहिले दे चुका हूं। और गुण तो कुछ अन्य भोज्य पदार्थों में भी मिल जाते हैं। किन्तु रस और पाक में एक साथ मधुर हों तथा सुख आरोग्य आयु, वल, वीर्य, ओज और प्रीति कान्ति को वढ़ाने वाला गो-दुग्ध के अतिरिक्त कोई अन्य पदार्थ ढूंढने से भी नहीं मिलेगा। शीघ्र पचे, वल, बुद्धि और सत्व गुण प्रधान हो ऐसा गो-दुग्ध ही है इसका विशेष कारण यह है :—

मधुरो हि रसः श्रेष्ठो रसानां परिकीर्तितः।
यन्नित्यं वा गवां क्षीरं मधुरं बृंहणं मतम्॥

सव रसों में मधुर रस सर्वश्रेष्ठ माना है और वह मधुर रस सदैव वल वढ़ाने वाला गौओं के दूध में नित्य विद्यमान रहता है। मधुर, रस, आवाल वृद्ध वनिता सभी को प्यारा लगता है भिक्षु से राजा तक सभी की इच्छा मीठा ही रस ग्रहण करने की रहती है। कड़वे रस से विचारशील विद्वान् भी वचने का यत्न करते हैं। आजकल तो दुःखी रोगियों को भी कड़वी औषध जो उनके लिए हित-कारी है अच्छी नहीं लगती। गुड़ आदि गन्ने से वने पदार्थ मीठे होते हैं सवसे अधिक खपत वा मांग इन्हीं की है। एक हंसी की वात लोग कहा करते हैं कि एक वार खुदा के दरवार में गुड़ ने उपस्थित होकर यह शिकायत की कि हुजूर जो भी व्यक्ति मुझे देखता है वह मुझे खाने को दौड़ता है आप मेरी रक्षा करो। खुदा ने गुड़ की वात सुनकर यह कहा—भाई मेरी आँखों से दूर हो जा नहीं तो मैं भी तुझे खाने के लिए विवश हो रहा हूँ मेरे मुख में भी पानी आया हुआ है। इस वार्त्ताका निचोड़ यही है कि मीठा सवको प्रिय है। सवको अच्छा लगता है यह ठीक है कि वह खाते समय गुड़ादि पदार्थ मीठे लगते हैं किन्तु पाक में अर्थात् पेट में जव ये पचते हैं तो तव मीठे नहीं रहते किन्तु गौ का दूध रस और पाक में मधुर इसलिए रहता है कि गाय औषधियों का अग्रभाग खाते हुए औषधियों का रस का ही भक्षण करती हैं। प्रेम की प्यासी तो गो माता होती ही है। भगवान् की पवित्र वाणी वेद में इस सत्य को इस प्रकार प्रकट किया है।

"अन्योऽन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या" "अथर्ववेद"

हे मनुष्यो ! तुम परस्पर इस प्रकार प्रेम करो कि जैसे सद्यः जात (तुरत

के जाये) अपने बछड़े से गाय प्रेम करती है। यह वेद की वाणी १६ आने सत्य है। अर्थात् इसमें सत्य कूट-कूट कर भरा है। यदि कोई गाय जंगल में ब्या जाये बछड़ा आदि दे देवे और हिंस्र पशु सिंह चीता आदि बछड़े को हानि पहुंचाना चाहे, तो यह अत्यन्त शान्त स्वभाव सुशील भोला पशु भी अपने बछड़े की रक्षार्थ अपने प्राणों की बाजी लगाकर इसकी रक्षा करता है। शरीर में प्राण रहते हुए अपने बछड़े का बाल बांका नहीं होने देता। इससे यही सिद्ध होता है कि गो के समान अपने सद्य: जात बछड़े वा बछड़ी के साथ प्रेम करने वाला अन्य प्राणी संसार में नहीं है लोगों में एक बात बहुत ही प्रसिद्ध है कि बानरी (बन्दरी) अपने बच्चे से सबसे अधिक प्रेम करती है। बच्चा यदि मर जाये तो भी छः महीने तक छाती से लगाये रखती है। यह बात तो सत्य है किन्तु एक सच्ची घटना और लिखता हूं।

एक व्यक्ति ने एक बानरी पाल रखी थी वह बानरी बच्चे वाली थी। वह अपने पालने वाले स्वामी के साथ हर समय रहती थी, दिन हो चाहे रात। एक दिन किसी कार्य वश उसका स्वामी बाहर जाने लगा तो बानरी भी बच्चे सहित साथ चल पड़ी। चलते-चलते दोपहर हो गया। ग्रीष्म काल था, भयंकर गर्मी पड़ रही थी। सब कुछ जल रहा था। बानरी के हाथ पैर भी जलने लगे, वह कभी भागती कभी कहीं वृक्ष की छाया मिलने पर उसके नीचे विश्रामार्थ बैठ जाती। इस प्रकार एक बज गया और ऐसा स्थान आ गया जहाँ रेत ही रेत था मरु भूमि थी। वह रेत बहुत गर्म हो गया था। बानरी की जान गर्मी के कारण निकली जा रही थी। उसने अपनी रक्षार्थ अपने बच्चे को भूमि पर पटक दिया और स्वयं गर्मी की जलन से बचने के लिए उसके ऊपर बैठ गई। बच्चा गर्मी से जल रह था और जोर-जोर से कष्ट से चिल्ला रहा था। अपनी मां के नीचे से निकलने का प्रयत्न भी करता था किन्तु बानरी उसे दबाये बैठी रही अपने बच्चे के चिल्लाने पर और जलने के कष्ट की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। यह है, बन्दर और गाय का अन्तर। अपने बच्चे अर्थात् वत्स के ऊपर कष्ट आने पर गायें उसकी रक्षा के लिए अपने प्राणों को खतरे में डाल देती हैं और बानरी अपने को दुःख से बचाने के लिए अपने बच्चे को कष्टों की भट्टी में डाल देती है। इसलिए वेद भगवान् ने गौ का अपने सद्य: जात बछड़े के प्रेम को आदर्श बताया

है। उपर्युक्त बातें इसकी पुष्टि में प्रमाण है। गो माता तो प्रेम की प्रति-मूर्ति है। मेरी एक आंखों देखी दूसरी घटना इसका प्रत्यक्ष और पुष्ट प्रमाण है।

एक दिन गुरुकुल झज्जर के पास खेत में ही एक कुत्ते ने मृगी के छोटे वच्चे का पीछा किया और ज्यों हि वह कुत्ता उसे मारने के लिए दवोचना चाहता था, उस मृगी के वच्चे के मुख से अपने प्राणों की रक्षार्थ करुण क्रन्दन (दुःख भरी आवाज) सुनाई दी। पास में हमारे गुरुकुल की चरती हुई गायों ने इस दुखिया के शब्द सुने तो वे उस मृगी के वच्चे की सहायता वा रक्षार्थ दौड़ पड़ी और पास जाकर कुत्ते को सींगों से मार-मार कर भगा दिया और मृगी के बच्चे को वचा लिया। हिरणी का वच्चा कुत्ते के मुख से छूटते ही भागा और कुत्ता भी उसके पीछे पुनः पड़ने के लिए भागा और गौवें भी मृगी के बच्चे की रक्षार्थ कुत्ते के पीछे-पीछे भागीं। हमने यह दृश्य अपनी आंखों से देखा। लेखक और ब्रह्मचारी हरिशरण गौओं की सहायतार्थ और मृग के वच्चे की रक्षार्थ लाठी लेकर भागे। मृग का वच्चा भागते-भागते थक कर सर्वथा अशक्त हो गया था। वहुत भयभीत हो गया था। वह उस समय अकेला ही था। मृगों की डार भाग गई थी। वह उससे विछुड़ गया था। हमने उसे प्रेम से पुचकारा और पकड़ कर गुरुकुल में अपने साथ रक्षार्थ ले आये थे। कुछ खिलाने पिलाने का भी प्रयास किया उसने वहुत ही स्वल्प मात्रा में कुछ खाया और पिया। वह वहुत ही भयभीत हो चुका था। उसका हृदय निर्बल हो गया था। उसकी आंख पर चोट भी थी और वह अकेला रहने से वहुत व्याकुल और घवराया हुआ था। हमारे सव यत्न व्यर्थ गये और वह एक दो दिन में ही मर गया। इसी प्रकार यदि गोस्वामी गोपाल (हाली) पर किसी प्रकार की आपति आ जाये तो गोमाता अपनी पूर्ण शक्ति लगाकर अपने स्वामी वा पालक की रक्षा करती हैं। इस प्रकार अनेक घटनायें हमाने अनेक वार स्वयं देखी हैं। इससे यही सिद्ध होता है प्रेम करना गोमाता का विशेष गुण है। इसलिए गौ के विषय में कहा है—**"बिभर्ति पयसा सुतमिव निखिलं जगदञ्जसा"** गोमाता सम्पूर्ण संसार का अपने पुत्र के समान अपने दूध से भरण पोषण करती हैं। इसलिए वह जननी और जन्मभूमि से भी वढ़कर है।

गोमाता की प्रशंसा में अमेरिका के टेनेसी प्रान्त के भूतपूर्व गवर्नर श्री

मालकम आर, पेटसन लिखते हैं। "महाकवि होमर ने युद्ध, वरजिल ने आयुध (शस्त्रास्त्र) होरेस ने प्रेम, दांत ने नरक और मिल्टन ने स्वर्ग का गीत गाया। परन्तु मुझ में यदि सब सिद्ध कवियों की सम्मिलित प्रतिभा होती और मेरे हाथ में हजारों तारों का तानपूरा (वीणा) होता तथा सारा संसार श्रोता बनकर सुनता तो मैं अपना हृदय खोलकर गौ के गीत गाता और उसके गुण बखानता तथा उसकी महिमा का गान यावच्चन्द्र दिवाकर अमर कर देता।

यदि मैं मूर्तिकार होता और संगमरमर के नाम के पत्थर में टांकी से अपने विचार मूर्तिमान्कर सकता तो संसार के पत्थर की सब खानें छानकर विमलतम, शुभ्रतम, संगमरमर की पटिया ढूंढ़ लाता और चन्द्र ज्योत्सना से पुलकित, निर-भ्रनोल आकाश से मण्डित किसी मनोहर वन में निर्मल जल के समीप पक्षियों के मधुर गुञ्जारव के बीच बैठकर अपने प्रेम धर्म के पवित्र कर्म में लग जाता। उस शुभ शीतल संगमरमर का सारा खुदरापन अपनी छीनी से छीलकर उसे इतना कोमल बना लेता कि उसमें से मेरे मन की मूर्ति निकल आती। उसके विशाल करुणामय नेत्र होते, वह अपने उभरे स्तनों में भरा हुआ पुष्टि करपेय पान करने की प्रतीक्षा में खड़ी प्रेम से अमृत कें नेत्र वालों के सुख आरोग्य एवं बल का आर्शीवाद देती हुई देख पड़ती। गो विना ताज की महारानी है। उसका राज्य सारी समुद्र वासना पृथ्वी पर है। सेवा उसका विरुद है और जो कुछ वह लेती है उससे सौ गुणा करके देती है। ईश्वर ऐसा न करे —

कि यदि आज संसार की सब गौवें मर जायें तो उनके अभाव में कल ही मानव जाति पर भयानक संकट आ पड़े। रेल की सड़कें, बैंक, कपास की फसल इन सबके विना हम लोग मजे में अपना काम चला सकते हैं, पर गौ के विना मानव जाति रोग, क्षय और अन्त में विनाश को प्राप्त होगी। गौ का वह सम्मान और स्तवन करें जिनके वह योग्य है। मुझे आशा है कि ज्यों-ज्यों हम लोग ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ेंगे क्रूरता और स्वार्थपरता छोड़ेंगे, त्यों-त्यों उन गौओं की हत्या करना और उनका मांस खाना भी त्याग देंगे, जो हमें बल देती, सुख पहुंचाती और हमारे बच्चों के प्राण बचाती हैं।

गौ के महिमा पर एक कथा महाभारत में आती है जो भीष्म पितामह ने महाराजा युधिष्ठिर को सुनाई थी। यह कथा रघुकुल के राजा नहुष और महर्षि

च्यवन की है।

महर्षि च्यवन जल कल्प करने के लिए गंगा और यमुना के जल में समाधि लगाये बैठे थे। एक दिन वहां पर कहीं से निषाद (मछली मारने वाले) आ पहुंचे और उन्होंने नदी में जाल फैलाकर सब मछलियों तथा जल जन्तुओं को प्रसन्नता पूर्वक बाहर निकाल लिया। साथ में महर्षि च्यवन भी समाधि लगाये खिंचे चले आए। उनको जाल में देखकर, सभी निषाद घबराये और हाथ जोड़ कर उनके पैरों में पड़ गए। जाल से खिंचने तथा जल के अभाव से सब मछलियां व्याकुल हो गई। उनको देखकर महर्षि के मन में दया भाव आ गया और लम्बे-लम्बे श्वास लेने लगे। तब निषादों ने कहा—

अज्ञानात्कृतं पापं प्रसादं तत्र नः कुरु।
करवाम प्रियं किं ते तन्नो ब्रूहि महामुने॥

हे महामुने! अज्ञानता वश आपको जाल में खींच कर बड़ा भारी पाप किया है! अतः क्षमा करें। और हमें आज्ञा दीजिए कि आपकी क्या सेवा करें। तब महर्षि च्यवन ने कहा—

प्राणोत्सर्गं विसर्गं वा मत्स्यैर्यास्याम्यहं सह॥

यदि ये मछलियां जीवेंगीं तो मैं भी जीवन धारण करूंगा अन्यथा नहीं। यह सुन सब निषाद राजा नहुष के पास गए और सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

राजा नहुष भी महर्षि के प्राणों को संकट में जानकर तत्काल पुरोहित और मन्त्रीगण के साथ वहां पहुंचे और हाथ जोड़कर कहने लगे—

करवाणि प्रियं किन्ते तन्मे ब्रूहि द्विजोत्तम।
सर्वं कर्त्तास्मि भगवन् यद्यपि स्यात्सुदुष्करम्॥

हे द्विजोत्तममुने! आज्ञा दीजिए मैं आपकी क्या सेवा करूं? भगवन् मैं सब कुछ करने को तैयार हूं। चाहे कितना ही दुष्कर कार्य क्यों न हो। तब महर्षि च्यवन ने कहा कि इन निषादों ने आज बड़ा भारी परिश्रम किया है। अतः इनको मेरा तथा मछलियों का मूल्य चुका दिया जाए।

राजा नहुष ने उसी समय पुरोहित को आज्ञा दी कि निषादों को एक हजार रुपये दे दो। यह सुनकर महर्षि च्यवन ने कहा—

सहस्रं नाहमर्हामि किंवा मन्यसे नृप।
सदृशं दीयतां मूल्यं स्वबुद्ध्या निश्चयं कुरु ।।

हे राजन् । आप क्या समझते हैं । एक सहस्र मुद्रा मेरा उचित मूल्य नहीं है। अतः आप अपनी बुद्धि से निश्चय कर मेरा उचित मूल्य दें। फिर राजा ने एक लाख, एक करोड, फिर आधा राज्य औंर सम्पूर्ण राज्य देने को कहा, किन्तु महर्षि च्यवन प्रसन्न न हुये । उन्होंने कहा—

अर्धराज्यं समग्रं च मूल्यं नार्हामि पार्थिव ।
सदृशं दीयतां मूल्यमृषिभिः सह चिन्त्यताम् ।।

हे पार्थिव ! आप का आधा या सम्पूर्ण राज्य मेरा मूल्य नहीं अतः पा ऋषियों से विचार कर मेरा उचित मूल्य दीजिये। यह सुनकर राजा नहुष अति दुःखित हुआ, उसने ऋषियों से विचार किया। तव एक वनस्थ मुनि ने कहा कि मैं आपको ऋषि का यथोचित मूल्य वता सकता हूं। राजा ने कहा कि महाराज आप महर्षि का उचित मूल्य वताकर मेरा मेरे कुल तथा देश का उद्धार कीजिए। तव मुनि ने वतलाया :—

अनर्घेया महाराज द्विजा वर्णेषु चोत्तमाः।
गावश्च पुरुषव्याघ्र गोमूल्यं परिकल्प्यताम् ।।

हे राजन् ! ब्राह्मण वर्ग सव वर्गों से उत्तम है। अतः उसका कोई मूल्य नहीं आंका जा सकता। ठीक इसी प्रकार गौ भी अनर्घेय है। उसका भी कोई निश्चित मूल्य नहीं लगाया जा सकता। अतः आप ऋषि के मूल्य में एक दो गौ दे दो। राजा नहुष ने ऐसा ही किया। एक गाय निषादों को देकर कहा कि हे महर्षे अव आप उठिये मैंनें यह गाय देकर आपको खरीद लिया। तो महर्षि च्यवन यह कहते हुए उठ गये :-

उत्तिष्ठाम्येष राजेन्द्र सम्यक् क्रीतोऽस्मि तेऽनघ।
गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत ।१।।

अर्थात् हे पृथिवीपते ! अव मैं उठता हूं, आपने मेरा उचित मूल्य देकर खरीद लिया है क्योंकि इस संसार में गायों से उत्तम वा वरावर कोई और धन नहीं है ।

कीर्तणं श्रवणंदानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवा प्रशस्यते वीर सर्वं पापहरं शिवम् ॥२॥
गावो लक्ष्म्याः सदामूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः ॥३॥

हे राजन्! गायों के विषय में कथा करना तथा सुनना, दान देना और दर्शन करना भी श्रेष्ठ सुखदायक एवं लाभदायक है। ये गायें ही धन, लक्ष्मी का मूल स्रोत हैं, इनसे ही सदा भोज्य पदार्थ तथा देवताओं की श्रेष्ठ हवि (घृत दुग्धादि) उत्पन्न होती है।

स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम् ॥४॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च।
अमृतायनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः ॥५॥ (महा. अनु.पर्व)

स्वाहाकार वष्ट्कार का भी यही हेतु है, गायों के घृतादि से हा यज्ञ सम्पन्न होता है, अतः इनको यज्ञ का मुख (मुख्य साधन) समझना चाहिए। ये गायें ही दूध रूपी अमृत को देती हैं और इनके पुत्र भार वाहन करत हैं, ये गायें ही अमृत का मूल स्थान हैं अतः ये समस्त संसार की वन्दनीय हैं।

पाठक वृन्द! इस उक्त घटना से समझ गये होगें कि प्राचीन ऋषियों की दृष्टि में गायं का कितना मान और मूल्य था। इसी प्रकार महर्षि पतञ्जलि ने भी गौ को सर्वश्रेष्ठ धन माना है :—

"भोगवानयं देश इत्युच्यते यस्मिन् गावः सस्यानि च वर्त्तन्ते" महाभाष्य अर्थात् वही देश धनाढ्य है जिसमें गायें और खेती विद्यमान हैं।

प्राचीन समय में आज की भांति मद्य और मांस का सेवन नहीं किया जाता था। "सुरा वै मलमन्नानाम्' मद्य को अन्न का मल समझकर छूते तक न थे और गौ के दूध को 'अमृतं वै गवां क्षीरम्" अमृत समझते थे एवं "पयो भक्षाः दिव यन्ति" मोक्ष मार्ग का साधक समझकर उसका पान करते थे। वेद का यही आदेश है "वीतं पातं पयस उस्रियायाः" अर्थात् गाय के ही दूध को खाओ पीओ गायों का मांस नहीं खाया जाता था। "न चांसां मांसमश्नीयात्" अर्थात् गायों का मांस न खाये।

विक्रयार्थं हि यो हिंस्याद्भक्षयेद्वा निरङ्कुशः ।
घातयानं हि पुरुषं येऽनुमन्येयुरर्थिनः ॥
घातकः खादको वापि तथा यश्चानुमन्यते ।
यावन्ति तस्या रोमाणि तावद्वर्षाणि मज्जतात् ॥

(महा०-अनु०-अ० ७४ श्लोक-३-४)

अर्थात् विक्रय के लिये गो हिंसा करे या स्वयं खावे तथा जो मारने वाले का अनुमोदन करे उन (मारने खाने और अनुमति देने वाले) सभी का जितने गौ के शरीर पर रोम हैं उतने वर्ष तक दुःख सागर में बेड़ा गर्क हो जाता है। वेद में भी गोघ्न को प्राण दण्ड की आज्ञा दी गई है :—

तेषां शीर्षाणि हरसाऽपि वृश्च, यदि नो गां हिंस तंवा सीसेन विध्यामः । इत्यादि ।

यज्ञादि में मांस प्रक्षेप आदि का विधान न था। "घृतेन जुहुयादग्निम्" गोघृत से अग्निहोत्र करने का स्पष्ट विधान था और गौ का दूध, दही आदि ही यज्ञ का परम साधन था "ऋते दधिघृतेनेह न यज्ञः संप्रवर्तते" अर्थात् दूध और दही के विना यज्ञ किया नहीं जा सकता, अत एव गाय को "यज्ञांगं कथिता गावः" यज्ञ का अङ्ग समझते थे।

घृतं प्राशेत्—गौ का घी खावे और:—

पुष्ट्यर्थमेताः सेवेत शान्त्यर्थमपि चैव हि ।
पयोदधिघृतं चासां सर्वपापप्रमोचनम् ॥

शरीर की पुष्टि तथा शान्ति के लिये गौओं की सेवा करें, क्योंकि इनका दूध दही तथा घी सब पापों को नष्ट करता है। वेद में भी लिखा है पुष्ट्यं गोपालम् संसार में दुर्बल रहना भी पाप है। इसको गायें दूर करती हैं अतः ये पाप नाशक हैं। पुष्टि का दूसरा साधन अन्न है वह मा इनसे ही मिलता है—

एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते ।
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च ॥

इनके पुत्र (बैल) धान्यों और बीजों को कृषि द्वारा उत्पन्न करते हैं। गायें

सर्वथा ही उपकारक हैं।

पयसा हविसा दध्ना शकृता चाथचर्मणा ।
अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति शृङ्गैर्बालैश्च भारत ॥
(महा० अनु० अ० ६६ श्लो० ३६)

अर्थात् गायें दूध, घी, दही, गोवर से तथा मरने के पश्चात् चर्म, हड्डी और वालों से भी मनुष्यों का उपकार करती हैं। सार यह है—

गावो लोकान् तर्पयन्ति क्षरन्त्यो गावश्चान्नं संजनयन्ति लोके ।
यस्तं जानन्न गवां हार्दमेति स वै गन्ता निरयं पापचेताः ॥

गायें दुग्ध से मनुष्यों को तृप्त करती हैं। और मनुष्यों के लिये अन्न उत्पन्न करती हैं। जो कोई इस वात को जानता हुआ भी इनकी अन्न, जल और चारे से सेवा करके हार्दिक प्रेम को प्राप्त नहीं करता वह पापी शीघ्र ही दुःख सागर में गोता लगायेगा, इस में कोई सन्देह नहीं है।

सर्वश्रेष्ठ गौ कपिला

धर्मराज युधिष्ठिर के पूछने पर बाल ब्रह्मचारी शन्तनु नन्दन महात्मा भीष्म पितामह ने महाभारत में कपिला गाय के गुण और भेद इस प्रकार बताये हैं—

बलान्विता शीलवयोपपन्नाः ।
सर्वं प्रशंसन्ति सुगन्धवत्यः ।
यथा हि गङ्गा सरितां वरिष्ठा ।
तथार्जुनीनां कपिला वरिष्ठा ॥८॥

हृष्ट-पुष्ट सुलक्षणा, जवान तथा उत्तम गन्धवाली गाय की सभी लोग प्रशंसा करते हैं। जैसे नदियों में गङ्गा श्रेष्ठ है, वैसे ही गौओं में कपिला गौं उत्तम मानी गई है। प्रजापति परमात्मा ने सृष्टि के आदि में जब सब प्राणियों को उत्पन्न किया उस समय प्रजा की आजीविका के लिय सुरभि नाम की गाय को उत्पन्न किया और उससे बहुत सी सौर्भेयी नाम वाली गायें उत्पन्न हुई। इसका प्रमाण इस प्रकार है—

सासृ जत् सौरभेयीस्तु सुरभिर्लोकमातृकाः ।
सुवर्णवर्णाः कपिलाः प्रजानां वृत्तिधेनवः ॥१८॥

उस सुरभि ने 'सौरभेयी" नाम वाली बहुत सी गौओं को उत्पन्न किया जो सम्पूर्ण जगत् के लिये माता के समान थीं। उन सबका रंग सुवर्ण के समान उद्दीप्त हो रहा था। वे कपिला गायें प्रजाजनों के लिये आजीविका रूप दूध देने वाली थीं।

तासाममृतवर्णानां क्षरन्तीनां समन्ततः ।
बभूवामृतजः फेनः स्रवन्तीनामिवोर्मिजः ॥

जैसे नदियों की लहरों से फेन उत्पन्न होता है उसी प्रकार चारों ओर दूध की धारा बहाती हुई अमृत—सुवर्ण के समान वर्णवाली उन गौओं के दूध से फेन उठने लगा। बछड़ा दूध पी रहा था, उसके मुख से फेन निकलकर शिवजी

के मस्तक पर गिरा। उसे शान्त करने के लिये दक्ष प्रजापति ने महादेव जी से कहा—

अमृतेनाव सिक्तस्त्वं नोच्छिष्टं विद्यते गवाम्।
यथा ह्यमृतमादाय सोमो विस्यन्दते पुनः॥
तथा क्षीरं क्षरन्त्येता रोहिण्योऽमृतसम्भवम्॥

प्रभो! आपके ऊपर अमृत का छींटा पड़ा है। गौओं का दूध बछड़ों के पीने से झूठा नहीं होता। जैसे चन्द्रमा अमृत का सग्रंह करके फिर उसे वरसा देता है। उसी प्रकार ये रोहिणी अमृत से उत्पन्न दूध देता हैं।

न दुष्यत्यनिलो नाग्निर्न सुवर्णं न महोदधिः ॥२५॥
नामृतेनामृतं पीतं वत्सपीता न वत्सला।
इमांल्लोकान् भरिष्यन्ति हविषा प्रस्रवेण च ॥२६॥
आसामैश्वर्यमिच्छन्ति सर्वेऽमृतमय शुभम्॥

जैसे वायु, अग्नि, सुवर्ण, समुद्र और देवताओं का पीया हुआ अमृत— ये वस्तुयें उच्चिष्ट नहीं होती, उसी प्रकार बछड़ों के पीने पर उन बछड़ों के प्रति स्नेह रखने वाली गौ भी दूषित या उच्छिष्ट नहीं होती (तात्पर्य यह है कि दूध पीते समय बछड़े के मुंह से गिरा हुआ झाग अशुद्ध नहीं माना जाता) ये गौयें अपने दूध और घी से इस सम्पूर्ण जगत् का पालन करती हैं। सब लोग चाहते हैं कि इन गौओं के पास मङ्गलकारी अमृतमय दुग्ध का सम्पत्ति बनी रहे।

वृषभं च ददौ तस्मै सह गोभिः प्रजापतिः ॥२७॥
प्रसादयामास मनस्तेन तथा रुद्रस्य भारत।

भरतनन्दन ! ऐसा कहकर प्रजापति ने महादेव जी को बहुत सी गायें और एक बैल भेंट किया तथा इसी उपाय के द्वारा उनके मन को प्रसन्न किया।

प्रीतश्चापि महादेवश्चकार वृषभं तदा ॥२८॥
ध्वजं च वाहनं चैव तस्मात् स वृषभध्वजः।

महादेव जी प्रसन्न हुये। उन्होंने वृषभ को अपना वाहन बनाया और उसी की आकृति से अपनी ध्वजा को चिह्नित किया इसलिये वे वृषभध्वज कहलाये।

ततो देवैर्महादेवस्तदा पशुपतिः कृतः।
ईश्वरः स गवां मध्ये वृषभाङ्कः प्रकीर्तितः ॥२९॥

तदनन्तर देवताओं ने महादेव जी को पशुओं का अधिपति बना दिया और गौओं के बीच में उन महेश्वर का नाम "वृषभाङ्क" रख दिया।

एवमव्यग्रवर्णानां कपिलानां महौजसाम्।
प्रदाने प्रथमः कल्पः सर्वासामेव कीर्तितः।

इस प्रकार कपिला गायें अत्यन्त तेजस्विनी और शान्त वर्ण वाली हैं। इसी से दान में उन्हें सब गौओं से प्रथम स्थान दिया गया है।

लोकज्येष्ठा लोकवृत्तिप्रवृत्ताः रुद्रोपेताः सोमविष्यन्दभूताः।
सौम्याः पुण्याः कामदाः प्राणदाश्च गा वै दत्त्वा सर्वकामप्रदः स्यात्॥३१॥

गायें संसार में सर्वश्रेष्ठ प्राणी हैं। ये जगत् को जीवन देने के कार्य में प्रवृत हुई हैं। भगवान् शङ्कर सदा उनके साथ रहते हैं। वे चन्द्रमा से निकले हुये अमृत से उत्पन्न हुई हैं तथा शान्त, पवित्र, समस्त, कामनाओं को पूर्ण करने वाली और जगत् को प्राण दण्ड देने वाली हैं। अतः गोदान करने वाला मनुष्य सम्पूर्ण कामनाओं का दाता माना गया है।

कपिला गाय की उत्पति की कथा जो इस में आई है उसमें पौराणिक कल्पना है जो मन घड़न्त और मिथ्या है। शिवजी महाराज जिनका नाम शंकर और महादेव भी हैं, वे तो एक ऐतिहासिक पुरुष थे। गौयें उनको प्यारी थीं, इसलिये उन्होंने अपने ध्वज का चिह्न गौ जाति का प्रतिनिधि वृषभ (बैल,साँड,नन्दी) को बनाया, इसलिये वे वृषभध्वज वा नन्दिध्वज कहलाते थे। यह तो सत्य है कि अपने जीवनकाल में भगवान् शंकर वा शिवजी महाराज गौओं के साथ रहते थे उनकी रक्षा व सेवा भी करते थे। किन्तु आजकल भी शंकर गौओं के साथ रहते हैं यह एक पौराणिक कल्पना है। हां संसार के रचयिता परमपिता परमात्मा का नाम भी शंकर है क्योंकि वे सबका कल्याण करते हैं। गौओं की रक्षा करत हैं सर्वव्यापक होने से सबके अन्दर बाहर रहकर और सब प्राणियों की रक्षा करते हैं और सबके साथ रहते हैं।

महाभारत में यह लिखा है कि शिवजी के मुख पर दूध पीते हुये बछड़े के मुख से झूठे झाग पड़ गये थे इससे शिवजी कुपित हुये और उनके कोप से सुरभि कपिला गाय का रंग जा उस समय सोने के समान पीला था वह अनेक रंगों में

बदल गया और जो गायें पहिले ही भागकर चन्द्रमा की शरण में चली गई उन कपिला सुरभि गायों का रंग जैसा था वैसा ही रह गया अर्थात् चन्द्रमा ने उनके रंग की रक्षा की, यह भी सर्वथा मिथ्या कल्पना और गप्प है। भिन्न-भिन्न देशों और प्रान्तों के जलवायु और खानपान के भेद से मनुष्य और पशु सब के ही रंग बदल जाते हैं अर्थात् रंग भेद हो जाता है। आज भी यह संसार में प्रत्यक्ष देखने में आता है। इसमें शिवजी के शाप की कोई बात नहीं, वह तो निरी गप्प है। यह महाभारत में पीछे का प्रक्षेप है जहां जलवायु के कारण भिन्न-भिन्न देशों में गायों के रंगों में अनेक प्रकार के भेद देखने में आते हैं वहां इनके दूध और घृत के गुणों में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। जैसे लिखा है—

जाङ्गलानूपदेशेषु पारन्तीनां यथोत्तरम्।
पयो गुरुतरं स्नेहो यथा चैषां निपद्यते।

जंगल, जलीय प्रदेश, शुष्क स्थान और औषधी जड़ी बूटी वाले प्रदेशों में गायों के चरने से उनके दूध-घी में उसी प्रकार के गुण समा जाते हैं। इस विषय में आगे विशेष प्रकाश डाला जा रहा है।

गायों के रंग भेद से दूध में गुणों का भेद

गौ माता के अनेक रंगों के भेद से उनके दूध घी में भी विभिन्न गुणों का भेद हो जाता है। महर्षि धन्वन्तरि इस विषय में अपने "धन्वन्तरीय निघण्टु" में लिखते हैं।

गवां सितानां वातघ्नं कृष्णानां पित्तनाशनम्।
कफघ्नं रक्तवर्णानां गोदुग्धं च त्रिधा स्मृतम्॥

श्वेत रंग की गायों का दूध वात रोग नाशक होता है। सिता मिश्री को कहते हैं और मिश्री का रंग भी श्वेत होता है। अतः मिश्री के समान सफेद रंग वाली गाय के दूध वा घी का विशेष गुण यही है कि वायु अर्थात् वात विकार के रोगों को नष्ट करता है। वात रोगियों को केवल सफेद गाय के दूध पर ही रखा जाये तो वायु विकार वहुत शीघ्र ही दूर होते हैं। अनेक बार हम इसका अनुभव करके देख चुके हैं। वहुत से वात रोगी जो सर्व प्रकार की चिकित्सा करके थक चुके थे और निराश हो चुके थे, उनको मैंने केवल गाय के दूध पर ही रखा और कोई भोजन न दिया।

एक कन्या चौ० वलदेवसिंह आर्य प्रधान आर्य समाज वलियाणा की है जव वह बी० ए० में पढ़ती थी, उसका चलना फिरना वन्द हो गया था। कुछ पग भी नहीं चल सकती थी उसके पिताजी उसे मेरे पास रिक्शा सवारी में विठाकर लाये। कुछ मास उसको मैंने गाय के दूध पर ही रखा बृहद्वातचिन्तामणि रस आदि वात रोग नाशक औषध का सेवन कराया वह एक मास में ही चलने फिरने लग गई उस का पढ़ना-लिखना छूट गया था। कुछ मास में रोग से मक्त हो गई और पुनः अपनी पढ़ाई पूरी की।

इसी प्रकार एक रोगी शेरसिंह नाम का सैनिक था जो ग्वालीसन ग्राम का था। उसका नीचे का सारा भाग निष्क्रय (वेकार) हो गया था। चलना-फिरना तो दूर करवट भी नहीं ले सकता था। १४ मास तक उस की चिकित्सा सैनिक हस्पताल में ही हुई। किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ, वह वेचारा घर पर पैंशन आ

गया, उसको मैंने कई मास केवल गो दुग्ध पर ही रखा और योगराज गूगलादि औषधरूप में सेवन कराया दो तीन मास में ही वह लाठी के सहारे चलने लगा। इस प्रकार बहुत सी चिकित्सा केवल गाय के दूध को भोजन के रूप में देकर की, सब स्थानों पर और रोगियों पर ईश कृपा से सफलता मिली। वैसे तो सभी गौओं का दूध वात नाशक होता है किन्तु श्वेत गौ के दूध में वायु के रोगों को नाश करने की विशेष शक्ति है।

इसी प्रकार काला (कृष्णा) गौओं का दूध पित्त रोग नाशक होता है। काली गाय के दूध के सेवन से गर्मी के रोग जो पित्त कुपित होने से होते हैं, सब दूर हो जाते हैं। इस विषय में कुछ विद्वानों में मतभेद भी है। कुछ विद्वान् काली गाय के दूध को वात नाशक मानते हैं। लाल रंग वाली गौओं का दूध कफ रोग नाशक होता है। इस प्रकार रंग भेद से तीन भेद गोदुग्ध के माने हैं। धन्वन्तरीय निघण्टु में लिखा है—

कृष्णायाः कृष्णवत्सायाः शुक्लायाश्च परंपयः।
सुखोष्णं कफवातघ्नं शृतशीतं च पित्तजित् ॥१७१॥

काली गाय और जिसके वत्स बछड़े भी काले रंग के हैं और शुक्ल रंग (सफेद) की गाय तथा जिसका बछड़ा भी सफेद रंग का इन दोनों का दूध उष्ण होते हुए भी परम सुखदायक है। इनका थोड़ा गर्म दूध कफ वात विकारों का नाशक और ठण्डा पित्त विकारों को नष्ट करने वाला होता है। इन दोनों प्रकार की गौओं का दूध अत्यन्त श्रेष्ठ होता है। इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर लिखा है। प्रशस्तं वत्सैकवर्णाया धवलीकृष्णयोरपि अर्थात् जिन गायों का रंग अपने बछड़े से मिलता है उनका दूध तथा काली गाय वा सफेद गाय का दूध प्रशंसा करने योग्य है। अर्थात् इनके दूध में प्रशंसनीय गुण होते हैं। काली गाय की प्रशंसा परम्परा से चली आती है। महर्षि पतञ्जलि अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ महाभाष्य में पञ्चमी विभक्ते २.३ ४२ सूत्र पर लिखते हैं "गवां कृष्णा गौः सम्पन्नक्षीरतमा अर्थात् गौओं में काली गाय सबसे अधिक दूध देने वाली होती है। अर्थात् उसके दूध में और गायों से अधिक गुण होते हैं।

आजकल हरयाणा प्रान्त में यह बात प्रसिद्ध है कि यदि कोई किसी पर किसी

प्रकार का अत्याचार अन्याय वा मारपीट करने लगे तो निर्बल अपने छुटकारे के लिये यह दुहाई देता है अथवा इस प्रकार याचना करता है कि "मैं तेरी काली गाय हूं" ऐसे शब्दों से प्रकट होता है मैं तेरा काली गाय के समान हितैषी हूँ, मुझे छोड़ दे। प्रायः इस प्रकार के शब्द कहने पर अपने बड़े से बड़े शत्रु पर दया या विश्वास करके उसे अपना मित्र समझ छोड़ देता है। यह परम्परा भारत में बहुत पुरानी है। महाराजा पृथ्वीराज के विषय में भी यह बात प्रसिद्ध है कि मुहम्मद गौरी जब हारता था और पकड़ा जाता था वह मुख में तृण (घास) को दवा इस प्रकार कहता था "मैं तेरी काली गाय हूँ" और क्षमा मांग कर प्राणों की भिक्षा मांगता था और पृथ्वीराज प्राचीन परम्परा के अनुसार उस पर विश्वास करके क्षमा कर प्राण दान दे देता था। इस प्रकार १६ वा १७ वार गौरी की धूर्त्तता से पृथ्वीराज ठगा जाता रहा। जब जयचन्द के देश द्रोह से पृथ्वीराज स्वयं मुहम्मद गौरी की कैद में आया तो मुहम्मद गौरी ने उसे एक वार भी नहीं छोड़ा। काली गाय के गुणों के विषय में प्राचीन और मध्यकालीन लेखकों के विचारों में मत भेद अवश्य पाया जाता है। किन्तु इस विषय में सबका एक मत है कि काली गाय के दूध में और गायों की अपेक्षा अधिक गुण पाये जाते हैं।

अभी कुछ ही वर्ष हुए मातनहेल ग्राम जिला रोहतक (हरयाणा) प्रदेश में रिसलदार गंगादत्त के घर पर एक सर्वथा काली गाय थी जो २० सेर दूध देती थी उस समय उत्तम से उत्तम गाय का मूल्य अधिक से अधिक १०० रुपये था। उस समय भी वह ४०० रुपये की बिकी। उत्तर प्रदेश के ग्राहक उसे खरीद कर ले गये। वह लम्बे कद में मध्य श्रेणी की हरयाणा जाति की गाय थी। इसी प्रकार एक काली गाय रोहतक की डेरी में विक्रयार्थ राजस्थान से आई थी, वह भी सर्वथा कृष्णा (काली) थी, उसके नीचे भी २० सेर दूध था वह १५०० रुपये वा १७०० रुपये मूल्य की थी। इस प्रकार एक काली गाय छारा ग्राम में मा० रघुवीरसिंह आर्य के परिवार में थी वह भी २० सेर दूध देती थी तथा पुरस्कार लेती थी। इस से यही सिद्ध होता है कि कृष्णा वा श्यामा (काली) गाय अन्य गायों की अपेक्षा अधिक दुधारु होती है। सारे हरयाणा में खोज करने पर ही कोई विरली ही गाय २० सेर दूध देने वाली मिलती है।

विज्ञान की दृष्टि से काली गाय गुणों के कारण श्रेष्ठ मानी जाती है।

जिसके सब अंग काले ही हों, स्तन (थन) भी काले हों उसके सारे शरीर पर एक चित्ती वा धब्बा भी दूसरे रंग का न हो वही श्रेष्ठ होती है। काली गाय का दूध क्यों अधिक, गुणकारी, निर्मल और अधिक वात नाशक माना जाता है। इसमें बुद्धिमान् व्यक्ति यह तर्क देते हैं कि काली वस्तु सूर्य की उष्णता को शीघ्र और अधिक ग्रहण करती है। अपने भीतर जब उस उष्णता का आदान कर लेती है तो उस में वात नाशक गुण आ जाता है। इसीलिए शीतकाल में लोग काले रंग के वस्त्र अधिक पहना करते हैं। क्यों कि वे गर्म रहते हैं। गर्मी में काला वस्त्र काला जूता, न्यून पहना जाता है अथवा विचारशील व्यक्ति काला वस्त्र सर्वथा धारण नहीं करते क्यों कि इनके अधिक शीघ्र गर्म होने से इन्हें धारण नहीं कर सकते। निष्कर्ष वा निचोड़ यह है कि काली वस्तु पर सूर्य की किरणों का प्रभाव शीघ्र तथा अधिक पड़ता है। जैसे आतशी शीशे को सूर्य के सम्मुख करके किसी काले वस्त्र पर उसका प्रतिविम्ब वा प्रकाश डालें तो उस में बहुत ही शीघ्र आग लग जायेगी और धुवाँ उठने लगेगा। इसी प्रकार काली गाय अपने शरीर में सूर्य की उष्णता अधिक ग्रहण करके वा पहुँचा कर बहुत शुद्ध वा निर्मल कर लेती है। जिसके प्रभाव से काली गाय का दूध अधिक शुद्ध निर्मल और गुणकारी हो जाता है। दूध के उष्ण, निर्मल, स्निग्ध होने से वायु रोगों को शीघ्र तथा अधिक नष्ट करने का गुण आ जाता है। वायु शुष्क (रुक्ष) और शीतल होता है अतः वह काली गाय के दुग्ध सेवन से कैसे ठहर सकता है। दूसरे शीतकाल में गौ अपने शरीर में उष्णता पहुँचाने के लिए अन्तर्गत दूध से मलाई ले लेती है तथा जलयुक्त दूध छोड़ देती है। किन्तु काली गाय सूर्य किरणों से अधिक उष्णता ले लेता है इस लिए वह अपने दूध में मलाई बहुत छोड़ देती है तथा अपने शरीर में शीतलता रखने वा पहुँचाने के लिए जल रख लेता है। अतः मलाई की अधिकता तथा निर्मलतादि अनेक गुणों के कारण काली गाय का दूध बहुमूल्य होता है।

अन्य रंगो की गाय

पीली गाय का दूध पित्त और वात नाशक होता है। शुक्ल सफेद गाय का दूध कफकारी और भारी होता है इसलिए सफेद गाय के लिए दूध में अधिक घृत होता है। महाभाष्य में कैय्यट लिखतेहैं—"श्वेता गा आज्याय दुहन्ते।"

जिन्हें अधिक घी चाहिये वे सफेद गाय पालते हैं और उन्हें दुह कर अधिक घृत निकालते हैं। सफेद गाय का घृत अधिक गुणकारी भी होता है। लाल गाय और चित्रा (चितकबरी) गाय का दूध वात रोग नाशक होता है। कोई लाल गाय के दूध को कफ नाशक, श्वेत का पित्त नाशक, पीली का दूध वात और पित्त नाशक कपिला और कृष्णा के दूध को त्रिदोष नाशक मानते हैं।

प्राचीनकाल में गौ माता की महत्ता

महाभारत के समय अथवा उस से पूर्व प्राचीन भारत में हमारे पूर्वज 'गौर्मे-माता ऋषभः पिता मे " गाय मेरी माता है और बैल मेरा पिता—पालयिता है इस वचन के अनुसार गौओं की माता की भांति और बैल वा सांड को पिता सदृश मान कर उनका पालन, रक्षण और आदर करते थे। अतः एव पुरातन समय में संख्या में गौवें अधिक और मनुष्य कम थे। महाभारत के समय भारत में १६ करोड़ मनुष्य थे और गौवें ९६ करोड़ थीं अब मनुष्य तो बढ़कर छोटे से भारत में, पाकिस्तान, ब्रह्मा, लंका, पृथक् होने से ६० करोड़ से अधिक हैं। गौवें ४ करोड़ से भी कम हैं। उस समय एक व्यक्ति के भाग में छः छः गौवें आतीं थीं और अब १५ व्यक्तियों के भाग में एक ही गाय आती है। तब गायें बहुत ही दुधारू थीं एक-एक मन तक दूध देती थीं। अब घट कर एक एक पाव तक (पहाड़ी गाय) तक आ गई हैं। एक व्यक्ति के भाग में इतना दूध घृतादि आता था कि वह सारा खा-पी ही नहीं सकता था। अब तो दूध के दर्शन ही नहीं होते। सामान्य रूप से प्रत्येक व्यक्ति गौ पालता था और जो बड़े राजा महाराजा होते थे वे सहस्रों लाखों और करोड़ों गायें पालते थे। स्वयं भगवान् कृष्ण ने गाय चराई। आगे चल कर राजा वा गणराज्य के सरंक्षक (प्रधान) बने। जिस समय महाराजा युधिष्ठिर राजा थे उस समय उनके पास आठ लाख गायें थीं। सहदेव (विराट् पर्व) में राजा विराट् से कहता है:—

पञ्चानां पाण्डुपुत्राणां ज्येष्ठो भ्राता युधिष्ठिर।
तस्य अष्टशत साहस्रा गवां वर्गाः शतं शताः॥

सहदेव बोले—पाँचों पाण्डवों में महाराज युधिष्ठिर सबसे बड़े हैं, उनके यहाँ सौ-सौ गायों के वर्ग के रूप में आठ सौ हजार अर्थात् एक लाख गायें थीं।

अपरे दश साहस्रा द्विस्तावन्तस्तथापरे।
तेषां गोसंख्य आसं वै तन्तिपालेति मां विदुः॥

और सौ हजार एव दो सौ हजार गौओं के वर्ग थे मैं उन सबका स्वामी

और संख्या करने वाला था। इसीलिए मुझको तन्तिपाल के नाम से लोग जानते थे।

भूतं भव्यं भविष्यत् च यच्च संख्यागतं क्वचित्।
न मेऽस्त्यविदितं किंचित्समन्ताद्दशयोजनम्॥

भूत, भविष्यत् और वर्तमान में स्थित सब संख्या को मैं जानता हूँ। चारों ओर दस-दस योजन तक जितनी गायें रहती हैं। वे मेरे लिए अज्ञात नहीं हैं। अर्थात् उन सबको मैं जानता हूँ।

गुणाः सुविदिता ह्यासन्मम तस्य महात्मनः।
आसीच्च समया तुष्टः कुरुराजो यूधिष्ठिरः॥

वे हमेशा प्रसन्न रहते थे। मेरा नाम अरिष्टनेमि है। इसी प्रकार राजा विराट् के पास भी एक लाख गायें थीं। प्राचीनकाल में हमारे गो वंश की अत्यधिक उन्नति थी और हमारे पूर्वज गायों को बढ़ाने के विधि को जानते थे। सहदेव राजा विराट् से कहता है:—

क्षिप्रं गावो बहुला भवन्ति,
न तासु रोगो भवतीह कश्चन।
तैस्तैरुपायैर्विदितं ममेत-
देतानि शिल्पानि मयि स्थितानि॥

मैं ऐसे उपायों को जानता हूं जिनसे गायें शीघ्र ही बहुत हो जाती हैं और उनके सब रोगों की चिकित्सा भी जानता हूँ। गो सम्बन्धी सभी चतुराइयाँ मुझ में स्थित हैं।

वृषभांश्चापि जानामि राजन् पूजितलक्षणान्।
येषां मूत्रमुपाघ्राय अपि बन्ध्या प्रसूयते॥

अर्थात् मैं ऐसे वृषभों (साण्डों) को भी जानता हूँ, जिनके मूत्र को सूंघने से ही (खाने पीने की कोई आवश्यकता नहीं) वन्ध्या को भी सन्तान हो जाती है। इस प्रकार माद्री पुत्र सहदेव जो युधिष्ठिर के एक भाई थे गोपालन और गो-संवर्धन विद्या के बहुत बड़े निपुण विद्वान् थे। वे पाँचों पाण्डव गुप्त रूप से ही महाराजा विराट् के यहाँ एक वर्ष तक रहे। जब सहदेव ने इस प्रकार अपना

परिचय दिया, तो महाराजा विराट् ने प्रसन्न हो कर उसे अपनी गोशाला का अध्यक्ष वना दिया और महाराजा विराट् ने इस प्रकार कहा—

शतं सहस्राणि समाहितानि वर्णस्य विनिश्चता गुणैः ।
पसून्स पालान्भवते ददाम्यहं त्वदाश्रया मे पशवो भवन्त्विह ।।

हमारे यहाँ एक लाख गायें हैं । उनमें कुछ एक रंग की हैं, और कुछ मिश्र वर्ण की हैं । उन सब गायों को और उनकी देख रेख करने वाले गोपालों को तुम्हारे अधीन करता हूँ। मेरे सब पशु तुम्हारे निरीक्षण में रहें । इस प्रकार युधिष्ठिर और राजा विराट् के समान सभी राजाओं के पास बहुत वड़ी संख्या में गायें रहती थीं । सवकी वड़ी विशाल गोशालायें होती थीं और गोशालाओं के अध्यक्ष गोपालन विद्या के निष्णात पण्डित होते थे । वेदादि शास्त्रों के विद्वान् होते थे । अथर्ववेद में गोसूक्त आता है । जिसको पढ़कर पाठक भली-भाँति जान जायेंगे कि गौ माता का महिमा भगवान् की पवित्र वाणी वेद में बहुत अच्छे प्रकार से वताया गया हैं ।

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुसे जनाय मागामनागामदितिं वधिष्ट ।।

गौ रुद्र ब्रह्मचारियों वा क्षत्रियों की माता है । और वसु ब्रह्मचारियों या वैश्यों की कन्या है। आदित्य ब्रह्मचारियों वा ब्राह्मणों की स्वसा वहिन है। उसकी नाभि में अमृत रूपी दूध का स्रोत है । ज्ञानी पुरुषों के लिए प्रभु की आज्ञा है कि गाय का वध किसी को न करने दें ।

आ गावो अगमन्नुत भद्रमक्रन्त सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरूषसो दुहाना ।।२।।

गौयें हम सबके घरों पर आयें और हमारा कल्याण करें । हमारी गोशालायें गौओं से भरी हों, जिससे उनका दुग्धपान करके सुखी रहें और आनन्द भोगें। हमारी गायें अत्यन्त सुन्दर हों और उनके बच्चे भी बहुत ही सुन्दर हों । ये सभी गायें दुधारू हों, जिससे ये अपने स्वामियों के लिए उषाकाल और सायंकाल में दुहने पर खूब दूध देने वाली हों।

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासाममित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवाश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह

वे गौयें कभी नष्ट नहीं।होती उनको, चोर भी नहीं चुराता और उनको शत्रु अथवा हिंसक भी कष्ट नहीं पहुँचा सकता। जिनका स्वामी गोपति अर्थात् गौओं का रक्षक होता है। स्वयं भी उनका घी दूध खाकर खूब वलवान् होता है और विद्वानों को भी खिलाता है। सुपात्रों को दान देता है और श्रद्धा से देवयज्ञ दैनिक हवन आदि करता है। दानी परोपकारी और वलवान् होने से ऐसे गौओं के स्वामी गोपति की गायों की कोई हानि नहीं कर सकता। वह सदा अपनी गौओं के साथ रहता है। इसीलिए गोपति कहलाता है।

गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छात् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥

परमात्मा ने जो गोयें हमें प्रदान की हैं, वे ही हमारा धन सम्पत्ति और ऐश्वर्य हैं। गौओं का दूध और घी सभी सात्विक भोजनों में प्रथम एवं श्रेष्ठ है। हे मनुष्यो! ये सभी गायें स्वयं इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्य के भण्डार हैं। ये ऐश्वर्य के स्वामी इन्द्र के प्रतिनिधि हैं। मैं इनका अमृत रूपी दूध सेवन करके हृदय से उस परम प्रभु इन्द्र को प्राप्त करना चाहता हूँ।

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुत भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥५॥

हे गोओ तुम्हारे दूध घी में वह शक्ति है कि तुम उसके द्वारा दुर्वल मनुष्य क-मोटा और वलवान् कर देती हो। कुरूप शोभा रहित पुरुष को सुन्दर और दर्शनीय वना देती हो। तुम अपनी मधुर वाणी सुनाकर घरों को पवित्र कर देती हो, और हम सवको दीर्घायु प्रदान करती हो। यह वात तो संसार में प्रसिद्ध है और उसकी चर्चा सभाओं उत्सवों में सुनने में आती है।

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु॥

वे गाय उत्तम होती हैं, जिनके सन्तान प्रजा अच्छे और सभी जीवित रहते हैं। जिनको हरे-हरे जौ और हरी घास यथेच्छा प्रचुर मात्रा में खाने को मिलती है। ऐसी रोचक भूमि में गायें चरती हैं। जिस गौशाला के भवनों में वे रात्रि को निवास करती हैं वहाँ भी उनको हरे जौ, हरी घास, हरा चारा खूब खाने को

मिलता है। उनके पीने के लिये शुद्ध जल मिलता है। जिसके लिये उत्तम जलाशय तड़ाग बावड़ी बने रहते हैं। अर्थात् गौओं के पीने के लिये शुद्ध जल का सुप्रवन्ध होता है। ऐसी गौवें सर्वथा रोग रहित होती हैं। उन गौओं को चोर नहीं ले जा सकते, पापी हिंसक अपने वश में नहीं कर सकते। हिंसक कसाई और सिंहादि हिंसक पशु भी उनको नहीं सता सकते। एक तो ये पशु अच्छा चारा और शुद्ध जल प्रचुर मात्रा में मिलने से बलवान् हो जाते हैं। इनको सताना तो दूर इनको बुरी दृष्टि कुदृष्टि से देख भी नहीं सकते। क्योंकि इस प्रकार की अच्छी गौओं के स्वामी गोपति इनका अमृत रूपी दूध खा पीकर इतने बलवान् योद्धा हो जाते हैं कि उनसे चार उचक्के हिंसक कसाई आदि बहुत भयभीत रहते हैं और इनको तथा इनकी गौओं को किसी प्रकार का दुःख नहीं दे सकते।

वेद में लिखा है कि गौओं के लिये हरी घास आदि का अच्छा प्रवन्ध होना चाहिये उनके सुख पूर्वक जल पीने के लिये शुद्ध जल के सुप्रपाण—खेल प्याऊ आदि बड़े-बड़े तालाब बनाने चाहियें। इनके बनाने का महत्त्व प्राचीन काल में बहुत था। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में लिखा है—

सकुशलं तारयेत् सर्वं यस्य खाते जलाशये ॥
गावः पिवन्ति सलिलं साधवश्च नराः सदा ॥

अर्थात् जिसके खुदवाये हुये तालाब में गायें और श्रेष्ठ नर सर्वदा जलपान करते हैं वह मनुष्य सम्पूर्ण कुल का उद्धार करता है। प्यासी गौ को पानी पीते हुये से हटाना ब्रह्महत्या समझी जाती थी। भीष्म पितामह युधिष्ठिर जी से कहते हैं।

गोकुलस्य तृषार्त्तस्य जलार्थे वसुधाधिप।
उत्पादयति यो विघ्नं तं विद्याद् ब्रह्मघातिनम् ॥

हे राजन् ! जो पानी पीने की इच्छा वाली गायों को पानी नहीं पीने देता, उन्हें हटाता है उसे ब्रह्मघाती समझना चाहिये। अर्थात् उसे ब्रह्महत्या के अपराधियों में गिनना चाहिये। गो माता की सेवा करना जहाँ पुण्य और धर्म का काम है, वहाँ अच्छी गौयें विद्वान् ब्राह्मणों को दान देने का पुण्य और महत्व भी बहुत अधिक है। हमारे शास्त्रों में जो लिखा है उसे सुनकर महाराजा युधिष्ठिर ने गोदान किया :—

पितामहस्याथ निशम्य वाक्यं,
राजा सह भ्रातृभिराजमीढः ।
सुवर्णवर्णानड्हस्तथा गाः,
पार्थो ददौ ब्राह्मणसत्तमेभ्यः ॥

हे राजन् ! पितामह भीष्म की ये बातें सुनकर आजमीढ वंशी राजा युधिष्ठिर और उनके भाइयों ने शेष ब्राह्मणों को सोने के समान चमकदार रंग-वाले बहुत से बैल और उत्तम गायें दान में दीं। ऊपर जो लिखा है वे बैल और गायें कपिला जाति के थे। इस के अतिरिक्त यज्ञों की दक्षिणा के रूप में और अपनी उत्तम कीर्ति को फैलाने के लिये राजा युधिष्ठिर ने सैंकड़ों हजारों गौयें और बैल दान में दिये। महाभारत में युधिष्ठिर के गोदान की चर्चा अनेकों स्थानों पर की है। गौओं की प्रशंसा में महाभारत में बहुत से श्लोक आये हैं कुछ श्लोक यहाँ देते हैं।

गावः सुरभिगन्धिन्यस्तथा गुग्गुलुगन्धयः ।
गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावःस्वस्त्ययनं महत् ॥

हे राजन् ! गौओं के शरीर से अनेक प्रकार की मनोरम सुगन्ध निकलती रहती है, बहुत सी गायें गुग्गुल के समान गन्ध वाली होती हैं। गौयें समस्त प्राणियों की प्रतिष्ठा का आधार हैं। गौयें ही उनके लिये महान् मंगल की निधि है। गौओं को खिलाया हुआ पदार्थ कभी व्यर्थ नहीं जाता जैसा आहार हम अपनी गौओं को खिलायेंगे उसी प्रकार के गुण उसके दूध और दही में आ जायेंगे। एक अंग्रेज अपनी गौओं को सुगन्धित द्रव्य केशर जायफल और जावित्री खिलाता था। उस के दूध में उन सब द्रव्यों का सुगन्ध आती थी।

अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः ।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ ॥

गौओं की सेवा अधिक करने से सर्वोत्तम अन्न की प्राप्ति होती है। क्योंकि गोबर ही अधिक अन्न पैदा करने के लिये सर्वोत्तम खाद है। गोमाता ही देवयज्ञ में आहुति देने के लिये उत्तम घृत की हवि प्रदान करती है। स्वाहाकार और वषट्कार अर्थात् छोटे बड़े सभी यज्ञ सदा गौओं पर ही अवलम्बित रहते हैं।

क्योंकि यज्ञ में हवि देने के लिये मुख्यभाग गोघृत का ही होता है।

गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।
गावो भविष्यद् भूतं च गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिता ॥

गायें ही यज्ञ का फल देने वाली हैं। उन्हीं में यज्ञों की प्रतिष्ठा है गौयें भूत और भविष्यत् है। अर्थात् गौयें समाज के भूत और भविष्यत् दोनों को बनाने वाली हैं। यज्ञ तो गो माता के बिना हो हा नहीं सकता। शास्त्रों में आया है। "गोघृतेन जुहुयात्" गो घृत से ही यज्ञ में आहुति दी जाती है। इसलिये गौओं में ही यज्ञ प्रतिष्ठित है। अर्थात् यज्ञ का आधार गोमाता ही है। गौओं पर ही यज्ञ की निर्भरता है। ऋषि महर्षि और विद्वान् राजे—महाराजे धनी लोग बड़ी संख्या में गौयें दान देते थे। उन्हीं गौओं के घृत से प्रातः सायं ऋषि लोग यज्ञ करते थे।

एकां च दशगुर्दद्याद् दश दद्याच्च गोशती।
शतं सहस्रगुर्दद्यात् सर्वे तुल्यफला हि ते ॥

जिसके पास दश गौयें हों वह एक गोदान अवश्य करे और जिसके पास सौ गौयें हों वह दश गौओं का दान अवश्य करे और जिसके पास एक सहस्र गौयें विद्यमान हों वह सौ गौवें दान दें तो इन सब दाताओं को एक समान ही फल मिलता है। इस प्रकार महाभारत में गोदान की खूब महिमा लिखी है। सबसे अच्छी गाय कपिला मानी गई है। उसके दान के विषय में इस प्रकार लिखा है—

कपिलां ये प्रयच्छन्ति सवत्सां कांस्यदोहनाम्।
सुव्रतां संवीतामुभौ लोकौ जयन्ति ते ॥

जो सर्व उत्तम लक्षणों से युक्त कपिला गौ वस्त्र उढ़ाकर बछड़े सहित उसका दान करते हैं, वे इस लोक और परलोक में विजयी होते हैं। जो सौ गायें बड़े-बड़े सींगों वाले वृषभ (सांड) के साथ विद्वान् ब्राह्मणों को दान देते हैं, वे जब-जब संसार में जन्म लेते हैं, महान् ऐश्वर्य को प्राप्त करके सुखी होते हैं। इसी गोदान के महिमा के कारण यज्ञादि की रक्षा में ब्राह्मणों को राजा सहस्रों गाय दान में देते थे। राजा नृग ने अनेक बार दश,-शत सहस्र तथा लक्ष-लक्ष गायें ब्राह्मणों को दक्षिणा में दी थीं। इसी प्रकार विदेहाधिपति महाराज जनक ने

स्वर्ण से मण्डित सींगों वाली एक सहस्र गायें महर्षि याज्ञवल्क्य को दी थीं। अभिमन्यु के विवाह के पश्चात् महाराजा युधिष्ठिर ने हजारों गायें, विविध रत्न तथा वस्त्र आभूषण आदि दान दिये थे :—

ब्राह्मणेभ्यो ददौ वित्तं यदुपाहरदच्युतः।
गोसहस्राणि रत्नानि वस्त्राणि विविधानि च ॥

इसी प्रकार अनेक प्राचीन उदाहरण गोदान के विषय में महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थों में लिखे हैं। प्राचीन काल में गोदान आदि का अत्यधिक महत्व था। "दानानामपि सर्वेषां गोदानं प्रशस्यते" अर्थात् सब दानों में गाय का दान सर्वश्रेष्ठ है और भी देखिये—

सुवर्णशृंगास्तु विराजितानां,
गवां सहस्रस्य नरः प्रदानात्।
प्राप्नोति पुण्यं दिवि देवलोक—
मित्येवमाहुर्दिवि देवसंघाः ॥ (महाभारत)

अर्थात् स्वर्ण से सुशोभित सींगों वाली एक हजार गायों को दान करने से मनुष्य देवलोक को प्राप्त करता है। ऐसा विद्वान् लोग कहते हैं।

अमृतं वै गवांक्षीरमित्याह त्रिदशाधिपः।
तस्माद् ददाति यो धेनुममृतं स प्रयच्छति ॥

अर्थात् गायों का दूध ही अमृत है, ऐसा महाराजा इन्द्र ने कहा है। अतः जो धेनु का अर्थात् गाय का दान करता है, वह मानो अमृत का दान करता है।

गावः शरण्या भूतानामिति वेदविदो विदुः।
तस्माद् ददाति यो धेनुं शरणं संप्रयच्छति ॥

अर्थात् गायें प्राणियों को शरण देती हैं। उनका दुग्धादि से पालन-पोषण करती हैं। ऐसा वेदज्ञ विद्वानों का मत है। अतः जो गोदान देता है, मानो वह शरणार्थी मनुष्य को शरण देता है। एक वार युधिष्ठिर ने भीष्मपितामह से पूछा कि महाराज दानों में श्रेष्ठ दान कौन सा है? उत्तर में भीष्म जी कहते हैं—

हिरण्यदानं गोदानं पृथ्वीदानमेव च।
एतानि वै पवित्राणि तारयन्त्यपि दुष्कृतम् ॥

स्वर्णदान, गोदान, और भूमिदान ये तीनों श्रेष्ठ दान हैं। ये पापी का भी उद्धार करते हैं। युधिष्ठिर फिर प्रश्न करते हैं कि भूमि आदि का दान तो सब नहीं कर सकते ? अतः जिस वस्तु का सब मनुष्य दान कर सकें या जिसके दान का वेद में विधान हों उसका मुझे उपदेश करें।

भीष्म पितामह कहते हैं—

तुल्यनामानि देयानि त्रीणि तुल्यफलानि च।
सर्वकामफलानीह गावः पृथ्वी सरस्वती॥

अर्थात् गौ का दान करना चाहिये इसके तीनों अर्थ हो जाते हैं। गाय, भूमि, और विद्या इन तीनों के दान को सदृश माना गया है। जो गुरु शिष्य को विद्या दान करता है वह भी गाय और भूमि दान के तुल्य फल को प्राप्त करता है। "तथैव गाः प्रशंसन्ति न तु देयं ततः परम्" इसी प्रकार गायों की सभी प्रशंसा करते हैं। इनसे बढ़कर कोई दान नहीं है।

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्व सुखप्रदाः।
वृद्धिकाङ्क्षेत् नित्यं गावः कार्या प्रदक्षिणाः॥

सब को सुख देने वाली गायें सब प्राणियों की मातायें हैं। अतः उनकी वृद्धि चाहने वाले को उनकी प्रतिदिन प्रदिक्षणा अर्थात् सेवा आदि करनी चाहिये। क्योंकि यदि इनकी सेवा न की जाये तो ये शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं। विदुर जी ने भी धृतराष्ट्र से यही कहा था।

असद्वृत्ताय पापाय लुब्धायानृतवादिने।
हव्यकव्यव्यपेताय न देया गौः कथञ्चन॥

अर्थात् पापी, लोभी, मिथ्या भाषी और यज्ञादि न करने वाले राक्षस को कभी किसी भी अवस्था में गाय नहीं देनी चाहिये आजकल गायें किसी को भी बिना विचारे दे दी जाती हैं और फिर मांस, चर्मादि के लिये उनका वध किया जाता है। यह शास्त्र के विरुद्ध है "न वधार्थं प्रदातव्या" वध के लिये गायें नहीं देनी चाहियें और "गोजीविने न दातव्याः" गायों से व्यापार आदि करके जीने वालों को भी गायें नहीं देनी चाहियें। इसीलिये यजुर्वेद में परमपिता परमात्मा ने यह आज्ञा दी है "आप्यायध्वमघ्न्याः" गौओं की सब प्रकार से वृद्धि करनी

चाहिये। इनका "अघ्न्या" नाम इसीलिये है कि "न हन्तुमर्हाः सदैव वर्धितुमर्हा." उनको कभी मारना नहीं चाहिये सदा उनका संवर्धन करना चाहिये। उनकी रक्षा का ऐसा सुप्रबन्ध होना चाहिये "**मा वस्तेन ईशत**" "**मा अभिशंसत**" जिससे चोर उन्हें चुरा न सकें, हिंसक कसाई आदि उनको मार न सकें। इसी प्रकार के भाव हम ऊपर प्रकट कर चुके हैं। यदि हम गौ आदि उपयोगी पशुओं का पालन पोषण और संरक्षण यथोचित प्रकार से नहीं करेंगे तो अपनी और संसार की सबसे बड़ी हानि कर देंगे। यही कारण है कि महर्षि दयानन्द ने अपनी पवित्र पुस्तक "गोकरुणानिधि" में लिखा है "गौ आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा दोनों का नाश हो जाता है।" जहां गोदुग्ध भोजन के रूप में अमृत है वहाँ चिकित्सा के रूप में भी सर्वोत्तम औषधि है। इसीलिये दूध का चिकित्सा में क्या स्थान वा उपयोग है। इस विषय में पाठकों की सेवा में कुछ निवेदन किया जा रहा है।

दुग्ध चिकित्सा

सारे संसार के बड़े-बड़े वैद्यों, डॉक्टरों, हकीमों और सभी रसायन शास्त्रियों का इस विषय में एक ही मत है कि सृष्टि में मनुष्य जाति के खाने का जो उत्तम से उत्तम पदार्थ है उनमें दूध सर्वोत्तम है। क्योंकि दूध के अन्दर शरीर को पोषण करने वाले सब प्रकार के तत्त्व इस प्रकार से इकट्ठे विद्यमान हैं कि जिन लोगों को कोई भी भोजन नहीं पचता उनको दूध आसानी से पच जाता है, इसीलिये परमात्मा ने तुरन्त उत्पन्न हुये बच्चों के लिये माता के स्तनों में दूध रूपी अमृतमय भोजन की व्यवस्था की है। इसी भांति किसी भी प्रकार के रोग से निर्बल हुये व्यक्ति जिसको कोई भी भोजन नहीं पचता दूध उसके लिये सबसे सुपच्य भोजन होता है यह रोगी के लिये सबसे अधिक सुपथ्य है। यही नहीं ज्यों-ज्यों भोजन सम्बन्धी खोज वा अनुसन्धान होते जाते हैं और भोजन में अनेकानेक तत्त्वों की आवश्यकता सन्मुख आती जाती है, त्यों-त्यों यह भी भली-भाँति ज्ञात होता जाता है कि वे सभी तत्त्व दूध में विद्यमान हैं। इसीलिये भोजन सम्बन्धी आज तक की खोज में दूध ही सर्वश्रेष्ठ भोजन सिद्ध हुआ है। जो लोग जीवन पोषक तत्त्व विटामिन के सिद्धान्त को मानते हैं। उनका कथन है कि दूध में ए, बी, और डी विटामिन पर्याप्त मात्रा में होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन, फास्फोरस,

कैलसियम, लोहा, कारबोहाइड्रेड, चर्बी आदि सभी पदार्थ पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। १।।। (पौने दो) छटांक दूध में पाये जाने वाले पदार्थों की मात्रा—

१. विटामिन ए०—१८० युनिट।
२. विटामिन बी०—पर्याप्त मात्रा।
३. विटामिन डी०—पर्याप्त संख्या।
४. कैलशियम (चूना)—०१.२ ग्राम।
५. फास्फोरस—.०६ ग्राम।
६. प्रोटीन—८५ प्रतिशत।

इसी प्रकार मनुष्य के शरीर को पोषण करने वाले सब तत्त्व दूध में पर्याप्त मात्रा में रहते हैं। इस के अतिरिक्त सबसे अधिक महत्त्व की बात यह है कि कुछ तत्त्व पशु प्रोटीन—(एनिमल प्रोटीन) जिनकी शरीर के संरक्षण के लिये आवश्यकता है वह पूर्ति दूध-घी को छोड़कर किसी पदार्थ से नहीं होती। दूध घी के सेवन करने वाले को किसी भी प्रकार के मांस खाने और उसके लिये किसी भी प्राणी के प्राण वा जान लेने के लिये हत्या वा घोर पाप करने की आवश्यकता नहीं। इसीलिये दूध सर्वोत्तम और पूर्ण भोजन है।

दूध के तत्त्व

शरीर को पुष्ट वा मोटा करने के लिये शक्कर (मीठे) की आवश्यकता है। वह दूध में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। दूध का एक नाम मधुर (मीठा) ही है। क्योंकि दूध में सर्वोत्तम शक्कर मीठा स्वयं भगवान् ने प्रचुर मात्रा में स्थापित कर रक्खा है। जो शुद्ध दूध होता है, उसमें बाहर के मीठे शक्कर, चीनी, गुड़ादि के मिलाने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह स्वयं मधुर मीठा है। दूध में खांड चीनी आदि मिलाकर पीना दूध को बिगाड़ कर पीना है। दूध का अपना मीठा बहुत हल्का, सद्यः बलकारक और शान्तिप्रद होता है। क्योंकि वह पचा हुआ भोजन होता है। जैसे प्रत्येक प्राणी के शरीर में किये हुये भोजन का पचकर प्रथम धातु रस ही बनता है। उसी प्रकार दुधारु पशुओं का सर्वप्रथम रस के समान दूध ही बनता है। इस में चार पांच दिन लग जाते हैं। इसीलिये दूध को वा इसके मीठे शक्कर को आधुनिक विद्वान् पचा हुआ भोजन मानते हैं। तत्काल

वल देने वाले पदार्थों में दूध की भी गिनती है। दूध का एक नाम स्निग्ध भी है अर्थात् यह चिकना होता है और इसकी चिकनाई संसार की सर्वप्रकार की चिकनाइयों से हल्की सुपाच्य होती है। यह वीर्य के समान ही होती है। इसका और वीर्य का प्रोटीन मिलता जुलता है।

दूध से रक्त जहाँ शीघ्र और अधिक वनता है वहां यह रक्त को शुद्ध और विकारहीन भी करता है। दूध मूत्रल होता है अर्थात् वह अधिक मूत्र लाता है। यह स्वेद कारक भी होता है, अधिक पसीना लाता है। शरीर के रक्तादि धातु शुद्ध होते रहते हैं और शरीर में जो अधिक क्षार होता है वह पसीने और मूत्र द्वारा निकल जाता है। दूध कृमिनाशक होता है। वड़ी आंतों में जो कृमि—कीड़े होते हैं, उनके कारण अनेक रोगों की उत्पत्ति होती है। दूध उन सव आँतों के कृमियों का संहार—नाश कर डालता है। हम पहिले लिख चुके हैं कि दूध विटामिनों का भंडार है और दूध में पर्याप्त मात्रा में क्षार भी होता है। डॉक्टरों के प्रचार से लोगों को इतना ज्ञान तो हो गया है कि हमारे शरीर को क्षार और विटामिनों की आवश्यकता होती है। किन्तु यह कितनी मात्रा में होती है इसका ज्ञान भी कराया जाना चाहिये। इसके उत्तर के लिये किसी पुस्तक को खोजने की आवश्यकता नहीं, इसका उत्तर दूध स्वयं दे देता है। दूध पूर्ण भोजन है। प्राकृतिक चिकित्सकों के मत में दूध के समान संतुलित भोजन के सदृश कोई नहीं है। यही एक पदार्थ है जिसमें दयालु प्रभु ने कृपा कर के शरीर के लिये सभी पोषक तत्त्व इकट्ठे कर दिये हैं। इसीलिये और किसी पूर्ण भोजन को ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं जव तक गौ का पवित्र अमृत रूपी दूध संसार में विद्यमान है। भोजन ही सव भोजनों का माप दण्ड है। जो तत्त्व दूध में मिलते हैं वे तत्त्व जिन अन्य भोज्य पदार्थों में मिलते हैं वही भोज्य पदार्थ शरीर के पोषक मानने चाहियें।

निर्बलता

किसी रोगी ने वैद्य से पूछा—

रोगी—मुझे क्रोध वहुत ही शीघ्र आता है और अधिक आता है।

वैद्य—यह आप की निर्वलता है।

रोगी—मैं चलने से, थोड़ा परिश्रम करने से यहाँ तक कि कुछ देर लिखने पढ़ने

से मैं थक जाता हूं और विश्राम करने की इच्छा होती है क्या कारण है ?

वैद्य—यह भी निर्बलता है।

रोगी—मुझे स्मरण नहीं रहता यहाँ तक कि मैं अपने सगे सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों के नाम तक भूल जाता हूँ। यह क्या रोग है ?

वैद्य—यह भी निर्बलता है।

रोगी—मुझे भूख कम लगती है कुछ खालूं तो डकार आती रहती हैं भोजन ठीक नहीं पचता।

वैद्य—यह जठराग्नि का निर्बलता है।

रोगी—थोड़ा सा भी शारीरिक वा मानसिक परिश्रम करने पर मेरे शिर में भयङ्कर पीड़ा (दर्द) हो जाती है,। थोड़ी सर्दी लगने पर जुकाम, खांसी थोड़ी गर्मी लगने से भयङ्कर पसीना, जलन और न शान्त होने वाली प्यास लगती है जिससे मैं बहुत व्याकुल और दुःखी हो जाता हूँ।

वैद्य—यह भी निर्बलता है। (रोगी को क्रोध आ गया और वह वैद्य जी से उल्टी सीधी बातें कहने लगा)

रोगी—आप को कुछ नहीं आता, आप को किसने वैद्य बनाया है। दुनियां को यों ही ठगते रहते हो बस केवल एक बात जानते हो कि निर्बलता है, निर्बलता है, निर्बलता है। क्या कुछ और भी आता है या संसार को धोका देने के लिये ही वैद्य बने बैठे हो।

वैद्य— यह भी आप की निर्बलता है। अतः सभी रोगों का कारण निर्बलता है। और सभी प्रकार की निर्बलता को दूर करने का सर्वोत्तम औषध दूध है और दूध सबसे श्रेष्ठ गाय का होता है। अतः सर्व प्रकार की निर्बलता को दूर करने में गोमाता ही समर्थ है। क्योंकि यह अमृत रूपी दूध देती है। इसीलिये वेद भगवान् ने गौ को "अमृतस्य नाभिः" कहा है अर्थात् इसकी नाभि (उदर) में अमृत रूपी दूध और घृत की उत्पत्ति होती है। दूध का नाम मधुर है क्योंकि इसमें मधुररस प्रधान है। मधुररस के गुण चरक संहिता में महर्षि चरक ने इस प्रकार लिखे हैं—

चरकशास्त्र में मधुर रस

तत्र मधुरो रसः शरीर सात्म्याद् रस रुधिर मांस मेदोस्थिमज्जौजः शुक्रा-

भिवर्धन आयुष्यः षडिन्द्रिय प्रसादनो बलवर्णकरः पित्तविषमारुतघ्नस्तृष्णाप्रशमन स्त्वच्यः केश्यः कण्ठ्यः प्राणिनो जीवनस्तर्पणो वृंहणः स्थैर्यकरः क्षीणक्षतसंधान करो घ्राणमुखकण्ठौष्ठजिह्वाप्रह्लादनो दाहमूर्च्छाप्रशमनः षट्पदपिपीलिकानामिष्टतमः स्निग्धः शीतो गुरुश्च।

छहों रसों में से एक के गुण और कर्मों का उपदेश उनके आश्रय द्रव्यों के गुण कर्मानुसार ही करेंगे।

मधुर रस के गुण

उनमें से मधुर रस शरीर के अनुकूल होने से रस रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, ओज, वीर्य इन सब धातुओं को बढ़ाता है आयु को बढ़ाता है। छहों इन्द्रियों को प्रसन्न रखता है। देह में बल और वर्ण (रंग) को उत्पन्न करता है। पित्त, विष, वायु के उपद्रवों और प्यास को शान्त करता है। त्वचा को हितकारी है। केशों और कण्ठ को ठीक करता है। वह प्राणियों को तृप्तिकारक है। जीवन प्राणदायक है। मनुष्य की देह की न्यूनता को पूर्ण करता है। मोटा करता है, स्थिरता अर्थात् शरीर में दृढ़ता उत्पन्न करता है। निर्बल हुये को पुष्ट करता है तथा चोट घाव को जोड़ने में समर्थ है। नाक, जीभ, मुख, गला और ओठ को सुख पहुँचाता है। दाह और मूर्छा को शान्त करता है। मधुर रस स्निग्ध शीत (ठण्डा) और भारी है। दूध का गुण मधुर है इसीलिये ऊपर लिखे मधुर रस के गुण दूध के होते हैं। दूध का मधुर नाम भी मधुर रस प्रधान होने से ही है। ऊपर लिखे हुये गुणों के आधार पर दूध के ऊपर एक बहुत बड़ा विशाल ग्रन्थ लिखा जा सकता है। मधुर रस के अधिक सेवन से हानियां भी होती हैं। अतः इसका दुर्गुण इस प्रकार है।

मधुर रस के दुर्गुण

स एवं गुणोऽप्येक एवात्यर्थमुपयुज्यमानः स्थौल्यं मार्दवमालस्यमतिस्वप्नं गौरवमनन्नाभिलाषमग्नि दौर्बल्यमास्यकण्ठमांसाभिवृद्धि श्वासकासप्रतिश्यायालसकशीतज्वरानानाहास्यमाधुर्यवमथुसंज्ञास्वरप्रणाशगलगण्डगण्डमाला-श्लीपद-गलशोफबस्तिधमनीगण्डोपलेपाक्ष्यामयानभिष्यन्दमित्येवं प्रभृतीन् कफजान् विकारानुपजनयति। (चरक सूत्रस्थान अध्याय २६।४०।१)

मधुर रस में गुण होते हुए भी इस रस का अधिक सेवन करने से यह मोटापन, मृदुता (कोमलपन) आलस्य अतिनिद्रा, भारीपन, अन्न के प्रति अरुचि, अग्निमन्दता, मुख और गले के मांस की वृद्धि (सूजन) तथा श्वास कास प्रतिशाय (जुकाम) अलसक, गण्डमाला, श्लीपद (हाथी पाँव), गले का शोथ (टॅंसिल), वस्तिरोग, धमनी तथा गण्ड (ग्रन्थियां), कफ के रोग, नेत्र के रोग, अभिष्यन्द (स्रोतों से जल या द्रव्य पदार्थ का वहना आदि) कफ से उत्पन्न अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। इसीलिये इसका अधिक मात्रा में सेवन नहीं करना चाहिये। किन्तु दूध में जो मधुर रस है उसके कारण दूध सव धातुओं को वढ़ाता है। सव प्रकार के रोगों का नाश करता है। शरीर को सर्वथा रोग रहित करके सुन्दर, सुदृढ़, सुगठित, हृष्ट-पुष्ट और वलिष्ठ वनाता है।

गाय का दूध तो अमृत है। अकेला ही पूर्ण औषधालय है। शरीर की सव प्रकार की निर्वलता को दूर करके वलवान् वनाता है। रोगी को नीरोग और वूढ़े को जवान वनाता है। विचारशील वैद्य गोदुग्ध का सेवन कराके सव प्रकार के रोगों की चिकित्सा कर सकता है। वहुत से वैद्य और डॉक्टरों ने निर्वलता या दुवलेपन को दूर करने के लिये गोदुग्ध को एकमात्र औषध माना है। केवल गोदुग्ध का सेवन कराके सव प्रकार के रोगों को दूर करते हैं। जो रोगी निर्वल हैं किसी प्रकार भी अपना वजन नहीं वढ़ा पाते, उनको यथोचित औषध का सेवन कराते हुये दूध का ही सेवन कराना चाहिये इससे असाध्य रोग दूर हो जाते हैं। इस लिये यदि दो मास तक केवल दूध का कल्प कराया जाये अर्थात् रोगी को दूध ही पिलाया जाये तो दो मास के समय में रोगी का रोग दूर होकर १० से २० पौण्ड तक भार वढ़ जाता है। कभी-कभी तो ३० पौण्ड तक भार वढ़ना एक साधारण वात है। निर्वलता भी कोसों दूर भाग जाती है। जिस रोग को डॉक्टर व वैद्य असाध्य कह के रोगी को जवाव दे देते हैं, ऐसे असाध्य रोगों को और सव प्रकार की निर्वलताओं को चाहे वे रोग विशेष के कारण हों या पैतृक रोगों के कारण हों गोदुग्ध के सेवन से वे सव दूर भाग जाते हैं। गौ-दुग्ध का कल्प शरीर को सव प्रकार से निर्मल, नीरोग, सुदृढ़, तेजस्वी, ओजस्वी, प्राणवान् और कान्तिमान् वनाता है। इस विषय में दूध की समता करने वाला इस मर्त्यलोक में कोई भोज्य पदार्थ अथवा औषध नहीं है। वैसे तो गौ के दूध को ही सब से अधिक लाभप्रद

माना है। अन्य पशुओं के दूध की भैंस आदि की चर्चा हम पहिले कर चुके हैं। सब का ही उपयोग महर्षि धन्वन्तरि ने सुश्रुत में लिखा है—

गव्यमाजं तथा चौष्ट्रमाविकं माहिषञ्च यत् ।
अश्वायाश्चैव नार्याश्च करेणूनाञ्च यत्पयः ।।सूत्रस्थान ४५/४७ ।।

अर्थात् गाय, बकरी, ऊंटनी, भेंड़, भैंस, घोड़ी, गधी, स्त्री, तथा हथिनी का दूध उपयोग में आता है। रासायनिक विश्लेषण करने पर गधी का दूध स्त्री के दुग्ध के समान तत्त्वों वाला होने से आजकल बच्चों को पिलाने के लिये (दूसरे देशों में) बहुत दिया जाता है।

मधुरं पिच्छिलं शीतं स्निग्धं श्लक्ष्णं सरं मृदु ।
सर्वप्राणभृतां तस्मात् सात्म्यं क्षीरमिहोच्यते ।। सूत्र० ४५/४८ ।।

उपर्युक्त अष्ट प्रकार का दूध अनेक प्रकार की औषधियों के रस का सार भाग है। अतएव मनुष्यों के प्राणों को धारण करने वाला भारी, मधुर, गाढ़ा, शीतल, चिकना, श्लक्षण, कुछ विरेचक और मृदु होता है इन्हीं आठगुणों के कारण दुग्ध सर्व प्राणियों के लिये सात्म्य वा हितकर होता है।

दुग्ध चिकित्सा

दुग्ध मनुष्य के लिये सर्व प्रकार से पथ्य है। इसका प्रतिषेध नहीं है। सुश्रुत में इस प्रकार लिखा है—

तत्र सर्वमेव क्षीरं प्राणिनां न प्रतिसिद्धं जातिसात्म्यात् सूत्र० ४५।४८।।

जन्म से ही दुग्ध सेवन करने का अभ्यास होने से मनुष्यों के लिये सर्वप्रकार से दुग्ध सेवन के लिए निषिद्ध नहीं है। लोगों को यह बहुत भारी भ्रम है कि दुग्ध श्वास-कास-अतिसार ग्रहणी आदि रोगों में बहुत हानिकारक है। अतः इस प्रकार के अनेक रोगों में दूध बहुत हानिकारक होने से वर्जित है। किन्तु महर्षि धन्वन्तरि सुश्रुत में लिखते हैं—

वातपित्तशोणितमानसेष्वपि विकारेष्वविरुद्धम् । जीर्णज्वरकासश्वास-शोषक्षयगुल्मोन्मादोदरमूर्च्छाभ्रममददाहपिपासाहृद्वस्तिदोषपाण्डुरोगग्रहणीदोषार्शः शूलोदावर्त्तातिसारप्रवाहिकायोनिरोगगर्भास्रावरक्तपित्तश्रमक्लमहरम् ।।
सूत्र० ४५।४८

अर्थ—वातपित्त रक्त तथा मानस रोगों में भी दुग्ध विरुद्ध नहीं होता है अर्थात् हानि नहीं करता। उपर्युक्त रोगों में इसका प्रयोग निषिद्ध नहीं है। जीर्ण ज्वर, कास, श्वास, शोध, क्षय, गुल्म, उन्माद, उदर रोग, मूर्च्छा, भ्रम, मदात्यय (मद), दाह, तृषा, हृदयरोग, ग्रहणी, अर्श, शूल उदावर्त्त, अतिसार, योनिरोग, गर्भस्राव, रक्त पित्त, श्रम तथा क्लम इन रोगों को दुग्ध नष्ट करता है। गाय का दूध तो उपर्युक्त रोगों के लिये अमृत है। वे आगे लिखते हैं—

पाप्माहं बल्यं वृष्यं वाजीकरणं रसायनं मेध्यं सन्धानमास्थापनं वयःस्थापनमायुष्यं जीवनं बृंहणं वमनविरेचनास्थापन तुल्यगुणत्वाच्चौजसो वर्द्धनं बालवृद्धक्षतक्षीणानां क्षुद्व्यवायव्यायामकर्शितानाञ्च पथ्यतमम्॥ सुश्रुत, सूत्र० ४५/४८॥

दूध सात्विक होने से पाप का नाशक है। बल, शुक्र को बढ़ाने वाला है, टूटी हुई हड्डी को जोड़ने वाला है। निरूहण वस्ति के लिये उपयोगी, आयु को स्थिर करने वाला और बढ़ाने वाला है। जीवनीय है अर्थात् जीवन का आधार, निर्बलता को दूर कर शरीर को पुष्ट करता है। वमन रोग में भी उपयोगी है। पाचक और विरेचक है। ओज के समान गुण वाला है। इसीलिये ओज को बढ़ाता है। बालक, वृद्ध तथा क्षतक्षीणों (तपेदिक) के लिये तथा भूख, स्त्री संसर्ग और व्यायाम से कर्शित (क्षीण) कमजोर हुये मनुष्यों के लिये अत्यन्त पथ्य होता है। ऊपर दूध को जीर्ण ज्वर की औषध लिखा है। जीर्ण ज्वर पुराना बुखार किसे कहते हैं इस विषय में लिखा है—

त्रिसप्ताह व्यतीतस्तु ज्वरो यस्तनुतां गतः।
प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्ण ज्वर उच्यते॥

जिस बुखार को तीन सप्ताह हो जायें, पर वह ज्वर न जाय, न जाने का नाम लेता हो, ज्वर का वेग अतिनम्र हो अर्थात् हल्का-सा ज्वर रहता हो, प्लीहा और अग्नि मन्दता का कष्ट हो जाये ऐसे ज्वर को जीर्ण ज्वर कहते हैं। इस में तीनों दोषों के अनुसार दिनों का अन्तर होता है। पित्त ज्वर बारह दिन के पश्चात् और वात ज्वर २८ दिन के पश्चात् रहने से जीर्ण ज्वर का रूप धारण धारण कर लेता है। कफ ज्वर २१ दिन के पश्चात् जीर्ण ज्वर अर्थात् पुराना बुखार

कहलाता है । जीर्ण ज्वर में उपवास नहीं कराना चाहिये । जीर्ण ज्वर के रोगी को गौ का दूध हितकर होता है ।

गाय के दूध का प्रयोग

पीपल बड़ा पाँच, गौवों का दूध १ पाव वा अधिक जितना भी रोगी को पच जाये । दूध में पाँच पिपली डालकर खूब उबालें, पीपलों के कोमल (नरम) होने पर उतार लें । पीपल निकाल कर इच्छानुसार थोड़ी मिश्री मिलाकर गर्म वा शीतल कर के पी लेवें । अगले दिन तीन पीपल अधिक डालें अर्थात् प्रतिदिन आठ दिन तक तीन-तीन पीपल बढ़ाते जायें । और आठ दिन के पाछे तीन-तीन पीपल घटाते जायें । फिर सातवें दिन पाँच पीपलों पर आ जायें । यह पीपल के साथ दुग्ध कल्प है यह १५ दिन का होता है इसे आयुर्वेद की भाषा में वर्द्धमान पिप्पली कहते हैं । आयुर्वेद की यह बहुत ही विचित्र औषध वा चिकित्सा हैं । इसके प्रयोग से पुराने से पुराना ज्वर खांसी मन्दाग्नि सब दूर हो जाते हैं । इससे भूख खूब बढ़ती है । यदि (पिप्पली) पीपल निकाल कर खालें तो अधिक लाभ होता है । किन्तु जो शहरी ढंग के लोग (नाजुक मिजाज के) होते हैं, वे पीपल न खावें, केवल, दूध ही पीवें किन्तु पीपल खाने से बहुत अधिक लाभ होता है । यह वर्द्धमान पिप्पली का दूध का कल्प दिव्य औषध हैं । दूध इच्छा और पाचन शक्ति के अनुसार बढ़ा लेना चाहिये ।

दूसरा प्रयोग—दूध में १० पीपल डाल कर उबाल लें । केवल दूध में ही मिश्री डालकर पीवें, मिश्री न खावें । प्रतिदिन १० पीपल बढ़ालें यह दस रोज तक बढ़ाते जायें । १० दिन पश्चात् घटाना आरम्भ कर देवें । २० दिन करके छोड़ देवें । इस प्रयोग से भा जीर्ण ज्वर खांसी तिल्ली और यकृत् दोष सब दूर हो जाते हैं ।

पाँचमूली क्षार—शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कण्टकारी छोटा, कण्टकारी बड़ी, गोखरू प्रत्येक ६-६ माशे लेकर अधकुटी (जौकुट) करके गाय के १ पाव दूध और इसमें एक सेर जल मिलाकर उबालें । जब केवल दूध रह जाये, जल सर्वथा जल जाये, तो उसे छान लें । मिश्री वा शहद डालकर प्रातः सायं पिलायें तो यह दूध प्रत्येक प्रकार के जीर्ण (पुराने) ज्वर के लिये अत्यन्त हितकर औषध है । इस के प्रयोग से पुराने बुखार समूल नष्ट हो जाते हैं ।

सितावरी क्षीर—खांड, घी, सोंठ द्राक्षा वा मुनक्का वीज रहित, छुहारे सव वस्तुयें मिलाकर २।। तोले, जल २० तोले, गाय का दूध २० तोले, सबको उवालें। जब केवल दूध रह जाये, उतार कर छान लें। ठण्डा कर के इस में तीन माशे शहद मिलाकर रोगी को पिलायें। इससे पुराना ज्वर, खांसी अधिक प्यास दाह आदि सव नष्ट हो जाते हैं। इसे कुछ दिन निरन्तर रोगी को पिलाना चाहिये। ऊपर लिखे प्रयोगों से जीर्ण ज्वरादि रोगों में वहुत ही लाभ होता है। ये दूध के कल्प औषध वाले लिखे हैं। इनका पाठक प्रयोग करें और लाभ उठायें। इन दिनों केवल ये लिखी हुई दूध वाली औषध ही लें और कोई भोजन न लें। किसी फल का रस भी लिया जा सकता है जो रोगी के रोग के अनुसार अनुकूल हो।

श्वास दमा

शास्त्रों में गो दुग्ध को श्वास, कास, अतिश्याय की औषध लिखा है। यह वात वहुत से लोगों को वहुत आश्चर्यजनक वा उल्टी ही लगेगी। क्योंकि उनका ज्ञान वा अनुभव यह है कि दूध, दही, घी के प्रयोग से जुकाम, खांसी, दमा सभी वढ़ते हैं। किन्तु दुग्ध-कल्प के साथ यह है कि जव रोगी दूध पर ही रहता है। तो पाँच वा ६ सेर दूध प्रतिदिन लिया जाता है। कल्प के विषय में अनुभव यह वताता है कि जव दुग्ध कल्प करने वाला व्यक्ति प्रतिदिन ३ सेर दूध लेता है तो लेने वाले का भार स्थिर (कायम) रहता है। चार सेर से अधिक दूध प्रतिदिन लिया जाय तो दूध रोग को धोकर शरीर से निकाल देता है अर्थात् समूल नष्ट कर देता है। गो दुग्ध का ही कल्प होता है। क्योंकि गोदुग्ध सर्व रोगों के नाश करने में क्षम्य वा समर्थ है। जब खांसी, जुकाम, दमा उत्पन्न होता है तो उस समय जुकाम का प्रभाव नाक, गले, फेफड़ों और आमाशय पर पड़ता है। एवं आँतों की श्लैष्मिक कलायें सशक्त होने लगती है। अपने को नीरोग कर पाती हैं। इस प्रकार श्लैष्मिक कला सम्वन्धी (कफ) दमा हो वा कोई अन्य रोग चार पाँच सप्ताह में गोदुग्ध के प्रयोग से सरलता से दूर हो जाता है।

१. खांसी—गाय वा वकरी के धारोष्ण दूध में मिश्री मिलाकर प्रातः सायं पीवें। यह पित्त गर्मी की खांसी के लिए अमृत समान औषध है।

२. पित्त प्रकृति(गर्मतासीर)वाले वच्चों को काली खांसी हो तो काली वकरी

का धारोष्ण दूध मिश्री मिलाकर दो वार प्रातः सायं वच्चे को पिलावें। इससे काली खांसी निश्चय से हट जाती है।

३. गाय का दूध शुद्ध १/२ पाव, शुद्ध गो घृत ६ माशे, जल १/२ पाव तीनों को मिलाकर उवालें, जव पानी जल जाये, केवल दूध शेष रहे तो इसमें २ तोले मिश्री मिलाकर थोड़ा पिलावें इससे भी काली खांसी दूर हो जाती है।

४. श्री चन्द्रामृत-रस—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक प्रत्येक एक तोला, सुहागा सफ़ेद भुना हुआ ४ तोले, काली मिर्च २ तोले, त्रिकुटा, त्रिफला, धनिया, काला जीरा, सैंधा लवण प्रत्येक-एक-एक तोला लें। पहले पारा गन्धक की १२ घन्टे तक रगड़ कर खरल में कजली कर लेवें। दूसरी औषध को कूटछान सुर्मे के समान वारीक कर लें फिर वकरी के दूध में खरल करके चार-चार रत्ती की गोलियाँ वनायें। प्रातः सायं इनके प्रयोग से प्रत्येक प्रकार की खांसी दूर होती है।

५. कासगंज केसरी वटी—थोहर के पत्तों का रस सेंक कर १ पाव निकाल लें। इसी प्रकार आक के पत्तों का रस सेंक कर एक पाव निकाल लें। काले धतूरे के पत्तों का रस १ पाव, वासे के पत्तों का रस १ पाव इन सवको मिलाकर १ सेर गाय के ताजा शुद्ध दूध में सवको मिला लें, नरम-नरम आग पर पकायें जव गाढ़ा हो जाए तो निम्नलिखित औषधों का चूर्ण मिला लें। पीपल वड़ा, लवंग, सुहागा सफ़ेद भुना हुआ, इलायची छोटी, सोंठ, अहिफ़ेन (अफीम) प्रत्येक एक-एक तोला। सवको वारीक पीसकर क्वाथ के खूव गाढ़ा होने पर नीचे उतार ऊपर लिखी औषधियों को वारीक कपड़छान करके मिला लें और चने के समान गोलियां वना लें। एक-एक गोली प्रातः सायं जल के साथ सेवन करने से सर्व प्रकार की खांसी समाप्त हो जाती है। ये गोलियां दमे के लिए भी रामवाणऔषध हैं अर्थात् कास और श्वास को समूल नष्ट करती है।

संग्रहणी और दूध—जव संग्रहणी का रोग पुराना हो जाता है तो वह कष्ट साध्य होता है। ऐसी अवस्था में चतुर वैद्य इस प्रकार की औषधियों का रोगी को सेवन कराते हैं, जिनके प्रयोग में भोजन के रूप में केवल दूध ही लिया जाता है। दूध को वढ़ाते-वढ़ाते १० सेर से २० सेर तक एक दिन में रोगी के देने लगते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि रोगी दिन भर अधिक से अधिक २० सेर दूध पचाने लगता है। देखने वाले भी आश्चर्य में पड़ जाते हैं। मूर्ख लोग ऐसे वैद्यों के विषय

में ऐसी भ्रम की बातें फैलाने लगते हैं कि इस वैद्य के पास कोई जादू वा मन्त्र है वा इसने कोई भूत वश में कर रखा है। जिसके कारण रोगी इतना अधिक दूध पी जाता है नहीं तो रोगी की क्या शक्ति है कि वह इतना अधिक दूध पीकर पचा सके। मैं अपने पाठकों को यह बताना चाहता हूं कि यह कोई जादू, मन्त्र या भूत का प्रभाव नहीं किन्तु यह तो आयुर्वेद की प्रभावशाली दिव्य औषध का ही गुण है संग्रहणी जैसे भयंकर रोग में फंसे हुए रोगी जो एक दो घूंट भी दूध पचाने की शक्ति नहीं रखता। इन अद्वितीय औषधियों के प्रभाव से सेरों दूध पचाने लगता है ऐसी जादू के समान प्रभावशाली औषध नीचे लिखी जाती है।

१. **दुग्धवटी**—अफीम शुद्ध ३ माशे, मीठा तेलिया ३ माशे, शुद्ध लौह भस्म १० रत्ती, कृष्णाभ्रक भस्म डेढ़ माशा इन सबको गाय के दूध के साथ खरल करें और एक-एक रत्ती की गोलियां बनायें। एक गोली प्रातः काल एक गोली सायंकाल गाय के दूध के साथ खिलायें। दिन में अधिक से अधिक चार गोलियां दे सकते हैं। दूध की मात्रा शनैः शनैः बढ़ती जायें जैसे पहिले दिन भर में आधा सेर दूध लें, दूसरे दिन ढाई पाव, तीसरे दिन तीन पाव इस प्रकार आधा पाव प्रतिदिन बढ़ाते जायें। दूध से अतिरिक्त कोई वस्तु खाने या पीने को न दें। भूख लगे तो भी दूध, प्यास लगे तो भी दूध और औषध के साथ भी दूध लेवें। इस प्रकार से प्रत्येक प्रकार की संग्रहणी को सर्वथा समूल नष्ट कर देती हैं।

दूसरी दुग्धवटी—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मीठा तैलिया, कृष्णभ्राक भस्म ताम्र भस्म, लौह भस्म, शुद्ध हरताल वर्किया, शुद्ध सिंगरफ, संखिया सफेद, शुद्ध अफीम इन सबको बराबर ले लें। पारा गन्धक की कजली बनायें और अन्य सब औषधियों को कपड़छान करके कजली में मिला लें और गाय के दूध के साथ तीन चार रोज तक खरल करें। आधी-आधी रत्ती की गोलियां बनायें यह संग्रहणी रोग की अद्वितीय औषध है। इसके प्रयोग करने वाला २० या २५ सेर दूध प्रति-दिन पी सकता है।

मात्रा—१ गोली प्रातः वा सायं गाय के दूध के साथ देवें। भोजन और जल के स्थान पर भी दूध का ही प्रयोग करें। इसी प्रकार गाय के तक्र वा छाछ से भी भयंकर संग्रहणी रोग का चिकित्सा होती है। इसकी चर्चा तक्र के प्रकरण में की जायेगी।

दुग्ध कल्प

जिस रोगी को दुग्ध-कल्प कराना हो उसके पेट और आंतों की शुद्धि आवश्यक है। क्योंकि जब तक आंतों की शुद्धि न हो और वहां पड़ा हुआ मल बाहर न निकले, तब तक जठराग्नि पुनः जागृत नहीं होती और भूख नहीं लगती। बिना भूख लगे दूध पी लिया जाय तो रोगी को कोई लाभ नहीं होता। दूध को कल्प कराने से पूर्व रोगी को तेज भूख लगनी चाहिए। यहा दुग्ध-कल्प की तैयारी होती है।

आयुर्वेद के शास्त्रों में पुराणे रोगी को, जिसका रोग जाने का नाम न लेता हो, चतुर वैद्य पञ्चकर्म कराते थे। इसमें स्नेहन स्वेदन, वमन, विरेचन और वस्ति कर्म कराये जाते हैं। जिससे रोगी के शरीर का पूर्ण रूपेण संशोधन हो जाता है। किन्तु ये पञ्चकर्म रोगी की शारीरिक अवस्था, देश और काल को देखकर कराये जाते हैं। ये पञ्चकर्म जटिल रोगों कष्ट-साध्य और सरलता से समझ में न आने वाले रोगों को दूर करने के लिए कराये जाते हैं। जिन रोगों को असाध्य कहकर डाक्टर चिकित्सा नहीं करते वा नहीं कर सकते, ऐसे रोगों को पञ्चकर्म करने के पश्चात् चिकित्सा करने से समूल नष्ट करने में चतुर वैद्य सफल होते हैं जैसे—श्वास, यक्ष्मा, उदर-सम्बन्धी यकृत्, तिल्ली, जलोदरादि आंतों के रोगों को पञ्चकर्मों के द्वारा सर्वथा शरीर से बाहर निकाल दिया जाता है। आजकल के आधुनिक अभिमानी डाक्टर जिन क्रियाओं को अपनी नई ईजाद बताते हैं वे स्टीम बाथ (भाप के द्वारा स्नान वा सेक करना) अनीमा (पिचकारी) वस्ति इत्यादि वस्तुतः बहुत पुराने हैं। आप यह जानकर आश्चर्य चकित होंगे कि ये सहस्रों वर्ष पूर्व ही आयुर्वेद के ग्रन्थों में विद्यमान हैं और वैद्य लोग आज तक परम्परा से निरन्तर इनको करते चले आते हैं। इन पञ्चकर्मों में प्रथम स्नेह कर्म है।

स्नेह कर्म

मानव देह के विजातीय मल और रोगों को दूर करने के लिए दो प्रकार हैं।

संशोधन और शमन। औषध और क्रियाओं द्वारा इकट्ठे हुए मल को वाहर निकालने का नाम संशोधन है और औषध सेवन से मल को वहीं पकाकर नष्ट कर देने का नाम शमन है। समय के अनुसार दोनों लाभदायक हैं। किन्तु संशोधन का प्रकार शमन से श्रेष्ठतर है। क्योंकि संशोधन रोग का मल वाहर निकाल कर समूल नष्ट करता है। शमन से रोग दवाया जाता है और कभी भी ऊपर उभर कर पुनः रोगी को कष्ट दे सकता है। संशोधन के लिए स्नेहन करना पहले आवश्यक है। स्नेहन का अर्थ है चिकना करना। जो मल शरीर में वहुत समय से इकट्ठा हो रहा है जिसकी तह पर तह जमी हुई है उनको स्नेहन (चिकना) करने से वे जमे हुए मल ढीले हो जाते हैं। यह स्नेहन कर्म, गाय के दूध, घी तथा तिल के तैल और अरण्डी के तैल (कस्ट्रायल) द्वारा किया जाता है। इस स्नेह कर्म से जमा हुआ मल चिकनाई से ढीला होकर सरलता से वाहर निकलने योग्य हो जाता है और पाचन शक्ति जागकर स्थिर हो जाती है। शरीर के जोड़ चिकनाई पहुँचने से सर्वथा मशीन के पुर्जों के समान जंग उतरने की भांति अधिक समय तक कार्य करने योग्य हो जाते हैं।

गोघृत पित्त नाशक होता है। जिन लोगों को पित्त वा गर्मी के रोग हों उनको गो-घृत का प्रयोग करना चाहिए और जिनको वायु के रोग हों उनको सैंधा लवण मिलाकर घी का प्रयोग करना चाहिए। यदि किसी को कफ के रोग कास, दमा, श्वास रोग हों (उन्हें त्रिकुटा, पीपल वड़ा, सौंठ, काली मिर्च) और यवक्षार मिलाकर घृत का प्रयोग करना चाहिए। जिस रोगी का वायु और पित्त दोनों एक साथ कुपित हों, जिनकी स्मरण शक्ति निर्वल हो गई हो, जिन्हें कोई विप दे दिया हो, ऐसे रोगियों को विशेष रूप से गो-घृत का प्रयोग करना चाहिए शीत काल में घृत, वर्षा ऋतु में तिल का तैल, वसन्त ऋतु में वादाम रोगन का प्रयोग करना चाहिए।

जव आकाश साफ हो, अधिक सर्दी न पड़ती हो, तव स्नेहन कराना अच्छा होता है। रोग भयंकर हो और वढ़ने की संभावना हो तो फिर ऋतु काल कुछ न देखें, स्नेहन कर्म तुरन्त करवा दें। शीतकाल में चिकनाई का प्रयोग दिन में और गर्मियों में रात्रि को करायें। वात-पित्त के रोगी को दिन के समय स्नेहन कर्म कराएँ। चिकनाई की मात्रा ४ तोले उत्तम मात्रा, ३ तोला मध्यमा मात्रा और

दो तोला जघन्या मात्रा कहलाती है। यह मात्रा छः घन्टे से लेकर २४ घण्टे तक, में पचती है। निर्बल रोगियों को २ तोले, मध्यम-पाचन-शक्ति वाले को चार तोले और उत्तम पाचन-शक्ति वाले को छः छः तोला घृत आदि स्नेहन कर्म में देना चाहिए। जिनकी पाचन-शक्ति खूब तीव्र हो, कुष्ठ, मृगी और पागलपन आदि के रोगी को ६ तोले घृत आदि की चिकनाई देनी चाहिए। मात्रा पहले दो-दो तोले से आरम्भ करनी चाहिए फिर प्रतिदिन बढ़ाते जाएँ। रोग तथा पाचन-शक्ति का ध्यान रखें घृत व तैल की मात्रा प्रयोग करने के पश्चात् कुछ अच्छा गर्म किया हुआ जल प्यास लगने पर गर्मागर्म १ पाव पी लेना चाहिए अथवा अच्छे गर्म जल में घी की चिकनाई मिलाकर पीनी चाहिए। तैल की चिकनाई किन्हीं उपयुक्त औषधियों के क्वाथ में मिलाकर पीनी चाहिए। बादाम रोगन आदि का प्रयोग पुराने चावलों की पीछ (धोवन) वा मांड में कराएँ।

वैद्य को यह ध्यान रखना चाहिए कि जब स्नेह पच जाए तो रोगी को प्यास लगती है, जलन होती है, उत्साह बढ़ता है, किसी-किसी को अरुचि होती है। यदि यह थोड़ी देर में समाप्त हो जाए और शरीर हल्का हो जाए उस समय रोगी को गर्म जल पिलाना चाहिए। यदि उष्ण जल पिलाने पर डकार साफ आने लगे तो समझें चिकनाई पच चुकी है। स्नेह पचने के पश्चात् जौ वा मूंग को उबाल कर निकाला हुआ जल नरम-नरम खिचड़ी में घृत डालकर खिलाएँ। थोड़ा थोड़ा गरम जल पिलायें। रोगी ब्रह्मचर्य का पालन करे, साफ-सुथरे स्थान पर रहे, दिन में न सोए, मल-मूत्रादि के वेगों को धारण न करे। काम, क्रोध, शोक, चिन्ता, लोभ, मोह, जलन आदि न करे, सवारी पर न चढ़े। जब स्नेहन-कर्म अच्छा हो जायेगा तो अपान वायु (पाद) अच्छी प्रकार से निकलने लगेगा, पाचन-शक्ति अच्छी और तेज हो जाएगी, यही इसकी पहचान है। चिकनी डकारें आएँ मल-टट्टी में चिकनाई आये। चिकनाई पीने से टट्टी में घृत आता हो तो अच्छी प्रकार से स्नेह कर्म हो गया यह, समझना चाहिए। चिकनाई अधिक होने पर गर्म पानी पिलाना चाहिए। अधिक चिकनाई से कोई पेट में पीड़ा पेचिश जलन आदि विकार हों वे शांत हो जायेंगे। औषधि देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

स्नेहन कर्म

जो व्यक्ति घी वा तैल न पी सकें जो कोमल प्रकृति वाले हों अथवा

वालकों को खिचड़ी, खीर, चावल, दाल आदि खाने की वस्तुओं में मिला कर वा उनके साथ सेवन करायें। वढ़िया चावल दो वा चार तोले लेवें और घी २ तोले, जल आवश्यकतानुसार डालकर पका लेवें और यथेच्छा मीठा मिला कर खिलायें। पुराने चावल ४ तोले, मूंग की दाल ४ तोले की खिचड़ी वनाकर खायें और पकते समय इसी में घी डाल लें। एक बड़े गिलास में मिश्री वा घी अपनी शक्ति के अनुसार डाल कर पात्र पर वड़ा वस्त्र रख लें। इसमें गाय का दूध दुह लें, इसे धरोष्ण (गर्मागर्म) पी लें। इस प्रकार कोमल प्रकृति वालों को स्नेहन कराया जाता है।

स्वेद—कर्म

स्नेह क्रिया के पश्चात् द्वितीय कर्म स्वेद-कर्म (पसीना निकालना) का किया जाता है। तब दो कार्य होते हैं। पहला गन्दा मल जो वर्षों से शरीर के भीतर त्वचा के साथ किसी भी भाग में इकट्ठा होता है वह सारा दूषित मल पसीने के साथ शरीर से बाहर निकल जाता है। और किसी भी प्रकार से यह दूर नहीं हो सकता। पसीना निकालने के अनेक प्रकार हैं। गर्म ईंट, धातु का गर्म पात्र, उष्ण वालू रेत वा किसी औषध से सेंक कर शरीर के भागों से पसीना निकालते हैं। पहले ऊपर लिखे किसी वस्तु को अग्नि पर गर्म करते हैं फिर शरीर को वा शरीर के भाग को सेक कर या किसी औषध का क्वाथ तैय्यार करके भाप देकर पसीना निकालते हैं। भूमि में गड्ढा खोद कर आग जलाकर उसे गर्म करते हैं फिर उसमें यथेच्छ आक और एरंड के पत्ते भर देते हैं। उस में रोगी को लिटा कर पसीना निकालते हैं। रवड़ की वोतल में गर्म पानी भर कर शरीर के भाग को सेक कर भी पसीना निकालने की क्रिया की जाती है। औषध खिला कर वस्त्र उढ़ा कर भी रोगी को पसीना दिलाते हैं। जैसा भी आवश्यक हो वैद्य के परामर्श से पसीना दिलाना चाहिये। किसी अनाड़ी चिकित्सक से पसीना न दिलायें। कई वार रोगी पसीना दिलाते समय वैद्य की मूर्खता से जल कर ही मर जाते हैं।

दूध, घी का क्वाथ बनाकर भी रोगी को उस क्वाथ में बिठाकर और सिर पर घी दूध के क्वाथ की धारा डालकर भी पसीना दिलाते हैं ये सब

क्रियायें किसी अच्छे वैद्य के संरक्षण और परामर्श से करनी चाहियें। इस प्रकार स्वेदन कर्म से वायु, पित्त और कफ के असाध्य समझे जाने वाले रोग भी चले जाते हैं।

वमन

स्नेह और स्वेदन के पीछे औषध पिला कर वमन करायें। ऊपर का सफाई करा दें। प्रकृति, रोग, शक्ति को देख कर ही वमन करवाया जाये या किसी वैद्य के परामर्श से करायें। दो चार दिन ठहर कर विरेचन जुलाब देनी चाहिये। विरेचन भी अच्छे वैद्य द्वारा करवाना चाहिये। हरड़ आदि बहुत सी औषध विरेचन के लिए होती हैं।

वस्ति, अनीमा एवं पिचकारी द्वारा शरीर की शुद्धि करने के लिए महर्षि चरक ने १२ अध्याय लिखे हैं। आजकल अनीमा करने के अच्छे यन्त्र बने हैं। उनका प्रयोग करना चाहियें। इस प्रकार ये सब पञ्च कर्म किसी अच्छे वैद्य की देख रेख वा उसके परामर्श से करने चाहियें। ये पञ्च कर्म अनेक रोगियों पर मैंने दमा, शीत पित्त आदि रोगों की निवृत्ति हेतु किये हैं। बहुत लाभ होता है। किन्तु सावधानी के बिना हानि होने की संभावना रहती है। अतः सावधानी की आवश्यकता तो चिकित्सा कार्य में सदैव रहती है। ये पांच कर्म करने के पीछे यदि दुग्ध का कल्प किया जाय तो सोने पर सुहागे का कार्य करता है।

किस रोगी को कब और कितनी मात्रा में पञ्च कर्म कराना चाहिये यह चतुर वैद्य से परामर्श करना चाहिये।

अब दुग्ध कल्प की पुनः चर्चा करता हूं। प्राकृतिक चिकित्सा करने वाले कल्प कराने से पूर्व तीन दिन से लेकर १५ दिन तक उपवास कराते हैं। वे रसाहार व फलाहार पर रखते हैं। इन सब का उद्देश्य केवल आँतों व पेट को आराम देना और शरीर की शुद्धि करना ही है। शरीर की शुद्धि होने पर दुग्ध कल्प कराया जाता है। उपवास करना निर्बल शरीर वा निर्बल मन वाले व्यक्ति के वश की बात नहीं उपवास कराते समय केवल जल ही पिलाते हैं। अथवा पानी में सन्तरा, अनानास और टमाटर का रस मिलाकर पिलाते हैं। जो रसाहार पर रहें, वे तीन पाव वा १ सेर तक फलों और सब्जियों का रस

दिन भर में ले सकते हैं। इसी प्रकार तीन वा पाँच दिन का उपवास (रसाहार) घर पर रह कर भी कर सकते हैं किसी को अधिक दिन का उपवास आदि करना हो तो वह किसी विशेषज्ञ की देख रेख में करे। किसी को फलाहार पर रहना हो तो दो तीन सप्ताह तक स्वयं कर सकते हैं। केवल जानने की बात यह है कि फलाहार केवल दिन में तीन वार करना चाहिये।

इसके लिए संतरा, मौसमी, अनानास, रसभरी, अंगूर, सेब, नासपाती, खरबूजा, पपीता, खीरा, और ककड़ी के समान रसदार ही फल होने चाहियें। एक वार में एक ही प्रकार का फल खाना चाहिये। सारे दिन में तीन वार में मिलाकर डेढ़ सेर से अधिक फल नहीं खाने चाहिये। इन दिनों में प्राकृतिक चिकित्सा करने वाले दिन में एक वार थोड़े गर्म (गुनगुने) जल का अनीमा अवश्य देते हैं। इसे वे आवश्यक मानते हैं। इस प्रकार शुद्धि सफाई करने के पश्चात् दुग्ध का कल्प करते हैं।

दुग्ध कल्प का विधि

दुग्ध का कल्प करते समय सामान्य लोग दिन रात में सात-आठ सेर दूध लेते हैं। दुग्ध कल्प के विशेषज्ञों का यह कहना है कि जो व्यक्ति जितने फुट का का लम्बा होता है उसे उतने ही सेर दूध पीना चाहिये। किन्तु किसी को भूख अधिक लगे तो वह इसकी मात्रा बढ़ा सकता है। जैसे कोई व्यक्ति ५ फुट का है वह पाँच किलो से लेकर सवा ६ किलो तक दूध का सेवन कर सकता है। किन्तु यह देखने में आता है कि समान लम्बाई होने पर पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां तीन चौथाई ही दूध पीती हैं। लड़के-लड़कियों के लिए भी इसी हिसाब से समझना चाहिए। पर स्त्री हो या पुरुष संग्रहणी, आँव, पुराने ज्वर, अग्नि मांद्य और हर समय रहने वाले हल्के ज्वर की अवस्था में दूध की यह मात्रा पूरी-पूरी नहीं पहुँच पाती। कुछ लोग मात्रा से आधे तक और अधिकतर लोग मात्रा से तीन चौथाई तक पहुँच पाते हैं। इससे घबराना नहीं चाहिए। दूध वा तक्र चाहे मात्रा से थोड़ा पीया जाये फिर भी वह अपना अमृत रूपी प्रभाव रोगी पर अवश्य डालता है। दुग्ध कल्प के समय सम्भव है रोगी का भार कम वड़े, किन्तु रोग के दूर होने पर सामान्य भोजन से ही उसका भार शीघ्र ही पूरा हो जाता है।

दूध पीने का विधि

रोगी को दूध वहुत धीरे धीरे पीना चाहिए। १ पाव दूध पीने में न्यून से न्यून पाँच मिनट लगाने चाहियें। दूध को चूस-चूस कर और स्वाद लेकर पीने से अधिक लाभ होता है। दुग्ध कल्प का सामान्य नियम यही है कि जिन व्यक्तियों ने तीन चार दिन का उपवास, रसाहार वा आठ दिन का फलाहार किया हो वे पहले दिन दो-दो घण्टे के पश्चात् १-१ पाव दूध पीयें। जिसने अधिक लम्वा उपवास किया हो वे दो-तीन दिन फलों के रस पर ही रहें। जिसने रसाहार किया हो तो वह दुग्ध कल्प के पहले दिन दूध में पानी मिला कर पीयें। दूसरे दिन केवल दूध का ग्रहण करें। दूध की मात्रा १ पाव होनी चाहिए। तीसरे दिन पौने दो-दो घन्टे के अन्तर पर दूध लेवें। चौथे दिन डेढ़-दो घण्टे के पश्चात् पाँचवें दिन सवा घण्टे के पीछे और छठे दिन एक घण्टे पर पाव-पाव भर दूध का ग्रहण करें। सातवें दिन दूध ५५ मिनट पर पीयें।

फिर प्रतिदिन इस समय में पाँच मिनट की कमी करते जायें जव आध-आध घण्टे पर पाव-पाव भर दूध पीने लग जाये तो आवश्यक यही है कि दूध इसी मात्रा में तेजी से वढ़ाया जाये। यदि पेट में अधिक वायु होता हो तो दूध न वढ़ायें। एक-दो दिन रुक कर तीसरे चौथे दिन ही दूध वढ़ाना चाहिए। तेज भूख का लगना, पेशाव खूव होना, पेट में वायु का विकार न होना वा कम से कम होना और शौच कड़ा होना ये दूध वढ़ाने के लिए अच्छे लक्षण हैं। ये आध घण्टे का क्रम पाँच छह सप्ताह तक चलना चाहिए। सात-आठ सप्ताह भी चल सकता है। किन्तु देखने में यही आता है कि सातवें सप्ताह या इससे कुछ पहले भी दूध का कल्प करने वालों को दूध से अरुचि होने लगती है। उनके लिए आगे दूध पीना कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्था होने पर दुग्ध का कल्प समाप्त कर देना चाहिये।

जिस दिन दुग्ध कल्प की समाप्ति करनी हो उस दिन दोपहर के एक या दो वजे तक दुग्ध ही पीना चाहिए। शाम को पहले दिन सन्तरे के समान कोई रसदार फल खायें। इच्छा हो तो दोपहर से सायंकाल तक वीच में एक दो पाव दूध पिया जा सकता है। प्यास लगने पर जल अवश्य पीना चाहिये। नित्य सवेरे शौच जाने से पूर्व जल पीना सदैव हितकारी है। दूसरे दिन सन्तरे के स्थान

पर सेव के समान ठोस फल खायें। तीसरे दिन फलों के साथ किसी हरी उवली हुई शाकभाजी का सेवन करें। चौथे दिन इसके साथ एक फुल्का ले लें। जिस समय फुल्का लें उस समय दूध नहीं लेना चाहिए। चौथे पाँचवे दिन यही भोजन क्रम चलायें। छठे दिन साधारण भोजन पर आ जायें। यदि किसी की इच्छा हो, उन्हें कोई कमी प्रतीत न होती हो, दोपहर को दूध शाम को रोटी सब्जी के क्रम को अपनी इच्छानुार दो तीन सप्ताह वा महीनें भर तक चलाया जा सकता है इस से लाभ ही होता है।

साधारण भोजन दिन में तीन वार से अधिक नहीं करना चाहिये। वीच-बीच में कुछ का कुछ खाते रहना और वकरी के समान मुख चलाते रहना वहुत हानिकारक है। इससे पाचन शक्ति को आराम नहीं मिलता, वह धीरे-धीरे विगड़ती जाती है और उसकी शक्ति घट जाती है। दुग्ध कल्प ही वह समय है जब सवेरे से शाम तक दूध पीने की क्रिया चलती रहती है और जब दूध पीया जाता है तब उसमें एक पाचक रस तैय्यार हो जाता है। जिसके कारण जल और दूध यह पेट में जाता तव वह उसे पचाने में सहायता करता है। यह क्रिया दिन भर चलती रहती है और पाचन शक्ति पर बार-बार पीये गये दूध को पचाने का वहुत थोड़ा भार पड़ता है। इसीलिए दुग्ध कल्प के समय किसी विशेष अवस्था को छोड़ कर कोई भी अन्य भोज्य पदार्थ लेना सर्वथा मना है। अतः पेट को भोजन पचाने के पश्चात् उचित विश्राम मिल जाये इसके लिये एक वार खाने के पीछे ५ घण्टे तक कुछ न खाना चाहिए। इसी प्रकार प्रातः दो पहर, सायंकाल तीन ही वार भोजन करना लाभप्रद है। इन तीन समयों में अच्छा हो प्रातः और सायं दो समय दूध का अवश्य सेवन करें। उसके साथ कुछ फल भी लिये जा सकते हैं। दोपहर वूर (चोकर) समेत आटे की रोटी और कण समेत चावल और हरी शाक सब्जी पर्याप्त मात्रा में खानी चाहिये। खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली, पालक, वथुआ, आदि कुछ कच्ची शाक सब्जियां भी खा लेनी चाहियें। इन सब्जियों को पतला-पतला काटें। कुल मिलाकर एक युवा व्यक्ति को पावभर की मात्रा में अवश्य खा लेना चाहिये। कच्ची सब्जियों में जीवन तत्त्व (विटामिन) और लवण सुरक्षित रहते हैं। ये हमें रोग से बचाते हैं। इस भोजन के साथ थोड़ा घी व मक्खन भी होना चाहिए यदि भूख खू

तेज लगती हो तो दूध व दही कुछ मात्रा में साथ ली जा सकती है। मक्खन घी की मात्रा भी बढ़ाई जा सकती है। यह सब भूख और पाचन शक्ति पर निर्भर है जितना पचे उतना ही खाना चाहिए। दाल जहाँ शक्तिशाली है वहाँ कठिनाई से पचती और वायुकारक भी है। जिसे अनुकूल न पड़े वा न पचे वा हानि करे वह दाल न लेवे। ऋतु के अनुकूल हरे चने व हरी मटर अवश्य खानी चाहिए।

दुग्ध-कल्प में उपद्रव

जब कोई व्यक्ति दुग्ध-कल्प करता है तो दुर्भाग्य वश कुछ उपद्रव खड़े हो जाते हैं। कोमल प्रकृति, चटोरे और शहर वालों का प्रायः जी मिचलने लगता है। अथवा दूध से थोड़ी सी अरुचि सी होती है। इसके लिए नींबू बहुत ही लाभप्रद सिद्ध होता है। मिचली व अरुचि होने पर बीच-बीच में दस-बीस बूदें नींबू के रस की चूस लेनी चाहिए।

कुछ लोगों के दाँतों में पीड़ा होने लगती है। मसूड़े फूल जाते हैं। यह कष्ट प्रायः उन्हीं लोगों को होते हैं जो दाँतों वा मुख की शुद्धि दातुन, मंजन द्वारा नहीं करते। दूध पीने के दिनों में प्रातः और सायं दोनों समय दातुन वा मंजन कर लेना चाहिए। यदि मसूड़ों में पाड़ा हो तो थोड़ी हल्दी और नमक सरसों के तैल में मिलाकर दाँतों पर अच्छी प्रकार मल लेना चाहिए। फिर गर्म जल से पहले कुल्ला करें तथा पीछे ठण्डे पानी से कुल्ला कर लें। इस प्रकार पानी से तीन चार वार कुल्ले कर लें। जैसे प्रथम गर्म जल से एक मिनट तक कुल्ला करें और फिर १।२मिनट तक शीतल जल से कुल्ला करें। इस क्रम को तीन चार वार दोहराना चाहिए, इससे मसूड़ों और दाँतों का कष्ट वा पीड़ा हट जायेगी। कुछ रोगियों को जिनके विचार शुद्ध नहीं होते, उनको दूध पीना आरम्भ करने पर स्वप्नदोष का विकार बढ़ जाता है। स्वप्नदोष से हानि तो अवश्य होती है। पर दुग्ध कल्प से जो शक्ति बढ़ती है उसके सन्मुख यह हानि अपेक्षाकृत थोड़ी है। स्वप्नदोष से बचने के लिए यथाशक्ति व्यायाम और प्राणायाम करना चाहिए। साथ ही एक सावधानी यह भी करनी चाहिए कि सोने से तीन घण्टे पूर्व दूध पी लेना चाहिए। कभी-कभी किसी रोगी के शरीर में पीड़ा वा दर्द उत्पन्न हो जाता है। वह कुछ घण्टों वा एक दो दिन से

अधिक नहीं रहता। इसके लिए गर्म जल से सेंक वा स्नान से लाभ हो जाता है॥

यदि किसी को दूध पीते हुए ज्वर आ जाय तो दूध पीना बन्द करके एक आध दिन का उपवास कर लें और फिर दूध पीना आरम्भ कर दें। ज्वर चले जाने के पश्चात् एक दिन ठहरकर दूध पीना आरम्भ करें। प्रत्येक तीव्र रोग चाहे वह ज्वर हो या और कोई रोग हो उस की औषध उपवास ही है। ऐसे समय में खाकर नहीं अपितु उपवास करके ही शरीर की सहायता की जा सकती है। दुग्ध कल्प में किसी-किसी को कब्ज भी होता है और अधिकतर निर्बलों को तो हो ही जाता है। ऐसी अवस्था में वस्ति कर्म (एनीमा) सेर भर गर्म (गुनगुने) पानी से लेते रहें। दूध की मात्रा पूर्ण होने पर कब्ज न जाये तो प्रातःकाल दूध पीना आरम्भ करने से पूर्व संतरे का आध पाव रस पीना चाहिए। रस पान दूध से आधा घण्टा वा १ घण्टा पूर्व करें। फिर दूध की तीन चार मात्रा लेने के दस-दस मिनट पश्चात् प्रत्येक वार सन्तरे का एक-एक छटाँक रस लें। इस से कब्ज दूर होगा। यदि इतना करने पर भी कब्ज रहे तो दस बजे और चार बजे दूध की खुराकों को छोड़कर उसके स्थान पर संतरा, सेव, नासपाती शरीफा, बेल आदि, में से कोई एक फल पाव आध पाव भर की मात्रा में लेना चाहिए। फल और रस के झंझट से बचना हो तो सायंकाल जब अन्तिम बार दूध लेवें तो उसमें १ तोला पञ्चगव्य घृत मिलाकर कुछ गर्म-गर्म दूध पीवें इससे आँतों की रूक्षता (खुशकी) भी दूर होगी और कब्ज दूर होकर आँतें शक्तिशाली बनेंगी। कुछ लोग फलों के स्थान पर १ छटाँक किशमिश अंजीर वा मुनक्का भी लेते हैं। सूखे फल जब लेने हों तो उनको उनके भार से दुगुने जल में दस बारह घण्टे अवश्य भिगोना चाहिए। फलों के प्रयोग के पश्चात् भी कब्ज रहे तो रोगी को एनीमा ले लेना चाहिए और एनीमा के लिए पञ्चगव्य घृत से बढ़कर अच्छी और स्थायी रूप से रोग को समूल नष्ट करने वाली अन्य औषध नहीं है। ऋतु विशेषों में सन्तरा आदि फल नहीं मिलते और ग्रामों में तो अन्य-अन्य फलों का मिलना भी कठिन होता है। अतः कब्ज से न डर कर दूध लेते रहना चाहिए। कल्प का पूर्ण लाभ दूध साथ में अन्य कोई भोज्य पदार्थ फलादि न लेने से ही मिलता है। कुछ लोगों को तो दूध के साथ फल लेने से पाचनशक्ति में ही गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है। अतः फलों का उपयोग बहुत विचार कर ही करना चाहिए। जहाँ तक बन सके इसे टालना चाहिए।

दुग्ध कल्प में कब्ज रह सकता है। पर इस कल्प का अंतिम असर यह जरूर होता है कि इससे पुराने से पुराना कब्ज भी जाता रहता है। कल्प में रोज एनिमा लेना पड़े तो पाव सवा पाव ठंडे पानी का एनिमा काफी होगा। इस पानी को दस मिनट रोकना चाहिये।

कुछ लोगों को दूध पीते समय पतले दस्त आने लगते हैं। यह अक्सर उन्हें ही आते हैं, जिन्हें किसी न किसी प्रकार पुरानी संग्रहणी या आंव की शिकायत होती है। अन्य लोगों का दो-तीन दिन तक पेट चलकर बंद हो जाता है। टट्टी बंध जाती है और ठीक होने लगती है। टट्टी लगने पर दूध की मात्रा आधी कर देनी चाहिये, इससे अक्सर टट्टी बंद हो जाती है। फिर दूध धीरे-धीरे बढ़ाया जा सकता है। दूध कम करने पर भी काम न चले तो साधारणयता दो ढाई घंटे पश्चात् दूध की एक खुराक के साथ एक खजूर खाने से टट्टी बंद हो जाती है। यह खजूर धीरे-धीरे चुबलाकर (चबाकर) मुंह की लार के साथ मिलाकर खाना चाहिये। यदि फिर भी कोई सुधार न मालूम हो तो दूध की जगह मट्ठा लेने लग जाना चाहिये। मट्ठा भी वही लाभ पहुँचायेगा जो दूध पहुंचाता है। हाँ उब-लने से दूध के कुछ तत्त्व जल जाते हैं। उनकी पूर्ति के लिये मठ्ठा पीना समाप्त करने पर रोज शाम को संतरे या मौसमी का आध पाव रस पीना चाहिये या एक कागजी नींबू का रस चूसना चाहिये।

दूध पीते वक्त प्रायः सभी को अधिक पेशाब आता है। कई रोगी तो प्रत्येक आध घंटे पर पेशाब करने जाते हैं। पेशाब की अधिकता स्वाभाविक है। इससे डरने की जरूरत नहीं है कि गुर्दा खराब हो जायेगा। दुग्ध कल्प द्वारा कईयों के ऐसे गुर्दे सुधरे हैं जिनके लिये डाक्टर ने आपरेशन करना आवश्यक बताया था। ऐसे रोगी जिन्हें पहले गंदला, भारी, बदबूदार पेशाब होता है, उन्हें भी कल्प के दूसरे तीसरे दिन से पेशाब साफ होने लगता है। वह हल्का, पीला या करीब-करीब पानी के रंग सा बिना किसी बदबू के आने लगता है।

दुग्ध कल्प में कई रोगी रात को सोते समय पसीने से नहा उठते हैं। जिससे उन्हें अपने कपड़े बदलने की जरूरत पड़ जाती है। कई रोगियों के पसीने से, खास तौर से गठिया के रोगी के पसीने से बड़ी बदबू आती है। आरम्भ के तीन चार दिनों तक ऐसे रोगी का कमरा बदबू से भरा रहता है, पर ज्यों, ज्यों दूध

शरीर की गंदगी को निकालता जाता है, बदबू भी कम होती जाती है।

पसीने की अधिकता से डरने की आवश्यकता नहीं है। यह वह पसीना नहीं है जिससे खून पतला पड़ जाता है। दुग्ध कल्प में यक्ष्मा के रोगी को भी ऐसे पसीने से डरने की जरूरत नहीं है। कल्प में जब पाँच-छह सेर दूध पिया जा रहा है तब शरीर में गया द्रव अन्य मार्गों पर जोर कम करने के लिये शरीर से पसीने के रूप में भी निकलने की कोशिश करता है।

दुग्ध कल्प करते समय स्त्री के रजस्वला होने पर उसे कुछ कष्ट होता है। ऐसी स्त्रियों को, जिनको मासिक धर्म संबंधी कोई गड़बड़ी होती है यह कष्ट विशेष रूप से होता है। ऐसी दशा में उनके लिये यह कष्ट सह जाना अच्छा है। पर यदि पीड़ा अत्यधिक हो तो वे दूध की मात्रा आधी या इससे कम करके पीड़ा से तत्काल छुटकारा पा सकती हैं। मासिक का समय समाप्त होने पर दूध की मात्रा पूर्ववत् कर लेनी चाहिये।

दूध पीना आरम्भ करने पर जिनकी नाड़ी की गति मंद रहती है, वह बढ़ जाती है। सुस्त हृदय तेजी से काम करने लगता है। रक्तचाप यदि अधिक हुआ तो कम, और यदि कम हुआ तो अपने उचित चाप की ओर बढ़ने लगता है। ये सब शुभ लक्षण हैं, दुग्ध-कल्प के प्रभाव के अंतर्गत हैं।

इससे यह सिद्ध होता है कि दुग्ध के कल्प से उदर सम्बन्धी सभी रोग तथा गुर्दे के रोग दूर हो कर रोगी स्वस्थ हो जाता है। मूत्राशय (मसाने) के सभी रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। मूत्र के सभी दोष गदलापन, पीलापन, जलन और दुर्गन्ध आदि सभी दूर होते हैं। शरीर के दोष दुर्गन्ध आदि अधिक दूध पीने से पसीना द्वारा शरीर से वाहर निकल जाता है। क्योंकि दूध अधिक पीने से पसीना अधिक आता है, फलस्वरूप रक्त सर्वथा शुद्ध हो जाता है और शरीर नीरोग हल्का फुल्का हो जाता है। ज्वर आदि दुग्धकल्प से दूर हो जाते हैं यह पहले विस्तार से लिखा जा चुका है। दुग्ध कल्प में केवल गाय के दूध का ही प्रयोग करना चाहिये भूलकर भी भैंस के दूध को न छूवें नहीं तो लाभ के स्थान पर हानि ही होगी।

दुग्ध कल्प के परिणाम

रोग किसी व्यक्ति को हो चाहे बच्चों को दुग्ध का कल्प समान रूप से आबाल

वृद्ध वनिता सब के लिये उपयोगी है। उत्साहित करने पर बड़ों की अपेक्षा बच्चे अधिक उत्साह और चाव से दुग्ध कल्प करते हैं और बच्चे को लाभ बड़ों की अपेक्षा अधिक शीघ्र होता है। जो रुग्ण बालक स्कूलादि में पढ़ते हैं यदि वे दुग्ध कल्प करें तो उनके भयङ्कर रोग इतनी सरलता से चले जाते हैं कि उनके सन्मुख डाक्टर हार मान जाते हैं। जो रोगी सब ओर से निराश हो चुके थे, जिनका रोग डाक्टर हकीमों ने असाध्य कह कर उनकी चिकित्सा करनी छोड़ दी थी, इस प्रकार के अनगिनत रोगी केवल दुग्ध कल्प से स्वास्थय प्राप्त कर चुके हैं। इसका परीक्षण प्रायः सभी चतुर वैद्य अपने जीवन में बराबर कर चुके हैं।

गोरखपुर आरोग्य मन्दिर में हजारों रोगियों पर दुग्ध कल्प के परीक्षण वा अनुभव किये गये हैं। उन सबका परिणाम यही निकला है कि मनुष्य के शरीर में होने वाले प्रायः सभी जीर्ण रोगों में चाहे उनका सम्बन्ध सारे शरीर से हो अथवा शरीर के किसी एक अंग से, दुग्ध-कल्प से सभी रोगों में आश्चर्य जनक लाभ होता है। कुछ ऐसे रोगी भी संसार में देखने में आते हैं कि यदि आप उन्हें दुग्ध-कल्प की बात कहें तो वे कहते हैं "हमने कभी दूध पिया ही नहीं न हमें कभी दूध पच सकता है। हमें तो दूध की गन्ध और आकृति भी अच्छी नहीं लगती फिर दिन भर दूध पीना और केवल दूध पर ही रहना तो दूर की बातें हैं, उनके इस कथन से यह भी ज्ञात हो जाता है कि दूध न पीने के कारण ही ये रोगी हैं। ऐसे रोगियों को समझा कर जल उचित रीति से दूध पिलाया जाता है तो उन सब को दूध का लाभ निश्चित रूप से मिलता है और वे दूध के भक्त बन जाते हैं।

दूध के कल्प करने से स्वास्थ्य में स्थायी लाभ होता है किन्तु जिन भूलों के कारण स्वास्थ्य बिगड़ा था उन्हीं को फिर से दोहराया जायेगा तो प्रकृति अवश्य दण्ड देगी और स्वास्थ्य फिर बिगड़ेगा ऐसी अवस्था में भी सम्भव है जिस रोग को दूर करने के लिये दूध-कल्प किया गया था वह रोग फिर न हो कर कोई दूसरा रोग हो जाये, इसलिये दुग्ध-कल्प के पश्चात् स्वास्थ्य स्थायी रूप से ठीक रहे इसके लिये कुछ सावधानी की आवश्यकता है।

दुग्ध-कल्प से सारे शरीर का पुनः काया-कल्प हो जाता है। यह स्वतः सिद्ध है कि दुग्ध-कल्प से रक्त शुद्ध और स्वच्छ हो जाता है सब विकार निकल जाते हैं। पञ्च-कोषों में सजीवता आती है, पाचन-क्रिया सुधर जाती है और भूख बहुत

अच्छी लगने लगती है। पोषण होने से नाड़ी जाल सबल हो जाता है और मस्तिष्क तर व ताजा हो जाता है। वीर्य की वृद्धि होने से शरीर ओजस्वी, सुन्दर और कान्तिमान् हो जाता है।

दुग्ध-कल्प से प्राप्त स्वास्थ्य-लाभ को स्थायी बनाने का सबसे बड़ा नियम तो यह है कि हम प्रत्येक प्रकार की अनियमता से बचें। खाने, पाने, सोने, पढ़ने, काम और विश्राम करने सभी में एक मर्यादा होनी चाहिए। मनोरंजन भी एक आवश्यक कार्य है उससे कार्य करने में रुचि और उत्साह बढ़ता है तन और मन दोनों को विश्राम भी मिलता है। अतः शाम को वा सुविधानुसार अन्य कोई भी समय मनोविनोद में अवश्य लगाना चाहिये। मित्रमंडली के साथ, किसी व्याख्यान में सत्संग में, व्यायामशाला में वा खेल-कूद में भाग लें जिससे दिन भर की थकावट दूर हो जाए।

स्वास्थ्य रक्षा के साधन

ब्रह्मचर्य

वीर्यरक्षा वा ब्रह्मचर्यपालन स्वास्थ्य रक्षा का सब से बड़ा नियम है, अतः पाठक इस ओर जितना अधिक ध्यान देवें वह कम है। क्योंकि दुग्ध-कल्प से काम शक्ति बहुत ही बढ़ जाती है। किन्तु यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए कि वीर्य को नष्ट करना स्वास्थ्य को नष्ट करना है। वीर्यरक्षा जोवन है और वीर्यनाश मृत्यु है। वीर्य-रक्षार्थ सत्संग, स्वाध्याय, व्यायाम, प्राणयाम, शुद्ध सात्विक आहार और शुद्ध विचार होने चाहिएँ, कुसंग से दूर रहना चाहिए।

शौच से पूर्व उषः-जलपान करें, शौच ठीक होने से पेट साफ होगा। दातुन सवेरे तो अवश्य करें यदि दाँत खराब हो तो सायंकाल भी दातुन करें। अपनी शक्ति के अनुसार दौड़, दण्ड-बैठक, योगासन, तैरना, भ्रमणादि कोई व्यायाम आध घण्टे खुली शुद्ध हवा और खुले मैदान में वा बाग-बगीचे में करें। प्राणयाम करने से और भी अधिक लाभ होगा। इसके यथार्थ ज्ञान के लिये मेरा पुस्तक ब्रह्मचर्य के साधन व्यायाम और प्राणायाम पढ़ें। पेट को ठीक रखने के लिए योगासन, सर्वांगासन, हलासन और पश्चिमोत्तानादि करने चाहियें। ब्रह्मचर्य पालन में शीर्षासन और प्राणायाम बहुत सहायक हैं। मनुष्य को रात्रि में छः घण्टे की गाढ़ी नींद लेनी चाहिए। नींद लेना और विश्राम करना भी स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है इसके लिये मेरा लिखा निद्रा नामक पुस्तक पढ़ें।

स्वास्थ्य-रक्षार्थ खुली धूप में कार्य करना तथा खुले वायु में घूमना भी बहुत लाभप्रद है।

यूनानी मत में दूध

युनानी मत वा हिकमत के अनुसार स्त्रियों के दूध के पश्चात् गाय का दूध ही सबसे उत्तम माना गया है। जिस दूध में जड़ापन (गाढ़ापन) होता है वह दूध भारी होने से देर से हजम होता है। गौ का बच्चा जब तक ४० दिन

का न हो तब तक उस का दूध हानिकारक माना जाता है। दूध उग्र औषधियों और विषों के दर्प को नष्ट करने के लिए एक उत्तम पदार्थ है। कुचला, अजवायण, खुरासानी, कुटकी, आदि के उग्र दर्प को गाय का दूध नष्ट करता है। बूढ़ों के लिए विशेष लाभदायक है। जिन लोगों के आंतों और मेदे में दोष सञ्चित रहते हैं उनको दूध पीने से दस्त आने लगते हैं। जब दोष निकल जाते हैं तब दूध कब्ज करने लग जाता है। इसलिए यह दस्तावर और काविज दोनों ही हैं। आँतो के जख्म में यह उत्तमं पथ्य है। इससे जख्म साफ होते हैं। खुश्की की वजह से अगर स्मरण-शक्ति कम हो गई हो तो दूध उसमें एक उपयोगी वस्तु है। वहम दहशत और उदासी में भी यह लाभदायक है। स्त्री प्रसंग से होने वाली निर्बलता को मिटाने के लिए दूध के समान लाभदायक पदार्थ दुनियाँ में दूसरा नहीं है।

यूनानी मत में दूध से हानियाँ

यूनानी मत से प्रत्येक प्रकार का दूध पेट में जाकर यकृत के अन्दर सुद्दे (गांठें) पैदा करता है। जिनके शरीर से रक्त वहुत निकल गया हो उनके लिए भी यह हानिकारक है। क्योंकि ऐसे लोगों का प्राण-वायु निर्बल हो जाता है और पाचन शक्ति बिगड़ने से उन्हें दस्त आने लगते हैं। जो लोग परिश्रम अधिक करत हैं वा जिनकी प्रकृति गर्म होती है, उनके मेदे (पक्वाशय) में यह खरावी उत्पन्न करता है। इसके अधिक सेवन से श्वेत कुष्ठ और शरीर पर काले चितके होने का डर रहता है। जिनके पेट के अन्दर वा वाहर कफ़ की सूजन हो उन्हें भी यह नुकसान पहुंचाता है। दांतो को कमजोर कर देता है। गाढ़ा दूध उदर-शूल और पथरी को उत्पन्न कर देता है।

खटाई, नमकीन वस्तु, इमली, नींबू, तिल का तैल, कुलथी, मछली, राई, प्याज, दही, छाछ, गन्ने की जड़, मूंग की जड़, और तरबूज के साथ दूध का सेवन कभी नहीं करना चाहिए। क्योंकि ये इसके विरोधी पदार्थ हैं। इनके एक साथ प्रयोग करने से हानि ही होती है। यहाँ तक कि कुष्ठ जैसे रोग हो जाते हैं। अतिसार, प्रवाहिका, कफ-पित्त की अधिकता, फोड़े, फुन्सी, कोढ़, भगन्दर, सुजाक, शर्करा, प्रमेह और कृमि रोम में दूध बड़ा हानिकारक है।

ऊपर लिखे बिचार वा मत यूनानी चिकित्सा करने वाले हकीमों के हैं।

आयुर्वेद शास्त्रों और वैद्यों के अनुभव पहले लिख चुके हैं, और आगे भी पाठक पढ़ेंगे।

स्वास्थ्य-रक्षा में भोजन का स्थान

बिगड़े स्वास्थ्य को सुधारने और बने स्वास्थ्य की रक्षा करने में भोजन का बहुत अधिक भाग है। यदि यह सही है कि हम दाँतों से अपनी कब्र खोदते हैं तो यह भी सही है कि दाँतो से हम जीवन भी पा सकते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि हमारा भोजन प्राकृतिक और संतुलित हो। भोजन में मांस-मछली एवं अण्डे का प्रयोग नियम विरुद्ध है। चिकनाई के लिए घी सर्वोत्तम है। इसके अभाव में तिल, नारियल या मूंगफली का तैल भी काम में लाया जा सकता है। तैल वनस्पति घी से कहीं अधिक अच्छा होता है। सरसों का तैल बहुत थोड़ा ही काम में लाया जावे। फल तरकारियों के सम्बन्ध में अधिक बतलाने की आवश्यकता नहीं है। इनका अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए। पर भरपेट भोजन करने के बाद नहीं, किंतु भोजन का एक अंश बनाकर हा। सफेद मैदा और सफेद चीनी तो सर्वथा त्याज्य हैं। आटे से चोकर (छानस =बूर) निकालने के पश्चात् आटा उसी भांति निस्सार हो जाता है जैसे मक्खन निकाला हुआ दूध होता है। चीनी की तुलना में गुड़ का सेवन करना अच्छा है। किन्तु गुड़ का सेवन युवावस्था में बहुत हानिप्रद है। वीर्य का नाश करता है। पर जहाँ तक हो सके मीठे का काम शहद, मुनक्के, किसमिस, अंजीर, खजूर इत्यादि से ही लेना चाहिए।

चाय व काफी शराब या ताड़ी से कम हानिकारक नहीं हैं। दुग्ध-कल्प के बाद इनका प्रयोग वैसा ही होगा जैसे गंदे कपड़ों को धोबी से धुलाकर फिर से गन्दी नाली में फैंक देना। मिर्च-मसाले और खटाई के प्रयोगों से भी सर्वथा बचना चाहिए।

दिन में दूध आदि तरल पदार्थ मिलाकर करीब तीन सेर पानी नित्य पीना चाहिए। दुग्ध-कल्प के दिनों में तरल पदार्थ खूब पीया जाता है। अतः उसके बाद भी तरल पदार्थ की इच्छा बनी रहना स्वाभाविक है। जाड़े में कुछ कम और गर्मी में अधिक पानी पीया जा सकता है भोजन के पहले साथ अथवा तुरन्त पीछे अधिक

पानी नहीं पीना चाहिए । सवेरे उठते ही पाना पीने की आदत डालना अच्छा है ।

स्वास्थ्य के लिए भोजन के बाद जिसे स्थान मिलना चाहिए वह है निद्रा। वास्तव में निद्रा भोजन की पूरक है । निद्रावस्था में ही भोजन द्वारा अभिशोषित द्रव्य कोषाओं के रूप में परिवर्तित होता है और शरीर की वृद्धि करता है। निद्रा का काम अन्य किसी वस्तु से नहीं चलाया जा सकता । संसार का कोई भी भोजन या रसपान खोयी निद्रा की पूर्ति नहीं कर सकता ।

जिसने दूध से स्वास्थ्य प्राप्त किया है उसे दूध पीते रहने की हिदायत देने की बहुत जरूरत नहीं है। दूध के मधुर स्वाद और उसके पोषक गुणों के कारण वे इस रसायन का प्रयोग बराबर करते रहेंगे, ऐसी आशा है । जिस तरह भी हो सेर तीन पाव दूध का प्रयोग नित्य करते रहना चाहिए । जहाँ तक हो कच्चा दूध ही पीना चाहिए । दही या मट्ठा भी पिया जा सकता है । पाठक भोजन के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए मेरे द्वारा विस्तार से लिखा "भोजन" नामक पुस्तक पढ़ें ।

इनसे बचिए

भारत में धीरे-धीरे सिगरेट का साम्राज्य बढ़ता जा रहा है । सिगरेट और स्वास्थ्य में से आप किसी एक से ही प्रेम निभा सकते हैं । दोनों में से कोई एक चुन लीजिए । बहुत अधिक कपड़े पहनना भी स्वास्थ्य के लिए अहितकर है । ऋतु के अनुसार ही कपड़े पहनने चाहियें । सोते समय जितने कम कपड़े रहें उतना ही अच्छा है ।

अध्ययन की अपनी विशेषताएँ हैं । ज्ञानवर्द्धक एवं मनोरंजन के लिए वह अत्यन्त उपयोगी है । पर खाना-पीना और सोना छोड़कर पढ़ना अच्छा नहीं । बहुत-सी स्त्रियाँ सीने-पिरोने के पीछे भी इसी तरह पागल रहती हैं । ये दोनों आदतें बहुत ही हानिकारक हैं । इन दोनों ही कोटियों के व्यक्ति सोने के घंटों में कतर-ब्योंत करते रहते हैं । उनकी दृष्टि धीरे-धीरे नष्ट होने वाले स्वास्थ्य की ओर नहीं जाती ।

वजन लेते रहें

किसी के स्वास्थ्य के बारे में जानने में उसका वजन बड़ा सहायक होता

हैं । भोजन की तंगी या भोजन का गलत चुनाव वजन से जाना जा सकता है। वजन पर ध्यान रखिए और ऊपर बताये गए नियमों पर चलकर दुग्ध-कल्प से प्राप्त स्वास्थ्य की रक्षा कीजिए। इन नियमों पर चलने से दुग्ध-कल्प से अर्जित वजन तो बना ही रहेगा, आप उसमें और भी वृद्धि कर सकते हैं। स्वास्थ्य के लिए प्रसन्नचित्त एवं उल्लासपूर्ण रहना आवश्यक है।

यह अच्छा होगा कि एक या दो वर्ष के अंतर पर एक छोटा उपवास करने के उपरांत दो या तीन हफ्ते का दुग्ध-कल्प कर लिया जाए। इससे सा भर तक आप स्वस्थ एवं सशक्त बने रहेंगे। यह याद रखिए कि निन्यानवे प्रतिशत स्थितियों में स्वस्थ रहना आप ही पर निर्भर है। विवेक, संयम और सतर्कता से काम लेकर कोई भी आजीवन स्वस्थ एवं प्रसन्न बना रह सकता है।

दुग्ध-कल्प के विषय में डाक्टरों के अनुभव

दूध अथवा मट्ठे के कल्प द्वारा रोगों का निवारण कोई नया प्रयोग नहीं है। आयुर्वेद में इसका सांगोपांग वर्णन मिलता है और आज भी अनेक रोगों को दूर करने में वैद्य भी दूध अथवा मट्ठे के कल्प का प्रयोग कराते हैं। दूध के ही गुण से प्रभावित होकर भारतीयों ने इसे अमृत की संज्ञा दी है और इसकी जननी गौ को माता के गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया है।

विदेशों में दूध-कल्प द्वारा रोगों के उपचार का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। पहले-पहल इसका विधिवत् उपयोग रूस की राज्य परिषद् के डाक्टर फिलिप केरल एम० डी० ने किया। अपने समय के वे चोटी के डाक्टर थे और उनके पास आने वाले रोगियों की संख्या अगणित थी। अपनी प्रैक्टिस के आरम्भिक दिनों में दवाओं पर उनका अगाध विश्वास था किंतु चौतीस वर्ष की उनकी प्रैक्टिस के अनुभवों ने दवाओं पर से उनका विश्वास उठा दिया। उनका ध्यान ऐसी खाद्य-सामग्रियों की ओर जाने लगा जो शरीर का पोषण करने के साथ ही उसे पूर्णरूपेण नया बना दें। उन्होंने दूध के प्रयोग आरम्भ किए और कई ऐसे रोगियों को जिन्हें असाध्य घोषित कर दिया गया था, दूध द्वारा अच्छा कर दिया, इससे उन्हें बड़ा प्रोत्साहन मिला और १८६५ ई० में रुस की मेडिकल सोसायटी के सम्मुख दुग्ध-चिकित्सा पर दिए गए अपने अभिभाषण में उन्होंने दुग्ध-चिकित्सा की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की और कठिन रोग के उन २००

रोगियों का वर्णन किया जो दुग्ध-चिकित्सा से अच्छे हो गए थे। यूरोप और अमेरिका में इस भाषण की बड़ी चर्चा हुई और कई भाषाओं में उसके अनुवाद भी प्रकाशित हुए। डा० केरल का मत था कि खून की कमी, जलोदर, नाड़ी सम्बन्धी रोग, पाचन क्रिया की गड़बड़ी और गठिया जैसे रोगों में दूध-चिकित्सा अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध होती है। एक मधुमेह में ही उन्होंने दूध-चिकित्सा को अनुपयोगी पाया था।

दूध-चिकित्सा पर अनुसन्धानों का क्रम चलता रहा और अनेक शोधकर्त्ताओं ने डॉ० केरल के अनुभवों का समर्थन किया। डॉ० डोन्किन ने मूत्राशय की गड़बड़ी के कारण होने वाले जलोदर में इसे अनुपयोगी पाया। प्रोफेसर पेचोलियर, पोटेन, हचर्ड और पोटेल ने हृदय संबंधी रोगों में भी दूध-चिकित्सा की सिफारिश की है। प्रोफेसर गेसकण्ड और यारिल ने प्लूरिसी के कतिपय रोगियों पर दूध का प्रयोग किया और संपूर्ण सफलता प्राप्त की। प्रोफेसर फार्नियर को ज्ञात हुआ कि दूध केवल रोग-नाशक ही नहीं है, उसमें दोनों के आक्रमण से रक्षा करने की भी अद्भुत शक्ति है। विस्ट ने दूध द्वारा कई ऐसे रोगियों को अच्छा किया जो जोड़ संबंधी गठिया से पीड़ित थे। डा० टेचोल, स्कोर वर्ट और डोन्किन की धारणा है कि दूध के सम्यक् प्रयोगों द्वारा मुटापे के रोगी अपना मुटापा खो सकते हैं। प्रोफेसर विंटर मिक्ज को अनुभवों द्वारा यह प्रतीत हुआ कि सुजाक में दूध-चिकित्सा प्रभावहीन सिद्ध होती है।

आगे चलकर डिप्थीरिया, मोतीझारा, सूखी खांसी लिए हुए बच्चों के गले की बिमारी, लाल बुखार, श्वास नलिका सम्बन्धी रोग, निमोनिया, गठिया, विषम ज्वर, मियादी बुखार, अतिसार, पेचिश, रीढ़ की हड्डी की बिमारी, आमाशय के घाव, यकृत्, आंख के रोग, स्त्रियों के विशेष रोग, स्नायु एवं मस्तिष्क सम्बन्धी रोग, दमा, रक्ताल्पता (अनीमिया) आदि असाध्य रोगों में दूध-चिकित्सा आराम पहुंचाने वाली ही नहीं जड़ से उखाड़ फेंकने वाली भी सिद्ध हुई।

डा० केरल ने अनेक रोगियों को दूध-चिकित्सा से अच्छा तो अवश्य किया, पर वे यह नहीं समझ पाए कि दूध से रोगों के अच्छा होने का कारण क्या है। किन्तु अपने इस परिमित ज्ञान के कारण असफलता नहीं हुई। वे कहते थे कि दूध के गुणों से परिचय न होने पर भी दूध के गुणों की प्रभावशीलता तो बनी

ही रहती है। हम सारी औषधियों के गुणों से भली-भाँति परिचित कहाँ होते हैं? आरम्भ में तो बहुत थोड़े ज्ञान के आधार पर ही उनका उपयोग किया जाता है और धीरे-धीरे ही लोगों को उनका सम्पूर्ण ज्ञान होता है।

आगे चलकर तो अनेक युवकों ने विशेषतया फ्रांसीसी युवकों ने डाक्टर की उपाधि प्राप्त करने के लिए दुग्ध-चिकित्सा पर थीसिस लिखे और इसके विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालकर इसे विज्ञान सम्मत रूप दिया।

यह कहना उचित नहीं होगा कि डा० केरल से पूर्व संसार को दूध का औषधि गुण ज्ञात ही न था। समय-समय पर अनेक रोगियों ने इसके प्रयोग द्वारा लाभ उठाया था। हिपौक्रिटीज एवं उसके समकालीन अन्य चिकित्सकों ने दूध को फेफड़ों के यक्ष्मा के लिए उपयोगी पाया था। एरीटस भी यक्ष्मा के रोगी के लिए दूध की आवश्यकता स्वीकार करता है। तीसरी शताब्दी के प्रारम्भ में ग्रीक चिकित्सक गेनिनस अपने रोगियों को स्टेवियन पहाड़ पर जाकर रहने और दूध का प्रयोग करने की राय देता था। जो रोगी इस पहाड़ पर जाते थे वहाँ के रोग नाशक वायु एवं गायों के स्वस्थ दूध का उपयोग कर नीरोग एवं सुदृढ़ हो जाते थे। दूध की महत्ता से प्रभावित होकर एवं दूध के प्रचार के लिए तत्कालीन ग्रीक नरेश गेटा ने अपने सिक्कों पर गाय का चित्र अंकित करा दिया था।

अरब के चिकित्सक राजे ने यक्ष्मा में होने वाले ज्वर के लिए दूध को अत्यन्त उपयोगी बतलाया है। तीसरी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के प्रसिद्ध चिकित्सक मार्ही एनस ने लिखा है कि कोई भी रोग ऐसा नहीं है जो दुग्ध-चिकित्सा से दूर नहीं किया जा सके। स्विटजरलैंड के डाक्टर वेपरेस का विश्वास था कि दूध में कोई दैवी शक्ति छिपी है। उनका कथन था कि दूध के विधिवत् उपयोग द्वारा थोड़े ही समय में मनुष्य स्वच्छ आँखें, आभायुक्त मुख कान्तिमान् त्वचा एवं चिर यौवन का स्वामी बन सकता है।

डॉ० केरल से पहले वाले अन्य डॉक्टर दूध-चिकित्सा का व्यवहार किस प्रकार करते थे इस संबंध में हमें अधिक ज्ञात नहीं। कहीं-कहीं अत्यल्प उल्लेख मात्र मिलते हैं जैसे डॉ० होफियन लाभ के लिए दूध की अत्यधिक मात्रा के प्रयोग की राय देता था। फ्रांस के डा० प्रिटियेन की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि वे

अपने रोगियों को दूध के साथ तीन वार प्याज भी देते थे। किन्तु अतिसार हो जाने पर प्याज का प्रयोग अवश्य ही बंद कर दिया जाता था। केरल और उनके सहयोगी गेनकिन ने दुग्ध-चिकित्सा की जो पद्धति अपनायी थी, उसमें वे दिन में चार वार अर्थात् सवेरे आठ बजे, दोपहर को बारह बजे, शाम को चार बजे एवं रात को आठ वजे एक-एक प्याला गाय का कच्चा एवं मक्खन निकाला हुआ दूध देते थे। इस विधि के प्रारंभ में तो वे कभी-कभी कुछ औषधि भी दे देते थे किंतु दूध पर पूरा-पूरा विश्वास जम जाने के पश्चात् तो उन्होंने औषधि का प्रयोग पूरी तरह से बंद कर दिया। बाद में कुछ दिनों तक दूध का प्रयोग कर लेने के वाद वे रोगी को दूध के साथ थोड़ी-थोड़ी सूखी रोटी भी देते थे, किंतु बाद में उन्होंने रोटा देना बंद कर दिया और दूध की मात्रा चार प्याले से बढ़ा-कर अट्ठाईस प्यालों तक कर दी।

केरल के इतनी कम मात्रा में एवं मक्खन निकाला हुआ दूध देने का कारण यह प्रतीत होता है कि अधिकतर वे जलोदर के रोगियों की ही चिकित्सा करते थे। उनके ही समकालीन प्रोफेसर हनोसेमजफकी सन् १८५७ में प्रकाशित पुस्तक 'एबाउट दी मिल्क क्योर' से ज्ञात होता है कि उन्होंने दूध की मात्रा निश्चित नहीं की थी और वे साल-साल भर तक अपने रोगियों को दूध पिलाने में नहीं हिचकते थे। इस दृढ़ता के कारण उनके रोगी अच्छे हो जाते थे।

आधुनिक युग में सभी प्राकृतिक चिकित्सक दुग्ध-चिकित्सा का यथेष्ट प्रयोग करते थे। जिन विशेषज्ञों ने इस विषय पर विस्तारपूर्वक लिखा है उनमें जी० एच० केलाग, डा० पोर्टर, डा० लिंडल्हार और बर्नर मेकफैडेन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। डा० केलाग की धारणा है कि दुग्ध-चिकित्सा रोगी को मोटा बनाता है। डा० लिंडल्हार की राय में दूध के साथ सात दिन में कई वार फल या तरकारी खाना आवश्यक है। डा० केलाग का भी यही मत है। डा० पोर्टर और मेकफैडेन दुग्ध-चिकित्सा में केवल दूध ही पीने की राय देते हैं। उपर्युक्त चारों ही डाक्टरों का मत है कि रोगी को आध-आध घंटे पर ही एक निश्चित मात्रा में दूध पिलाना चाहिए। डा० मेकफैडेन अपने चिकित्सालय में उपवास जलचिकित्सा आदि उपचारों के साथ दुग्ध-चिकित्सा चलाते थे पर डा० पोर्टर केवल दूध के प्रयोग के पक्षपाती हैं।

डा० मेकफेडेन और डा० पोर्टर की दुग्ध प्रणाली में एक उल्लेखनीय अन्तर यह है कि डा० मेकफैडेन दुग्ध चिकित्सा काल में रोगी के आराम पर उतना जोर नहीं देते जितना पोर्टर देते हैं और डाक्टर मेकफैडेन गर्म पानी के नहाने को ही चिकित्सा का विशेष भाग मानते हैं यद्यपि गर्म पानी के नहाने की आवश्यकता डाक्टर पोर्टर ने भी बतलाई है। इन दोनों ही डाक्टरों ने अनेकानेक रोगों में दूध चिकित्सा को उपयोगी पाया है। पहले मधुमेह के रोगी पर दूध का प्रयोग निरापद नहीं माना जाता था पर अब उपवास और मट्ठे के कल्प द्वारा मधुमेह रोगों को जड़ से नष्ट करना बड़ा आसान हो गया है मेकफैडेन की राय में उपदंश जैसे भयावह रोग भी दुग्ध चिकित्सा और उपवास के निश्चित कार्यक्रम द्वारा अच्छे किए जा सकते हैं।

आयुर्वेद में वर्णित दुग्ध-कल्प का विधि अत्यन्त प्राचीन है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में रोगों के निवारण के लिए इसका प्रयोग भी खूब होता था। आज भी वैद्य गण दुग्ध-कल्प से अनेक रोगियों को अच्छा करते हैं। किन्तु वे दुग्ध कल्प के साथ अनेक रसौषधियों का भी प्रयोग कराते हैं। दुग्ध-कल्प के साथ इनके व्यवहार की परम्परा नागार्जुन के समय से चली आ रही है। किन्तु इस परम्परा का एक दुष्परिणाम यह हुआ है कि रसायन का महत्त्व अधिक और दुग्ध का महत्त्व कम हो गया है। नागार्जुन से पूर्व रसौषधि का प्रयोग बिल्कुल नहीं किया जाता था। हाँ कुछ ऐसी काष्ठौषधियाँ जो हमारे दैनन्दिन भोजन में काम आती हैं, अवश्य दी जाती थीं।

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में दूध के अमृतोपम गुणों का बड़ा महिमा गाया गाया है। भावप्रकाशकार का मत है—

दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं सरम ॥१
सद्यः शुक्रकरं शीतं सात्म्य सर्वशरीरिणाम्।
जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजिकरं परम्।
वयः स्थापनमायुष्यं साधिकारि रसायनम् ॥ २ ॥
विरेकवान्तिबस्तीनां तुल्यमोजो विवर्द्धनम् ॥ ३ ॥ (दुग्धवर्ग)

गाय, भैंस, बकरी आदि के दूधों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं, किन्तु जननी के दूध की समानता यदि कोई कर सकता है तो वह गो-दुग्ध ही है। दूध

बच्चों का भोजन कहा जाता है। रोगी भी बच्चे जैसा असहाय एवं निर्बल होता है। अतः उन रोगियों को जो सब भाँति जर्जर एवं विवश हों गोदुग्ध के कल्प से पुनः स्वस्थ एवं सबल बनाया जा सकता है। दधि भी दुग्ध के समान ही गुणकारी है। भावप्रकाश में निम्नलिखित रोगों में दधिसेवन का भी विधान किया गया है --

मूत्रकृच्छे प्रतिश्याये शीतगे विषमज्वरे।
अतिसारेऽरुचौ कार्श्ये शस्यते बलशुक्रकृत् ॥२॥ (दधिवर्ग)

मट्ठे को मनुष्यों के लिए अमृत की उपमा देते हुए प्राचीन ग्रन्थकारों ने यह घोषणा की थी "न तक्रसेवी व्यथते कदाचित्"। किंतु जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है वैद्यगण दुग्ध या मट्ठे के साथ पर्पटी का भी प्रयोग कराते हैं। दूध तो साक्षात् रसायन है उसे किसी अन्य रस या पर्पटी की सहायता की क्या अपेक्षा? वास्तव में नई खोजों के आधार पर यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि रोगों के निवारण में दूध का विधिवत् किया गया कल्प अव्यर्थ सिद्ध होता है। ज्यों-ज्यों नये अनुसंधान होते जाएँगे त्यों-त्यों दुग्ध-कल्प के महिमा में अभिवृद्धि होती जाएगी, ऐसी आशा हम निःसंकोच कर सकते हैं।

आहार द्रव्यों में गोदुग्ध का महत्त्व

"लेखक—डा० रामस्वरूप, रिटायर्ड, वैटर्नरी असिस्टैण्ट सर्जन सांपला (रोहतक)।

यह लेख डा० रामस्वरूप जी आर्य ने अपने पुस्तक "गोमाता वसुन्धरा" के लिए लिखा है। वह हमारे गुरुकुल के अनन्य भक्त और बड़े प्रेमी थे। जिस समय १९५४ में सुधारक का "गो विशेषाङ्क" निकला उस समय उसमें यह लेख प्रकाशित हुआ था। यह लेख आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना उस समय था। पाठकों के परिचय के लिए डा० रामस्वरूप के विषय में इतना लिखना उचित समझता हूं कि ये अत्यन्त श्रद्धालु आर्यसमाजी थे। उन्होंने अपने पुत्र को गुरुकुल कांगड़ी का स्नातक बनाया। डाक्टर जी स्वयं भी उच्च कोटि के गो भक्त थे, भारतीय संस्कृति के पुजारी थे, उनकी कथनी और करनी में भेद नहीं था। सदैव अपने घर पर गायें पालते थे और उनका अमृत रूपी दूध पाते थे। गो पालन की प्रेरणा सदैव अपने साथियों को करते थे। स्वभाव से अत्यन्त सरल, छल कपट से रहित, पशु चिकित्सा के विशेषज्ञ और गो पालन एवं संरक्षण के विषय में बड़ा अच्छा शोध कार्य करने वालों में से हैं। यह लेख उनके शोध का परिणाम है। इनका लेख इस प्रकार है।

मिस्टर एक्लीस अपनी एक किताब में लिखते हैं कि मैकालभ, हार्ट मीडियल, रूसवर्न आदि अन्वेषण से पहले दूध को अन्य आहार द्रव्यों की सूची में कोई विशेषता नहीं दी गई थी। परन्तु अब यह बात सिद्ध हो चुकी है कि अनाज और सब्जियों की ही प्रोटीन नहीं बल्कि अण्डे और गोश्त की प्रोटीन भी दूध की प्रोटीन का मुकाबला नहीं कर सकती।

अकेले अनाज की प्रोटीन हजम होकर ३० प्रतिशत शारीरिक परमाणुओं के बनाने में खर्च होती है। परन्तु जब अनाज के साथ गो दुग्ध पिलाया जाए तो अनाज की प्रोटीन ६० से ६५ प्रतिशत तक हजम होकर शरीर का अंश बन जाती है।

बर्नर मैक फैडन दूध का चमत्कार नामक पुस्तक में लिखते हैं कि प्राचीन समय में गो दुग्ध के द्वारा संसार की उत्तम और वलवान् जातियों का पोषण होता आया है। गो दुग्ध ही कमजोरों को बलवान् और रोगियों को नीरोग करने के लिए सवसे पहले आगे आया है। इसकी सहायता से ऐसे नर-नारी उत्पन्न हुए हैं जिन्होंने जीवन के कष्टों का मुकावला करते हुए दीर्घ जीवन प्राप्त किये हैं। गो दुग्ध ने इनकी आयु में वृद्धि की। वे बहुत देर तक जीवित रहे और जल्दी बूढ़े नहीं हुए।

संसार का सवसे वड़ा सम्पत्तिशाली पुरुष एक फेलर जव मेदे की बीमारी से रोगी हुआ तव उसने घोषित किया कि मैं उस व्यक्ति को दस लाख डालर इनाम दूंगा, जो मुझे रोग मुक्त करेगा। अन्त में एक बुद्धिमान् डाक्टर ने सलाह दी कि गो-दुग्ध पिया करो और पैदल चला करो। इससे वह नीरोग हुआ और परिश्रम के काम करता रहा।

मि० मैक़ फैडन अपने दुग्ध चिकित्सा पुस्तक में लिखते हैं कि ९० प्रतिशत बच्चे विभिन्न रोगों में आक्रान्त होकर मर जाते हैं। क्योंकि गो-दुग्ध पूरी मात्रा में उन्हें नहीं मिलता। वे कहते हैं कि गो-दुग्ध केवल आहार ही नहीं किंतु औषध भी है।

कर्नल मैक् टैगरेट जो पहिले यू० पी० के सेनीटरी कमिश्नर थे, वे कहते हैं कि गो-दुग्ध का मूल्य इतना घटा देना चाहिए कि वह निर्धन लोगों के मुख तक पहुंच सके। ट्रेण्ड दवाइयों के बढ़ाने के स्थान में गो दुग्ध बढ़ाने से बच्चे अधिक लाभ में रहेंगे।

यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि बंगाल प्रान्त में मुसलमान बच्चों की मृत्यु हिन्दू बच्चों से अधिक होती है। केवल कलकत्ता शहर में ही मुसलमान बच्चों को हिन्दू बच्चों की अपेक्षा गो-दुग्ध के अतिरिक्त अण्डा मांस की प्रोटीन खाने की पूरी अनुकूलता है। फिर भी मुसलमान बच्चे हिन्दू बच्चों की अपेक्षा अधिक मरे। कारण, मुसलमान बच्चों को गो-दुग्ध कम मिला या नहीं मिला। उदाहरणार्थ

नीचे तालिका दी जा रही है—

सन्	हिन्दू	मुसलमान	
१९१८	२८१	३०४	कलकत्ते में प्रतिसहस्र बच्चों की मृत्यु संख्या
१९१९	३४७	४१२	
१९२०	३८१	४४९	
१९२१	३२५	३६९	
१९२२	२६९	३८४	

गो-दुग्ध रोगों को हटाता है और साथ ही जीवन देने वाला भी है। मि० हाफकिन साहब के प्रयोगों ने वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है कि इस प्रकार का आहार जिसमें आटा, मीठा, प्रोटीन, मांस, अण्डा आदि और चिकनाई तथा नमक पर्याप्त नहीं है। हाफकिन साहब चूहों की दो टोलियों को आटा, मीठा प्रोटीन, चिकनाई और नमक बराबर दे रहे थे तो उन्होंने एक टोली के चूहों के भोजन में थोड़ी सी मात्रा में अर्थात् कुछ बूंद गाय का दूध बढ़ा दिया, जो इस टोली के आहार की दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं रखता था। इतने गो-दुग्ध के बढ़ा देने से ही दूध वाला टोली के चूहे शीघ्र-शीघ्र बढ़ने लगे, स्वस्थ, बलवान् और जीवित रहे, किन्तु थोड़े दूध वाले चूहे कद में अधिक तो बढ़े ही नहीं किन्तु थोड़े ही दिनों में बहुत से मर भी गए। हाफकिन साहब ने परिणाम निकाला कि कच्चे गो-दुग्ध में कोई ऐसा अज्ञात पदार्थ है जो थोड़ी-सी मात्रा में दिये जाने से भी जीवन को सुरक्षित रख सकता है और कद को बढ़ा सकता है।

इस प्रकार बच्चों पर भी प्रयोग किया कुछ दूध पीते हुए बच्चों को माँ के दैनिक दूध से अतिरिक्त १० छटांक गौ का दूध प्रतिदिन दिया जाने लगा जिनको वह गो-दुग्ध दिया जाने लगा वे कद में २.६३ इंच और भार में ६.८ पाउण्ड बढ़े। जिनको गौ का दूध नहीं मिलता था वे कद में १.८४ इंच और ३.२ पाउण्ड भार में बढ़े।

डा० कैलॉग जो अमरीका के बटैलक्रीक के हास्पिटल के स्वास्थ्य के अध्यक्ष

हैं, वे लिखते हैं कि मैंने एक चूहे को रोटी और सेव और दूसरे को रोटी और गो-दुग्ध जितना वे खा सकते थे उतना खाने को दिया। बारह सप्ताह के पश्चात् रोटी और दूध वाला चूहा दूसरे की अपेक्षा भार में पांच गुणा अधिक पाया गया।

कर्नल मैंकरीश लिखते हैं कि यदि भोजन में दूध और दूध से बने हुये वस्तु पर्याप्त मात्रा में हों तो ऐसी दशा (हालत) में किसी भी प्रकार के मांस की आवश्यकता नहीं रहती। पर्याप्त गौ-दुग्ध का अर्थ दश छटांक दैनिक से कम नहीं है, हो सके तो सवा सेर दूध दैनिक होना चाहिए।

पिछले महायुद्ध को सफल बनाने में दूध का स्थान गाय का दूध पीने वालों के लिए, मादक वस्तुओं से भी सबसे प्रथम संख्या का है। होवर्ड डेरी अखवार ने युद्ध के काल में निम्नलिखित वर्णन निकाला था कि जर्मन के विरुद्ध लड़ने वाली शक्तियां अमरीका, फ्रांस, बैलजियम, इटली आदि देशों ने वड़ी प्रसन्नता के साथ घोषित करके यह वात स्वीकार कर ली है कि सिपाहियों का हृदय वढ़ाने और इनके शरीरों को शक्ति देने के लिए और उनकी वीरता के जोश को वढ़ाने के लिए चाय, कहवा, वीयर, और शराब आदि मादक वस्तुओं की अपेक्षा गो-दुग्ध का प्रयोग ही सबसे अधिक फलप्रद सिद्ध हुआ है।

गौदुग्ध साधारणतया इस प्रकार पीने का वस्तु माना जाता है कि इसका महत्त्व वच्चों के लिए प्रत्येक आदमी आरम्भ से जानता है। पेय पदार्थों में यह इतना प्रचलित है कि हम मान बैठे हैं कि इसके विषय में हमने सब कुछ जान लिया है। आगे इस विषय में कुछ भी ज्ञातव्य नहीं है। परन्तु वस्तुतः यह वात नहीं है। इसके सम्बन्ध में अभी वहुत सी वातों का ज्ञान नहीं है। दिन प्रतिदिन जो ज्ञान वृद्धि हो रही है उससे पुष्ट होता है कि यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से हमको सब कुछ ज्ञान है तो भी कितनी वातें ऐसी हैं जिन पर प्रकाश डालना आवश्यक है।

गोदुग्ध के सम्बन्ध में उदाहरण के लिए एक नई बात हम यहां उपस्थित करते हैं जो कि आजकल सब संगठित शक्तियों की ओर से अपने सिपाहियों को युद्धभूमि में जाते समय गो-दुग्ध पिलाया जा रहा है। जर्मन लोग अपने सिपाहियों को हृदय बढ़ाने के लिए वीयर और शराब पिलाते हैं। परन्तु संगठित शक्तियां फ्रांस के मैदान में सिपाहियों को गोदुग्ध दे रही हैं। इस परिवर्तन का

सेहरा फ्रांस की राजधानी पेरिस की पासचर साहब की अन्वेषण करने वाली उन कैमिकल और फिजियोलौजिकल शाखाओं के सिर पर है। जिन्होंने इस बात का परम प्रमाण कर दिया है कि गो-दुग्ध केवल शरीर का बल बढ़ाने वाला ही आहार नहीं, अपितु आज तक जितने शराब आदि नशे प्रयोग में लाये जाते हैं उन में भी गो-दुग्ध का स्थान सबसे प्रथम है।

गो-दुग्ध की यह विशेषता किस प्रकार प्रतीत हुई। कुछ तो अचानक और कुछ विविध परीक्षण करने के पश्चात् ज्ञात हुई। कुत्तों के १२५ बच्चों पर विभिन्न प्रकार के मादक द्रव्यों का प्रयोग किया जा रहा था। उद्देश्य यह था कि प्रत्येक मादक द्रव्य में कितना बल देने का गुण है। कुत्तों के इन छोटे-छोटे बच्चों पर सब प्रकार की जोश बढ़ाने वाली प्रसिद्ध औषधियां केफीन, ओपियम, कोकेन, शराब में प्रयोग करके देखी गई और इनके पृथक्-पृथक् परिणाम ज्ञात किये गये कि किस-किस मात्रा में उनकी जीवनीय शक्ति, सहनशक्ति, दृढ़ता, जोश का काल, थकावट, सांस की चाल हृदय की गति पर क्या-क्या प्रभाव होता है। जब मादक द्रव्यों से उत्पन्न की हुई अप्राकृतिक शक्ति समाप्त हो चुकी तो थकावट भी इतनी बढ़ गई कि मादक पदार्थ न देने से पहले कभी नहीं होती थी। परीक्षा के पश्चात् प्रत्येक थके हुए प्राणी, जानवर, को पारितोषक रूप से भिन्न-भिन्न आहार दिया जाया करता था। कभी गुड़, कभी मांस रस, कभी गो-दुग्ध के टोस्ट तथा कभी गो-दुग्ध अकेला ही और कभी सीरा दिया जाया करता था। इसके दिए जाने पर ये बच्चे शीघ्र-शीघ्र अपनी खोई हुई शक्ति प्राप्त कर लिया करते थे। फिर इनको पृथक्-पृथक् कोठरियों में लेटने व विश्राम करने और अगले दिन परीक्षण के लिए तैयार हो जाने के लिए भोजन दिया जाता था।

एक दिन एक डाक्टर ने देखा कि इनमें से तीन कुत्ते सीरा और रोटी से घृणा कर रहे हैं। इस दिन उनको केवल गाय का दूध दिया गया। फिर उस डाक्टर ने देखा कि वे शीघ्र-शीघ्र संभलने लगे और अधिक फुर्तीले तथा हाथ पैर से दृढ़ दिखलाई पड़े। सबसे अच्छी बात यह ज्ञात हुई कि दूसरे कुत्तों की तरह न तो वे शीघ्र पड़ रहे और न उनकी तरह उनको नींद ही शीघ्र आई। इस डाक्टर ने अपने साथी डाक्टर का ध्यान इनकी ओर खींचा, परन्तु उन्होंने इन

कुत्तों की इस शक्ति और स्फूर्ति का कारण गो-दुग्ध ही है, यह बात मानने से निषेध कर दिया इसके पश्चात् डाक्टर केमबैंड ने ६० कुत्तों को जो कुल के आधे थे, गुप्त रूप से आधा पाव गो दुग्ध काम करने से पहले देना आरम्भ कर दिया। उस दिन सभी लोग बड़े चाव के साथ परीक्षण परिणाम को देखते रहे। जिन कुत्तों को गो-दुग्ध दिया गया था उन्होंने अपने कार्य को अति शीघ्रता से किया और दूसरों की अपेक्षा तीन गुणा काम किया, थकावट कम हुई, काम करने के उपरांत भी खेलते रहे। ये सब बातें उस पिलाई हुई औषधि के परिणाम के अतिरिक्त थीं जो सबको दी गई थी। इस दिन के पश्चात् यह भी ज्ञात हुआ कि ये कुत्ते जब अपने काम पर गए तो दूसरों की अपेक्षा अधिक फुर्तीले थे। सभी कुत्तों पर इस प्रकार का अनुभव किया गया और बिना किसी सन्देह के यह बात सिद्ध हो गई कि गो-दुग्ध के कारण नाड़ी की चाल धीमी और हृदय तथा मांस-पेशी दृढ़ हो गई। कुत्तों की शारीरिक दशा पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा जैसा अन्य किसी नशीले जोश बढ़ाने वाले पदार्थ से कभी नहीं हुआ था। जब इन छोटे बच्चों पर बीयर, क्लोरल, हाइड्रेट तथा दूसरी शराबों के प्रयोग किये गए तब उनसे इन पर केवल नशा ही नहीं चढ़ा अपितु ये आलसी, ढीले और अपने काम में निकम्मे पाये गये, उनकी नाड़ी और श्वास की गति तीव्र हो गई। देखने में भी सिकुड़े हुये और घबराये हुए दिखाई देने लगे। उनके चेहरों को देखने से यह प्रतीत होता था कि ये निर्बल होते जा रहे हैं और पूर्ववत् उनका स्वास्थ्य नहीं रहा है।

इन परिणामों के प्रकाशित होते ही फ्रांस और इङ्गलैण्ड के फौजी अफसरों ने अपने नये ढङ्ग शराब के विरुद्ध तैय्यार करके प्रकाशित किये। और पीने के स्थान में अलकोइल धमाके से उड़ने वाले जोरदार मसालों में काम आने लगी। गोदुग्ध स्वयं ही उन गुणों का स्थान माना जाने लगा है जो अमृत में होने चाहिये इसमें मिठास है, नमक, चिकनाई, एलब्यूमिन, निशास्ता, पानी सभी अंश एक स्थान में विद्यमान हैं। ये वे आहार द्रव्य हैं जो मनुष्य के लिये आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अब दूध में रहस्यमयी और जादू सा काम करने वाली ऐसी शक्तियाँ भी ज्ञात हुई हैं, जो शरीर के नशों और पुट्ठों पर न केवल अङ्कुश का सा ही प्रभाव दिखाती हैं अपितु उन्हें परिश्रम के साथ काम करने में लगाती है।

कार्य के पीछे कुप्रभाव या गिरावट नहीं हो पाती, जैसा कि अफीम कोकेन, क्लोरलहाईड्रेट, शराब आदि दूसरे अप्राकृतिक मादक वस्तुओं से होती है।

सबसे बड़ी बात यह है कि मादक वस्तुओं से बुरा अभ्यास पड़ जाता है और किसी न किसी अंश में इन से रक्त का दबाव भी बढ़ जाता है। इसके विरुद्ध दूध स्वाभाविक शक्ति देने वाला एक आवश्यक आहार और जोश दिलाने वाला वस्तु है जिसका दुष्प्रभाव प्रयोग करने के पश्चात् बिल्कुल नहीं होता। फ्रांसीसी गवर्नमेंट को जब दूध की यह विशेषता ज्ञात हुई तब उसने सब शराब खानों को आज्ञा दी कि शराब के स्थान में दूध के क्रय-विक्रय को बढ़ाने पर विशेष बल दिया जाय।

जीवन तथा मृत्यु में गोदुग्ध की सहायता

गोदुग्ध में वे सभी तत्त्व पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं जिनकी शरीर को आवश्यकता है। उनकी ही सहायता से शरीर बढ़ते, रग पुट्ठे दृढ़ होते और घिसे हुये रग पुट्ठों की मरम्मत होती रहती है। गो दुग्ध में सभी तत्त्व जीवन और स्फूर्ति देने वाले, जीवित रुप में विद्यमान रहते हैं। जिस प्रकार मृत्यु का प्रथम चिह्न रक्त विकृति है अर्थात् सफेद या पीला पड़ जाना है उसी प्रकार जीवन का प्रथम चिह्न गोदुग्ध है। जीवन और मृत्यु के संगम में मनुष्य जाति का पहला और अन्तिम शस्त्र गोदुग्ध ही है। इसकी सहायता से मनुष्य शरीर के २५ मिलीयन कोषाणु पलते बढ़ते और स्वस्थ रहते हैं। सामान्यता दूध और पानी दोनों द्रव पदार्थ प्रतीत होते हैं। परन्तु वस्तुतः गोदुग्ध में टमाटर से दुगने और गाजर मूली आदि से कुछ अधिक ठोस तत्त्व हैं। गाढ़े शरबत जैसा वस्तु वनस्पति और प्राणी में ही पाया जाता है।

प्रोटोप्लाज्म जीवन श्रृंखला की पहली कड़ी यहीं से आरम्भ होती है। इस में कार्बन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, सलफ, चूना, लोहा थोड़ी बहुत मात्रा में पाया जाता है। किस प्रकार से ये मसाले आपस में मेल खाते हैं। यह बात अभी तक ज्ञात नहीं हुई है। सबसे अधिक आश्चर्यप्रद बात यह है कि इस प्रोटोप्लाज्म में जीवन के चिह्न विद्यमान होते हैं। गो दुग्ध में पूर्वोक्त तत्वों के अतिरिक्त ल्यूकोसाइट सैल्ज पाये जाते हैं। जो कि रक्त के रक्ताणुओं की अपेक्षा

श्वेताणुओं से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। श्वेताणु जितने ही मनुष्य शरीर में अधिक होंगे उतना उसका शरीर रोगों से साम्मुख्य करने के लिये समर्थ होगा। जब किसी रोग का जर्म मनुष्य शरीर में प्रवेश करता है तो यही सफेद वर्दी वाले सिपाही मनुष्य दुर्ग की रक्षा के लिये रोगाणुओं से जा भिड़ते हैं और प्रायः उनको मार देते हैं। गोदुग्ध में जो श्वेताणु होते हैं वे ही मनुष्य शरीर में विद्यमान श्वेताणुओं की सहायता के लिये पहुंचते हैं। दूध का एक गिलास पीने के थोड़े ही काल के पश्चात् इन श्वेताणुओं की संख्या में अतिवृद्धि हो जाती है। अर्थात् उनकी संख्या दूध पीने के पश्चात् पहले से चौगुणी हो जाती है मनुष्य के शरीर में सवा पांच सेर से अधिक रक्त होता है। इस रक्त में इन श्वेताणुओं की संख्या रक्ताणुओं की संख्या की अपेक्षा बहुत कम होती है। अर्थात् ३५० के मुकाबले में केवल १ है। तो भी इनकी कुल संख्या ८० अरब के लगभग होती है। इन श्वेताणुओं का एक भाग अधिक लेसदार होने के कारण यह गुण रखता है कि वह सब प्रकार के कणों पर चिपट जाता है। इस विशेषता के कारण ही हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। यह कोष cell जिसका व्यास १ मिलिमीटर के १२५ वें भाग से अधिक नहीं होता, उस समय से अधिक महत्त्व पा गया है, जब से डा० मैकनीकाफ ने यह बात सिद्ध कर दी है कि जो बैक्टीरिया इनमें फंस जाते हैं वे इनके अन्दर मर जाते हैं। इस गुण के कारण ही उसने इनका नाम Phagocytea cell (खा जाने वाले कोष) रक्खा है। इनकी इस क्रिया का नाम फैगोसाइटोसिस है। इनका जीवन हमारे द्वारा देने योग्य है। परन्तु इसकी ओर अभी तक बहुत कम खोज की गई है।

घोड़े के रक्त में श्वेताणु भिन्न-भिन्न माध्यमों में प्रवेश कराये गये थे। इन माध्यमों में कार्बन के बहुत छोटे-छोटे कण विद्यमान थे। वे शरीर के तापमान में ३० मिनट तक रक्खे रहे। इनमें से बहुत-सों ने कार्बन को खा डाला। सूक्ष्म दर्शक यन्त्र से ज्ञान करने का प्रयत्न किया गया कि कितने श्वेताणुओं ने कार्बन के कणों को खाया है। इनके अनुपात से फैगोसाइटस के मान और मूल्य (कदर और कीमत) का पता चला है। फैगोसाइट ने अपने असली माध्यम अर्थात् रक्त के सीरम में रखे जाने पर ६०० में से ३०० कार्बन के कणों को खा लिया अर्थात् ५० प्रतिशत ने कार्बन को खा लिया। रक्त में खटास आ जाने पर फैगोसाइ

टोसिस निर्बल पड़ जाता है । फैगोसाइटस आयु के अनुसार अपना काम करते हैं । सीरम में एसिड मिला देने से केवल ३० प्रतिशत ने ही कार्बन के कणों को खाया ।

अतः सर अलमोर्थ राईट ने यह सिद्ध कर दिया है कि कई प्रकार के बैक्टीरिया, इसके पहिले कि उन पर फैगोसाइट्स वार (हमला) करें मूर्च्छित किया जावे, बहुत समय बैक्टीरिया विष छोड़ते हैं और इसका प्रभाव फैगोसाइटोसिस पर बहुत खराब होता है। जीवित ही नहीं अपितु मरे हुये बैक्टीरिया में भी विष विद्यमान रहता है । कैल्सियम की थोड़ी मात्रा मिलाने से ही फैगोसाइट्स की क्रिया बहुत तीव्र हो जाती है । उदाहरण के लिए प्राकृतिक मीडियम में ५ प्रतिशत कैल्सियम क्लोराइड के बढ़ाने से फैगोसाइट्स की शक्ति में १२ प्रतिशत वृद्धि हो गई । यह प्रभाव और भी प्रत्यक्ष हुआ जब कि यह कैल्सियम की मात्रा इन फैगोसाइट्इस की अपेक्षा जो प्राकृतिक सीरम में थे कैल्सियम क्लोराइड आफ सोडियम के घोल में रखे हुये फैगोसाइट में बढ़ा दी गई ।

कैल्शियम के साथ जो प्रयोग किया गया उस प्रयोग में कैल्सियम के आने के पश्चात् प्रतीत हुआ कि फैगोसाइट्स का काम नशे जैसा, अर्थात् बहुत तीव्र प्रभाव होता है। बहुत से डाक्टर निमोनिया—हृदय की शक्ति में क्षय में स्पर्श जन्य रोगों में कैल्सियम का बहुत अधिक प्रयोग इसीलिये करते हैं । जो लोग चूने के भट्टों में काम करते हैं उन पर क्षय का आक्रमण कभी नहीं सुना गया । हौलैण्ड के चूना बुझाने वाले व्रणों को चूना लगाकर ठीक कर लेते हैं ।

सूचना—सभी पदार्थ थोड़ी मात्रा में मिलाने से अच्छा प्रभाव देते हैं। परन्तु अधिक मात्रा में मिलाने से उनका प्रभाव खराब हो जाता है क्योंकि ये फैगोसाइट्स की क्रिया को घटा देते हैं अर्थात् प्रोटोप्लाज्म को चेष्टा रहित स्तब्ध कर देते हैं ।

इस प्रकार घोड़ों के निमोनिया और गायों के थनों के रोगों में फ्रांस, डेन्मार्क, और हौलैण्ड में तारपीन का तैल जो चिकनाई में हल होने वाले और चिकनाई को हल करने वाले वस्तुओं को अधिक प्रमाण में लेने से फैगोसाइट्स की असली मात्रा को नहीं बढ़ा सकते । गाय का दूध स्वयं फैगोसाइट्स को रक्त में बढ़ाता है ।

यदि किसी अवस्था में अजीर्ण, आमवात गठिया, एसिडिटी हो तो गौ का दूध फैगोसाइट्स को नहीं बढ़ायेगा। क्योंकि इन रोगों में रक्त में अम्लता बढ़ जाती है अम्लता दूर करने के लिये चूने का पानी या खाने का सोडा दूध में मिलाकर देना चाहिये।

गो दुग्ध के महत्व के सम्बन्ध में डाक्टरों की सम्मतियां

१. कुष्ठ रोग के लिये गाय के दूध का सेवन लाभदायक है। रोगी को नमक खाना छोड़ देना चाहिये। तीफ तुल मोमिन पुस्तक में यह भी लिखा है कि गाय का दूध आयु को बढ़ाता है और यकृत् को पुष्टि देता हैं।

२. यूनान का प्रसिद्ध वैद्य वू अली सीना लिखता है कि दूध पाचन शक्ति वर्धक और बुद्धि वर्धक है। मृगी, सुजाक और पाण्डुरोग के लिये अत्यन्त लाभदायक है। शरार को सुडौल बनाता है।

३. यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि गौ के दूध को ६० शतांश पर गर्म करने से उसके विटामिन पर प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु ९८ शतांश पर दस मिनट तक रखने से उसकी स्कर्वी रोग की नाशक शक्ति नष्ट हो जाती है। दूध के विटामिन दूध देनें वाले पशुओं में दूध देने का समय लम्बा होने से अंतिम दिनों में नहीं रहते। गौ का दूध भी स्कर्वी रोग को हटाने की शक्ति नहीं रखता। ऐसा अनुमान होता है कि स्वयं गौ के दूध में, अर्थात् जब ब्याने के थोड़े दिन रह जायें तब खारों के बढ़ जाने से स्कर्वी हटाने का गुण नहीं होता। क्योंकि बच्चों में माँ का दूध पिलाने से भी स्कर्वी रोग हो गया।

४. दूध को उबालने से कैल्सियम स्ट्रेट अलग होकर नीचे बैठ जाता है।

५. जैसा कि शराब, अफीम, कोकेन, इत्यादि नशे वाले वस्तुओं से अप्राकृतिक शक्ति उत्पन्न होने के पश्चात् अत्यधिक निर्बलता अनुभूत होती है। इनके प्रयोग से रक्त का दबाव भी बढ़ जाता है। इसके विपरीत गौ का दूध स्वाभाविक दशा में शक्ति और जोश दिलाने वाला उन्मादक पदार्थ है। इसका प्रयोग करने के पश्चात् कोई भी कुप्रभाव नितान्त नहीं होता।

६. अमेरिकन दुग्धालयों के वैज्ञानिक अपने अन्वेषण के आधार पर लिखते

हैं कि गो दुग्ध के इस महत्त्व के कारण ही हिन्दू लोगों के धार्मिक ग्रन्थों में भोजन में और यज्ञों में गौ के दूध और मक्खन तथा घी को एकमात्र उपयोग करने के लिये कहा गया है।

७. होपकिन साहब जिन्होंने प्लेग के टीके का अविष्कार किया है, कहते हैं कि गाय का घी प्रयोग करने से प्लेग के कीटाणु मर जाते हैं। इसलिये प्लेग के दिनों में प्रत्येक व्यक्ति को प्रातः काल गाय का दो चम्मच शुद्ध घी सेवन करने से प्लेग नहीं होता।

गाय और भैंस के दूध के गुणों में तुलना

१. भैंस का दूध—गर्म, भारी, वीर्यवर्धक, चिकना, वायुकारक, आलस्यजनक, मन्दाग्नि करने वाला तथा छूत की बीमारियों को लाने वाला, क्रोध, द्वेष भाव को पैदा करने वाला, स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। विशेषतया बच्चों, रोगियों, गर्भवती स्त्रियों, बूढ़ों और विद्यार्थियों के लिये हानिकारक है।

गाय का दूध—तेज, बल, वीरता, बुद्धि का विकासक पुरुषार्थ और रोग हारिणी शक्ति देने वाला है। तथा छूत की बीमारियों के कीटाणुओं को नष्ट करने वाला है।

कैरोटीन, आयोडीन, गाय के दूध में पाये जाते हैं भैंस के दूध में नहीं। कैरोटीन ही विटामिनों के प्रभाव को सुरक्षित और स्थिर रखता है। गाय के दूध में विटामिन ए. बी. सी. डी. ई. होते हैं। भैंस के दूध में विटामिन नाम मात्र होते हैं। ई० नहीं होता। कैरोटीन के अभाव से भैंस के दूध के विटामिन शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। विटामिन ए. भोजन को शीघ्र पचाता है। ए. विटामिन गाय के दूध में अधिक होता है भैंस के दूध में कम।

२. भैंस अधिक गर्मी और सर्दी को सहन नहीं कर सकती अतः इसके दूध का पीने वाला असहिष्णु होता है। पुरुषार्थी नहीं होता आलसी होता है।

३. एक ग्राम में एक ही भैंसा स्वतन्त्र रहना चाहता है दो भैंसें हों तो वे एक दूसरे के साथ लड़ेंगे और एक के मर जाने पर ही दम लेंगे। कई सांड एक ग्राम में प्रेम से रह सकते हैं। गाय दूसरी गाय के साथ प्रेम के साथ रहती

है । यदि किसी कारण एक गाय को दूसरी से पृथक् कर दिया जाय तो उसे अच्छा नहीं लगता, यह उसके प्रेम का ही गुण है । गाय अपना स्वार्थ पीछे किन्तु स्वामी का हित पहिले देखती है। गाय उच्च सभ्यता का प्रतिनिधि है, भैंस नहीं । गाय और भैंस का दूध पीने वालों के गुणों में भी यह भेद पाया जाता है। अतः गाय का दूध सभ्यता बढ़ाने वाला है, भैंस का नहीं ।

४. गाय के दूध में रहने वाला प्रोटीन सुगमता के साथ पच जाता है, क्योंकि वह भैंस के दूध के प्रोटीन से मृदु होता है। भैंस के दूध का प्रोटीन कठोर होने से दुष्पच होता है।

५. गाय के दूध के गुणों का प्रभाव अध्यात्म उन्नति के लिये विशेष सहायक है। भैंस के दूध के गुणों का प्रभाव अध्यात्म उन्नति में बाधक है।

गौ के दूध तथा भैंस के दूध का वैज्ञानिक विश्लेषण

लेखक डा० रामस्वरूप जी

पाश्चात्य देशों में अब से कुछ समय पहले गो दुग्ध के गुणों को भली-भाँति नहीं जानते थे। लेकिन अब अमेरिका, यूरोप वालों ने गो दुग्ध की वैज्ञानिक जाँच पड़ताल शुरू की है। इसमें सैकड़ों उपयोगी तत्त्व उचित अनुपात से मिले हैं। इन तत्त्वों को एक साथ अलग से बनाना असम्भव है। इसका स्थान लेने वाला ऐसा ही पौष्टिक दूसरा कोई पदार्थ नहीं मिला और न ही हो सकता है। दूध में प्राप्त होने वाले कुछ पुष्टिकारक तत्त्वों का अभी तक निर्णय भी नहीं हो सका है। वैज्ञानिक इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि जिस देश के लोग आयु, आरोग्य, बल वीरता, तेज वाले दूध, दही मक्खन आदि का अधिक सेवन करेंगे, वहाँ की जनता दीर्घ आयु वाली बलवान्, वीर और तेजस्वी होगी। उस देश की मृत्यु संख्या घट जावेगी और रोग भी कम हो जायेंगे। इसलिए अमेरिका, इङ्गलैण्ड, फ्राँस, इटली, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क, जर्मनी इत्यादि का सरकारें दूध, दही मक्खन के प्रयोग को बढाने का बहुत प्रयत्न कर रही हैं।

सब गायों का दूध एक समान नहीं होता। (१) गौ की जाति (२) गौ की आयु के अनुसार (३) उसके ब्याने की अवधि के अनुसार (४) सर्दी गर्मी मौसम के अनुसार (५) प्रातःकाल व सायंकाल के दूध में (६) गौ की खुराक के अनुसार (७) गौ के साथ प्रेम व कठोरता का व्यवहार करने से (८) स्वतंत्रता के साथ गोचर भूमि में चरने से (९) एक ही स्थान पर बांध कर खिलाने-पिलाने से (१०) गौ के भाव के अनुसार (११) रोगी नीरोगी होने से (१२) बछड़ा व बछड़ी होने से (१३) बच्चे के मौजूद होने या मृत्यु हो जाने इत्यादि बातों से दूध के स्वरूप व गुणों में बहुत भेद हो जाता है।

रङ्ग चिकित्सा से यह सिद्ध है कि सूर्य किरण द्वारा शीशियों के बनावटी

रङ्ग से पानी पर जो अद्भुत परिणाम होता है उससे होग नष्ट हो जाते हैं। ऐसे ही गायों के रङ्गों से भी होता है। (१) सफेद (२) लाल (३) पीली (४) ताँवे रङ्ग की (५) नीली (६) काली इत्यादि गायें जब धूप में घास चरती हैं तो अपने रङ्ग और मुलायम चमड़े के द्वारा बलवान् प्राण तत्त्वों का सूर्य किरणों से आकर्षण करके रोगों को नष्ट करने वाली शक्ति को प्राप्त करती हैं। अमेरिका, यूरोप में दूध द्वारा ही चिकित्सा करने के चिकित्सालय खुलते जा रहे हैं।

दूध एक अद्भुत अमृत है। वैज्ञानिकों ने इस अमृत का विश्लेषण करने से पता लगाया है कि दूध में जादू भरा हुआ है और इसको उत्पन्न करने वाली गाय भी कितनी ही विलक्षण जादूगरनी है। यह सर्वत्र सुख, सम्पत्ति, स्वास्थ्य, समृद्धि का साम्राज्य छा देती है। तभी तो गाय को कामधेनु कहा गया है। गौ के दूध में जिन तत्त्वों का पता लग चुका है वे निम्नलिखित हैं। इनके अतिरिक्त और भी तत्त्व हैं जिनके गुणों का अभी तक पता नहीं लग पाया है। दूध के प्रोटीन में १६ एमनोएसिड होते हैं, मक्खन में ११ प्रकार के चिकने एमिनो-एसिड होते हैं, और ६ विटामिन और ८ जीवाणुहीन किण्व और २५ धातुज तत्त्व तथा एक शर्करा, फासफोरस के योग १४, नत्रजनीय तत्त्व और कुछ अज्ञात तत्त्व।

(१) इन सब के लाभ अलग-अलग हैं। ये दाँत, हड्डी और आरोग्य के रक्षक, खून और दिल की कमजोरी को दूर करके बलवान् बनाते हैं और पाचक हैं। खुराक को पचाने व जिगर की खराबी और चमड़े की बीमारियों को दूर करते हैं।

(२) लैक्टोज, ग्लूकोज—ये पाचक रस हैं, हृदय और रक्त की निर्बलता को दूर करते व बलवान् बनाते हैं।

(३) मक्खन के ११ स्नेह पदार्थ हैं। वे शरीर में बल व गर्मी पहुँचाने के लिए आवश्यक हैं और मक्खन को गर्म करने से कई चिकने एसिड नष्ट हो जाते हैं और इस तरह से घी के गुणों में मक्खन के गुणों की अपेक्षा कमी हो जाती है।

(४) प्रोटीन- इसमें केसीन, एलब्यूमिन व ग्लोब्यूलीन होते हैं। यह माँस व तन्तुओं के बनाने में काम करते हैं। एलब्यूमिन—इसके गुण अण्डे की सफेदी की तरह हैं और इसमें गन्धक की पर्याप्त मात्रा होती है। ग्लोब्यूलिन—यह

बड़ी जरूरी है । यह कृमियों वाली बीमारी से शरीर को बचाती है। एलब्यूमिन स्त्री के दूध से गौ के दूध में अधिक होता है। इसलिए यह अधिक उत्तम व श्रेष्ठ है।

(५) ऐन्जाइम्स—ये पाचक रस हैं और विष से बचाने वाले हैं। गर्म करने से सुस्त पड़ जाते हैं। अधिक गर्मी से मर जाते हैं।

(६) खाद्योज—ये महत्त्वपूर्ण हैं। शरीर को बढ़ने व स्वास्थ्य को ठीक रखने के चौकीदार हैं। खून के साथ बहने वाला मसाला अगर कहीं गलत रास्ते पर जा रहा है तो उसे उचित स्थान की ओर भेज देते हैं अभी तक इनका पूरे तौर पर काम समझ में नहीं आया है।

गौ और भैंस के दूध के गुणों में भेद

१. गाय का दूध मधुर, स्निग्ध, शीतल, वात-पित्त कफनाशक, फेफड़े के लिए लाभकारी, क्षय रोग को दूर करने वाला तथा नस और नाड़ियों को स्निग्ध करने वाला है। अस्थिमार्दव से क्षीण होने वाले बालक के लिए गाय का दूध अमृत के समान प्राणवर्धक है। जिन बालकों के नेत्रों की ज्योति क्षीण हो गई है या जो रक्त क्षय और पाण्डु रोग से पीड़ित हैं, उनके लिए भी यह अत्यन्त उपकारी औषध है। बराबर सेवन करने से सभी व्याधियां दूर होती हैं बुढ़ापा शीघ्र नहीं आता। धारोष्ण पीने से अमृत तुल्य है। यह दो घण्टे में पचता है।

भैंस का दूध उपर्युक्त कई रोगों के लिए तो बिल्कुल निकम्मा है तथा कई रोगों पर कुछ लाभकारी है भी तो बहुत कम मात्रा में। वह मधुर, भारी, गर्म, वीर्यवर्धक, चिकना, कफ और वायुकारक, आलस्य पैदा करने वाला, मन्दाग्नि कारक तथा छूत की व्याधियों को बुलाने वाला है। धारोष्ण जहर है, नौ घण्टे में पचता है। पीने से नींद सताती है। अनिद्रा रोग में औषध रूप में दिया जाता है। उसमें बड़ी गर्मी रहती है। इसलिए भैंस के दूध आदि पदार्थों के गुण शीघ्र ही शरीर से बाहर हो जाते हैं और देर तक शरीर में शक्ति को नहीं रख सकते।

२. गौ के दूध में विटामिन ए० डी० बहुत अधिक होते हैं। गौ तेज धूप

में गोचर भूमि में चर कर अपने दूध को सूर्य किरणों द्वारा उपयोगी बनाती है और भैंस धूप में नहीं चर सकती।

३. गोदुग्ध का प्रोटीन अधिक आसानी से पच जाता है। यह पुरुषार्थ, शान्ति, चुस्ती लाने वाला सात्विक आहार है और वीर्यवर्धक है। छूत के रोगों को भगाने वाला है। एक से दो घण्टे में पच जाता है।

४. गौ का दूध दैवी और भैंस का दूध आसुरी है। काम, क्रोध, लोभ, राग, द्वेष, आलस्य, मन्दाग्निकारक, गर्म, भारी, मन्द बुद्धि वाला और तामसी आहार है। भैंस के दूध के मक्खन के परमाणु जल्दी शरीर से खारिज हो जाते हैं। क्यों कि गर्म तासीर है यदि ३ वर्ष तक भैंस का दूध मक्खन काफी मात्रा में सेवन किया जावे और दुर्भाग्य से केवल रोटी-सब्जी ही मिले तो कमजोरी से सिर चकराने लगेगा। गौ के दूध, मक्खन, घी का पर्याप्त मात्रा में ३ वर्ष तक सेवन किया जावे और बाद में २ वर्ष तक गौ का दूध मक्खन घी प्राप्त न हो सके तो शरीर का बल वैसा ही बना रहेगा यह सिद्ध है। जैसे गोबर का खाद खेत में एक बार डालने से पाँच वर्ष तक प्रभावकारी रहता है। वैसे ही घी दूध को भी समझें।

५. एन्जाइम्स—खमीरा पैदा करने वाले तत्त्व जो भोजन पचाने में सहायता देते हैं और शरीर में पैदा होने वाले विष तथा टोमैन्स नाम के विष तत्त्वों को शरीर से अधिक निवारण करते हैं। भैंस के दूध में कम और गौ के दूध (कच्चे) में भैंस की अपेक्षा बहुत अधिक होते हैं।

६. गो दुग्ध में नमक तत्त्व भैंस के दूध की अपेक्षा अधिक पचाने योग्य होते हैं।

७. गाय के दूध में न्यूटिरीन तथा दूसरी कोमल चर्बियां अधिक रहती हैं। इसलिए जल्दी पच जाता है।

८. भैंस की अपेक्षा गाय के स्वाभाविक कच्चे दूध में पाचक रसों की प्रचुरता रहती है। और शरीर के विषों को दूर करती है। अतः गौ का दूध कुष्ठ एवं क्षय आदि रोगों को नष्ट करने वाला है।

वैज्ञानिक विश्लेषण

	पानी	स्नेहपदार्थ	शक्कर	प्रोटीन	क्षार
गाय	८६.२७	४.८०	४.७८	३.३२	.७३
माता (मानवीय)	८७.४१	३.७६	६.२६	२.२३	.३१
भैंस	८२.१४	७.४	४४.८१	४.७८	.८३

ऊपर के आँकड़ों से पता लगता है कि गाय और माँ के दूध में बहुत समानता है। इसलिए गाय के दूध में थोड़ा पानी और चीनी मिला देने से मनुष्य के बच्चे का पालन मजे में हो जाता है। क्यों न हो, गाय और माँ की प्रकृति में भी तो सादृश्य है। दोनों के ९-१० मास में बच्चा होता है, तथा दोनों के सात मास के बच्चे पैदा होने पर भी जी जाते हैं और आठ मास के मर जाते हैं। यही कारण है कि प्राचीन काल में गो दुग्ध पान करके ऋषि लोग संसार

गो दुग्ध और मधु सौन्दर्य के मूल कारण हैं डाक्टरों का यह अनुभव है कि धारण शक्ति को तीव्र बनाने तथा उसको टिकाये रखने में यह बहुत सहायक है। किन्तु यह गुण भैंस के दूध में नहीं है।

स्कौटिश—अनाथालय में इसका प्रयोग करके देखा गया तो भैंस का दूध पीने वाले बच्चे धड़ाधड़ बीमार पड़ने लगे। पूना "एग्रीकलचर" के अध्यापक राय बहादुर जे० एल० सहस्रबुद्धे ने इसका प्रयोग छोटे बच्चों पर करके देखा था। उनकी रिपोर्ट से पता लगता है कि बच्चे मन्द बुद्धि और रोगी होने लगे। गाय और भैंस के दूध का प्रयोग घोड़ी के बच्चों पर भी करके देखा जा चुका है। जो बच्चे भैंस के दूध पर पले थे, सुस्त थे तथा गर्मी सहन नहीं कर सकते थे तथा घोड़ों के स्वाभाविक गुणों से रहित थे। डा० एन० एन० गोडबोले ने भी भैंस और गाय के दूध की पूरी-पूरी खोज की है और बतलाया है कि कार्बोहाइड्रेट आदि वर्तमान होने के कारण गाय की मलाई ऐसी सुपच और मानव स्वभाव के अनुकूल है कि तुरन्त पचकर वीर्य उत्पन्न करती है। इसके विपरीत भैंस के दूध की मलाई को पचाने के लिए मनुष्य की अन्तड़ियों को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। भोजन पचाने के लिए अन्तड़ियों में नमक है।

पर भैंस के दूध को पचाने के लिए वह पर्याप्त नहीं है फलतः जिस नमक से हड्डी बनती है, अन्तड़ियों को उसे हठात् भैंस के दूध को पचाने में खर्च करना पड़ता है। यही कारण है कि छोटे बच्चों को यह दूध नहीं पचता तथा इसके व्यवहार से उनका यकृत् बेकाम हो जाता है। साथ ही गाय के घी में आयोडीन है जो भैंस के घी में नहीं उसमें विटामिन "ए" बहुत है वह जल्दी पचता है। दर्द और बीमारी के काम में आता है। ये सब बातें भैंस के घी में नहीं हैं। हम लोग मूर्ख हैं कि बच्चों को भैंस का दूध पिला-पिलाकर उन्हें मन्दबुद्धि बना रहे हैं।

बहुधा यह प्रश्न उठाया जाता है कि भैंस के दूध में गाय से दुगुनी मलाई होती है तथा भारतवर्ष के दुग्धोत्पादन में ५० प्रतिशत भाग भैंस के दूध का ही है। राजकीय कृषि अनुसंधानसंघ के पशुजननविभाग का पांचवाँ सम्मेलन सन् नवम्बर १९४२ में दिल्ली में हुआ था। उसमें इन पंक्तियों के लेखक ने बिहार की ओर से गैर सरकारी सदस्य के रूप में मनोनीत होकर भाग लिया था। वहाँ भी गाय भैंस वाला प्रश्न उपस्थित हुआ था। इन पंक्तियों के लेखक की भैंस विरोधी युक्तियों के विरोध में उड़ीसा सरकार के डिपुटी वेटरिनरी डाइरेक्टर डा० कोडा ने यही बातें कही थीं। मद्रास सरकार के भेड़ विशेषज्ञ मि० आर० डब्ल्यू लिटल वुड ने तो यहाँ तक कहा था कि गाड़ी में जब हम आ रहे थे, तब एक आदमी ने हमको बतलाया कि देखो भैंस अनाज का "बारा" खा रही है। तात्पर्य यह है कि मोटा खराब और रद्दी चारा खाती है। गाँधी जी के गोसेवा संघ के सदस्य सरदार बहादुर सर दातार सिंह ने भी दबी जबान से भैंस का थोड़ा पक्ष लिया था, उसी प्रकार आसाम और बंगाल के सदस्यों ने भी।

ऊपर की बातों पर यदि ठण्डे दिल से विचार किया जाय तो यह धारणा बिल्कुल गलत निकलेगी। कल्पना कीजिये, एक रुपया खर्च करने पर एक लंगड़ा आम मिला और दो रुपये खर्च करने पर दो खट्टे आम मिले, तो आप ही सोचें कि एक रुपये वाला सौदा ठीक रहा या दो रुपये वाला। भैंस से गाय के दूध में आधी मलाई है, पर गाय के पालन में भैंस के पालन से खर्च भी तो आधे से कम ही पड़ता है। गाय के दूध-घी के गुणों का चौथाई भाग भी तो इसमें नहीं है। "स्वर्ण भस्म" अत्यन्त कम मात्रा में खाई जाती है, तो क्या थाली भर दाल-भात उसकी बराबरी कर सकेंगे। भैंस को अलग कर यदि हम चारा बचा सकें

तो उससे पलकर हमारी गायें खूब प्रचुर मात्रा में दूध देने लगेंगी और फिर से पूर्ववत् दूध की नदियाँ वहनें लगेंगीं। यूरोप में गाय के प्रति सेर दूध पीछे जितनी मलाई निकलती है, वह हमारी गायों की मलाई के अनुपात से आधी है। यदि भैंस के विना उन लोगों का काम चल सकता है, जो सिर्फ दूध के लिये ही गायें पालते हैं तो दूध और किसान के लिये हमारा गाय को पालना कितना बड़ा महत्त्व रखता है। दूसरी बात यह है कि "भैंस मोटा-मोटा रद्दी चारा खाती है पर अच्छी फसल चोरी करके चराते हैं।—यह वे ही जानते हैं जो देहात में रहते हैं। साथ ही एक भैंस को चराने के लिये एक विशेष चरवाहे की आवश्यकता है लेकिन आठ दस गायों के लिये एक ही चरवाहा पर्याप्त है।

गौ के मुकाबले में भैंस नहीं ठहर सकती

१—मिस्टर स्मिथ भारत के राजकीय दुग्धालय के विशेषज्ञ ने कहा था कि यदि मुझे २५ साल का वक्त मिले और आवश्यक धन खर्चने को दिया जाय तो मैं इस अन्तर में इस किस्म की गायें पैदा कर दूंगा जिनके मुकाबले में भैंस किसी हालत में नहीं ठहर सकेगी। धन की दृष्टि से भैंस गाय का मुकावला न करने के कारण दूध देने वाले जानवरों की सूची से निकाल दी जावेगी। अब भी हिन्दुस्तान में १०००० पौंड वार्षिक दूध देने वाली गायें मिलती हैं और भैंस एक भी नहीं और न भविष्यत् में मिलने की आशा है।

२—भारत की गाय सब विलायती गायों से वेहतर है। बैंल तो दुनियां में सबसे वेहतर माने गये हैं। विलायती गाय ३० पौंड खुश्क चारा खाकर ६० प्रतिशत दूध में परिवर्तित करती है और भारतीय गाय २० पौंड चारा खाकर उसे ७५ प्रतिशत दूध में बदल देती हैं। इस प्रकार पता लगता है कि भारतीय गाय १० पौंड खाकर भी १५ प्रतिशत दूध अधिक बनाती हैं।

चरक में दुग्ध के गुण

महर्षि अग्निवेश ने चरकशास्त्र के सूत्र स्थान के प्रथम अध्याय में सभी दूधों के गुणों के विषय में इस प्रकार लिखा है—

अतः क्षीराणि वक्ष्यन्ते कर्म चैषां गुणाश्च ये ॥१०५॥

अब दूधों का वर्णन किया जायगा। उनके कार्य (उपयोग) और गुण भी कहे जायेंगे।

अविक्षीरमजाक्षीरं गोक्षीरं माहिषं च यत्।
उष्ट्रीणामथ नागीनां बडवायाः स्त्रियास्तथा ॥१०६॥
प्रायशो मधुरं स्निग्धं शीतं स्तन्यं पयःस्मृतम्।
प्राणिनां बृंहणं वृष्यं मेध्यं बल्यं मनस्करम् ॥१०७॥

(१) भेड़, (२) बकरी, (३) गौ, (४) भैंस, (५) ऊंटनी, (६) हथिनी, (७) घोड़ी, (८) स्त्रियों (महिला) के दूध के गुण इस प्रकार हैं—

दूध के गुण

सामान्य रूसे दूध केगुण प्रायः मधुर, स्निग्ध (चिकना), शीत, स्तन्य, (स्तनों में दूध बढ़ाने वाला), प्राण तृप्ति करने वाला, बृंहण मांस बढ़ाने वाला, वृष्य (वीर्य वर्धक) रतिशक्ति बढ़ाने वाला, मेध्य (मेधा बुद्धि वर्द्धक), बलवर्द्धक, मनस्कर मन को प्रसन्न करने वाला होता है।

जीवनीयं श्रमहरं श्वासकासनिबर्हणम्।
हन्ति शोणितपित्तं च संधातं विहतस्य च ॥१०८॥
सर्वप्राणभृतां सात्म्यं शमनं शोधनं तथा।
तृष्णाघ्नं दीपनीयं च श्रेष्ठं क्षीणक्षतेषु च ॥१०९॥

जीवन शक्ति का वर्धक, थकावट दूर करने वाला, रक्तपित्त को नाश करने वाला, विहत चोट के कारण टूटी हड्डी को भी जोड़ने वाला है। वह सब

प्राणियों के धातुओं को अनुकूल पड़ता है, दोषों को शान्त करता और मलों का शोधन करता है। प्यास को बुझाता, मन्दाग्नि को तीव्र करता है, दुर्बलता और घाव लगने पर श्रेष्ठ है।

पाण्डुरोगेऽम्लपित्ते च शोषे गुल्मे तथोदरे ।
अतिसारे ज्वरे दाहे श्वयथौ च विधीयते ॥११०॥
योनिशुक्रप्रदोषेषु मूत्रेषु प्रदरेषु च ।
पुरीषे ग्रथिते पथ्यं वातपित्तविकारिणाम् ॥१११॥

पाण्डु रोग, अम्लपित्त शोष (सूखा) गुल्म पेट में गोला गांठ का बढ़ना तथा उदर रोग, अतिसार, पतले दस्त आना, ज्वरदाह सूजन इनमें दूध को पथ्य (हितकारी) सेवनीय कहा है। योनि के दोष, वीर्य के दोष, मूत्र के रोग, प्रदर के रोग, मल की गांठे (सुद्दे) पड़ जाने पर, वात पित्त के रोगियों को दूध पथ्य लाभप्रद है।

नस्यलेपावगाहेषु वमनास्थापनेषु च ।
विरेचने स्नेहने च पयःसर्वत्र युज्यते ॥११२॥
यथाक्रमं क्षीरगुणानेकंकस्य पृथक् पृथक् ।
अन्नपानादिकेऽध्याये भूयो वक्ष्याम्यशेषतः ॥११३॥

नस्य (नाक से सूंघने वा नेती करने) लेप करने, स्नान करने, वमन और आस्थापन (निरुद्ध वस्ति लेने) विरेचन और स्नेहनादि प्रायः सभी कार्यों (पंचकर्मों) में दूध का प्रयोग होता है। क्षीरों दूधों के पृथक्-पृथक् गुण अन्नपान विषयक अध्याय में विस्तार से पुनः आगे कहेंगे)।

प्रायः सभी दूध मधुर होते हैं। बकरी का कुछ कसैला और ऊंटनी का दूध कुछ नमकीन रूखा और गरम होता है। प्रभाव में ओज बढ़ाने वाला होने से दूध से मन का सामर्थ्य बढ़ जाता है। रक्त पित्त में बकरी के दूध को पांच गुणा जल मिलाकर देने का विधान मिलता है। इन सभी दूधों की चर्चा पहले भा कर चुके हैं। चरक शास्त्र का उद्धरण देकर पुनः लिखने का यही प्रयोजन है कि चिकित्सा शास्त्र में चरक सर्वश्रेष्ठ और प्रमाणित माना जाता है और प्राचीन भी है।

गो दुग्ध के गुण

बाखड़ी गाय के दूध के गुण—वाखरी जिसे संस्कृत में वष्कयिणी कहते हैं उस गाय का नाम है जिसे दूध देते अधिक समय अर्थात् सात आठ मास बीत गये हों जब गौ दूध देना बन्द कर देती है उससे दो मास पूर्व का दूध सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। ग्रामों में यह प्रसिद्ध है कि अमुक व्यक्ति में बल इसलिये अधिक है इसने बाखड़ी धेनु का दूध पिया है। भावप्रकाश निघण्टु में इस सत्य का बलपूर्वक मण्डन किया है।

वष्कयिण्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत्पयः ॥१२॥

दुग्ध वर्ग

अर्थात् बाखरी गाय का दूध तीनों दोषों का नाश करने वाला तथा तृप्तिकारक और बल को भी देने वाला है। वात पित्त और कफ तीनों दोषों से उत्पन्न होने वाले रोगों को जो दुग्ध नष्ट करे वह सर्वश्रेष्ठ दूध बाखरी गाय का होता है। इसीलिये गावों में अपने बछड़ों को बलवान् बनाने के लिये किसान बाखरी गाय का दूध सारा ही पिला देते है। गाय जब जंगल में चरने के लिये जाती हैं तो किसान उन बाखरी गायों के साथ ही बछड़े छोड़ देते हैं बछड़े दिन में उनके साथ रहते हुये चरते भी हैं दूध भी चूंघते रहते हैं। इच्छानुसार दूध पीने और चरते समय भाग दौड़ व्यायाम करने से बछड़े बहुत ही सुन्दर और बलिष्ठ हो जाते हैं।

अवस्था भेद से दूध के गुण

तरुणीनां गवां दुग्धं मधुरं च रसायनम्।
त्रिदोषशमनं चैव वृद्धायाः दुर्बलं मतम्॥

तरुण (युवावस्था वाली) गौ का दूध अन्य गायों की अपेक्षा अधिक मधुर (मीठा और गुणकारी) रसायन आयु बढ़ाने वाला और त्रिदोष नाशक होता है, और वृद्ध गाय का दूध दुर्बल बलहीन होता है।

प्रथम प्रसूता का दूध

प्रथमं च प्रसूताया निःसारं गुणहीनकम् ।
नूतन प्रसूतगोदुग्धं रूक्षं दाहकरं मतम् ॥
रक्तदोषस्य जनकं पित्तलं मतं बुधैः।

जो गौ पहली वार व्याई है उसका दूध सारहीन (शक्ति रहित) और गुण हीन होता है। और जो गाय नई कुछ दिन की ही व्याई हुई है उसका दूध रूखा, दाहकारक माना जाता है विद्वान् लोग उसे रक्त (खून) को दूषित करने वाला मानते हैं और वह पित्त को दूषित करने वाला भी होता है। वह पीने योग्य नहीं होता। न उसमें स्वाद ही होता है न शक्ति और न ही अन्य गुण होते हैं। इसलिये विचारशील गोपालक प्रथम मास में जितना दूध वछड़ा वा वछिया पीकर पीकर पचा सकता है वह उसे पिला देते हैं। शेष वचा हुआ दूध निकाल उसे उवाल कर गुड़ मिलाकर गाय को पिला देते हैं। इससे प्रसूता गाय की निर्वलता भी दूर होती है और वच्छा वछिया भी तगड़े वलवान् हो जाते हैं।

बालवत्सविवत्सानां गवां दुग्धं त्रिदोषकृत् ।

सद्यः प्रसूता गाय जिसके वच्छे वच्छिया छोटे हैं और जिसके वच्चे जीवित नहीं हों, मर गये हों, ऐसी छोटे वछड़े वाली और विना वच्चे वाली गाय का दूध त्रिदोष को कुपित करने वाला होता है।

अर्थात् उसे पीना नहीं चाहिये। अन्यत्र भी कहा है—विवत्सबालवत्सायाः पयो दोषलमीरितम्

धन्वन्तरीयनिघण्टु सुवर्णा० १७६/१७७

जिन गायों का वछड़ा नहीं है, मर गया है, अथवा जिनका वछड़ा छोटा है उनका दूध दोषकारक है। इसी प्रकार वहुत अधिक समय की व्यायी हुई गाय का दूध भी अच्छा नहीं होता।

चिरप्रसूतादुग्धं मधुरं तु दाहकं पटु ।

अर्थात्—जिस गाय को व्याये वहुत दिन हो गये अर्थात् एक वर्ष से भी अधिक समय बीत गया है उसका दूध मधुर मीठा होते हुये भी नमकीन खारी

हो जाता है। और दाह जलन उत्पन्न करता है। पीने योग्य नहीं होता।

गर्भवती गौ के दूध के गुण

सगर्भायाः समुद्दिष्टं त्रिमासोर्ध्वं च पित्तलम्।
क्षारं च मधुरं चैव मतं वै शोथकारणम्॥

जिस गौ को गर्भिणी (ग्याभन) हुये तीन मास वीत गये हैं उसका दूध पित्त कारक अर्थात् उष्ण प्रकृति वाला, खारी नमकीन, मधुर और सूजन करने वाला होता है।

आहार का दूध पर प्रभाव

स्वल्पान्नभक्षणाज्जातं क्षीरं गुरु कफप्रदम्।
तत्तु वर्ण्यं परं वृष्यं सुस्थानां गुणदायकम्॥
पलालतृणकार्पासबीजजातं गुणं हितम्॥

जो गौ थोड़ा अन्न खाती है उसका दूध भारी (अधिक घृत वाला) कफ कारक, वर्ण को सुन्दर करने वाला, अत्यन्त वीर्य वर्द्धक स्वास्थ्य प्रद और स्वास्थ्य मनुष्य के लिये गुणदायक और हितकारक होता है। जो पलाल चरी (कड़वी) ज्वार, घास (हरी घास, हरे जौ जई आदि) विनौला आदि खाती हैं उसका दूध अत्यन्त हितकर होता है। जो आहार वा खान पान गौवें करती हैं उसका प्रभाव उसके दूध घी पर भी पड़ता है। जो स्वाभाविक रूप से जंगल गोचर भूमि में हरी-हरी घास जड़ी बूटियां खाती हैं। हरे-हरे यव (जौ), जई, हरे उड़द हरे मूंग और हरी ज्वार, चरी, हरी मक्का और हरी बरसिम आदि घास खाती हैं चाहे उनको खाने को अन्न थोड़ी ही मात्रा में मिले उनका दूध घी बहुत गुणकारी, स्वास्थ्य प्रद, वल और शक्ति का भंडार होता है जैसा कि पहले लिख चुके हैं। घी बढ़ाने के लिये बिनौला गौ भैंस आदि दुधारू पशुओं का उत्तम भोजन है। भारत के किसानों में हरयाणा के किसान पशु-पालन में सबसे आगे हैं। इसलिये यहां के गाय, बैल, भैंस, ऊंट आदि पशु अपने गुणों के कारण सर्वोत्तम माने जाते हैं। इसीलिये हरयाणा से करोड़ों रुपये का पशुधन गाय आदि अपने गुणों के कारण भारत के सभी प्रान्तों में प्रतिवर्ष जाता है। हरयाणा की भूमि में

उत्पन्न हुआ चारा और अन्न भी अन्य प्रदेशों की अपेक्षा अधिक गुणों वाला है। क्योंकि यहां का गो-दुग्ध केवल पौष्टिक भोजन ही नहीं, परन्तु अनेक प्रकार के भयङ्कर रोगों को दूर करने के लिये अत्यन्त लाभप्रद औषध भी है। इस ग्रन्थ में इसी पर विचार किया है कि किस रोग के रोगी को दूध किस प्रकार लेना चाहिये।

चतुर्थभागं सलिलं निधाय यत्नाद्यदावर्तितमुत्तमं तत्।
सर्वामयघ्नं बलपुष्टिकारि वीर्यप्रदं क्षीरमतिप्रशस्तम्॥

—राजनिघण्टु, क्षीरादि वर्ग १५/२३१

दूध में १/४ चौथा भाग जल मिलाकर औटायें, जब वह जल, जल जावे तब सेवन करें। वह दूध श्रेष्ठ, सर्वरोगनाशक, बलवर्द्धक, पुष्टिकारक, वीर्य जनक और अत्यन्त प्रशंसा योग्य है। रोगियों को इसी प्रकार पका कर दूध पान करायें। यह सभी रोगियों के लिये सामान्य नियम है।

वातरोग के कितने ही रोगियों को मैंने गो-दुग्ध भोजन के रूप में देकर उनकी चिकित्सा की, वे शीघ्र ही भले-चंगे हो गये जिनके हाथ वा पैर वायु के कारण सूख जाते हैं ऐसे कितने ही रोगी दुग्ध सेवन के साथ चिकित्सा करके मैंने ठीक किये हैं।

एक रोगी को लकवा मार गया उसका एक हाथ, एक पैर एक कान, एक आंख तथा एक जिह्वा बेकार हो गये। न हाथ उठता था, न पैर से चल सकता था, एक आँख से दीखना तथा एक कान से सुनना बन्द हो गया। बोलता तो वह सर्वथा नहीं था। उसे औषध चिकित्सा के साथ भोजन के रूप में पर्याप्त मात्रा में गो-दुग्ध और गो घृत का सेवन कराया। जादू समान प्रभाव हुआ। हाथ-पैर कान आँख सब पूर्ववत् कार्य करने लगे, जिह्वा से भी बोलना आरम्भ कर दिया। रोगी लोभी प्रकृति का था, जितना दुग्ध हम सेवन कराना चाहते थे। बार-बार समझाने पर भी उसने उतने दुग्ध का सेवन नहीं किया अतः जिह्वा में कुछ तुतलापन रह गया। वायु के सैंकड़ों रोगियों पर मैंने गोदुग्ध का अनुभव किया। जादू के समान आश्चर्य जनक प्रभाव होता है। मैं यह यत्न करता हूँ कि रोगी केवल गोदुग्ध पर ही रहे, भोजन वा जल कुछ भी न ले। भूख लगे तब दूध, प्यास लगे तब

दूध । यह तो सामान्य गायों के दूध का प्रभाव है । यदि काली गाय प्राप्त हो और उसके दूध का सेवन वातरोगियों को कराया जाये तो सोने पर सुहागे वाला कार्य हो । यदि लोग घरों पर गाय रखें, गायों के दुग्ध का सेवन करें, तो वायु के रोग क्या कोई भी रोग नहीं हो सकता ।

रक्त-पित्त

हमारे पड़ोस में एक निर्धन किसान को मुख से पर्याप्त मात्रा में खून की वमन होती थी। सारा रक्त दो चार वमन होकर निकल जाता था और वह मृत प्रायः हो जाता था । उसके घर पर गाय थी, उसके दूध से उसे कुछ लाभ होता था । जिन दिनों वह दूध देती थी, उसका रोग दवा रहता था । निर्धन होने से कोई चिकित्सा भी नहीं कर सकता था । उसने अपने एक लड़के को पाली रखकर जो वच्छिया उस गाय ने दी पालनी आरम्भ कर दी । कुछ वर्ष में उसके घर गाय ही गाय हो गई । पर्याप्त मात्रा में गोदुग्ध हो गया । गोदुग्ध के सेवन से वह रोग भी जाता रहा । अनेक वछड़ों के बैल वन गये, वछड़ियों की गायें वन गई । गोदुग्ध से भयंकर रोग भी समाप्त हो गया ।

नकसीर और तिल्ली पर गोदुग्ध

हमारे एक होनहार ब्रह्मचारी को नकसीर वहुत आती थी। यहाँ तक कि जाड़े में भी नकसीर आती, अनेक चिकित्सायें की, किन्तु पूर्ण लाभ नहीं हुआ । धूप में चलने, थोड़ा परिश्रम वा व्यायाम आदि करने से नकसीर आने लगती थी । मैंने महावांसादि घृत जिसमें गोघृत तथा गोदुग्ध पड़ता है, वनाकर गोदुग्ध के साथ सेवन कराया । जादू के समान प्रभाव हुआ । नकसीर उसके सेवन से पहिले ही दिन रुक गयी, नहीं तो एक दिन रात में दो-दो वार हो जाती थी । गोमाता का दूध यथार्थ में अमृत है ।

२०-२२ वर्ष पूर्व की वात है । हमारे गुरुकुल में नवीन प्रविष्ट ब्रह्मचारियों तथा कई कर्मचारियों के पेट में तिल्ली (प्लीहा) वढ़ी हुई थी । इनकी चिकित्सा के लिये मैंने गाय के धारोष्ण दूध का सूचीवेध (इंजैक्शन) किया । रोगानुसार एक सप्ताह वा एक मास में एक वार इंजैक्शन करता था अधिक से अधिक चार इंजैक्शनों में ही सवकी तिल्लियां कट गईं । आश्चर्य- जनक लाभ हुआ ।

आहार का दुग्ध पर प्रभाव

गौ का प्रिय भोजन हरे यव, जई, मूंग, उड़द आदि हैं इनके विषय में लिखा है। —

इक्ष्वाद्या माषपर्णाद्या ऊर्ध्वंभृङ्गी च याभवेत्।
तासां गवां हितं क्षीरं भृतं वाऽभृतमेव वा ॥

जो गाय ईख के हरे गोले, (पत्ते) माष (उड़द), मूंग आदि के हरे पत्ते खाती हैं, और जिन गायों के सींग ऊपर को उठे हुए होते हैं उन गायों का दूध चाहे पक्व हो चाहे अपक्व ठण्डा हो चाहे गर्म, वह सर्व प्रकार से हितकर होता है। गौवें सात्विक आहार प्रिय होती हैं। शुद्ध निवास स्थान शुद्ध भोजन और पीने को शुद्ध जल हो उनको प्रिय होता है। इसी सत्य को वेद भगवान् ने इस प्रकार कहा है। "गावः शुचयो देवा अरेप्सः" गायें सदैव शुद्ध और पवित्र होती हैं, और देवता लोग सदैव पाप रहित होते हैं। "गावो न यवसेष्वा" गौवें हरे जौ जई हरी घास में रमण करती इन्हें आनन्द से खाती हैं। जौ जई आदि सब से सात्त्विक अन्न है। हम गायों के लिए वरसिम, घास और जौ अपने खेतों में एक साथ इकट्ठे बोते हैं। अनेक वार इन्हें इकट्ठे काटकर (विना कुट्टी काटे) गौवों के खाने के लिए इकट्ठे डाल देते हैं। अनेक वार यह परीक्षण किया है, गाय पहले जौ (यवों) को छाँट कर खा लेती हैं फिर जब जौ नही रहते तो वरसिम घास को पीछे खाती हैं इससे यही सिद्ध होता है सबसे सात्विक अन्न वा चारा हरा जौ गौ का सबसे प्रिय भोजन है। हरे जौ को खाने से गौवों का दूध वहुत अधिक और शीघ्र बढ़ जाता है। वेद का प्रमाण सोलह आने सच्चा है।

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्ती शुद्धाः अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परिवो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु ॥

अथर्ववेद ॥४।२॥

अर्थ : प्रजावती बहुत प्रजा वाली अर्थात् जिस गौ के बहुत बच्छे बच्छियाँ हों और वे सब जीवित हों, और जौ आदि उत्तम अन्न खाने वाली अर्थात्

जिनको उत्तम चारा हरे यव आदि भोजन प्रचुर मात्रा में मिलता हो, जो शुद्ध जल यथेच्छा से पीने वाली हो ऐसी गौवें सबसे उत्तम होती हैं उनकी सुरक्षा का वहुत अच्छा प्रवन्ध हो जिससे उन्हें चोर न चुरा सकें और पापी कसाई आदि भी उनको मारने के लिए न ले सकें। अर्थात् हिंसक कसाई आदि को न दी जायें। इस पवित्र वेद मन्त्र का भावार्थ यह है कि गौ का सर्वोत्तम भोजन और प्रिय भोजन जौ (यवादि) हरा घास है यदि गौवों को खाने को यह पर्याप्त मात्रा में मिलता रहे और उनके पीने के लिए शुद्ध जल इच्छानुसार शुद्ध प्रपाणों जलाशयों पर मिलता रहे अर्थात् गौवों के खान-पान और रहने के स्थान का वेद की आज्ञानुसार सुप्रबन्ध हो तो ऐसी गौवों का दूध यथार्थ में पीने योग्य अथवा अमृत ह ोता है। ऐसी गौवों के बच्छे वच्छियाँ मरते नहीं जीवित रहते हैं और वे वहुत संख्या में होते हैं अर्थात् ऐसी गाय वहुत वार ब्याती हैं। बीस वार तक अच्छी गायें ब्या जाती हैं धेनु वन जाती है और वे "दोग्ध्रीधेनुः बहुत अधिक दूध देने वाली वन जाती हैं। मैंने अपनी गौशालावों में चालीस वर्ष तक सैंकड़ों गायें पाल-पालकर खूब परीक्षण और अनुभव किया है। अच्छी गौवों की ही क्या सभी गौवों की चोर डाकुओं और हिंसक कसाईयों से रक्षा करनी चाहिए।

इसके प्रतिकूल जिन गौवों को सात्विक शुद्ध यवादि चारा वा अन्न खाने को नहीं मिलता और न ही उत्तम शुद्ध जल पीने को मिलता है, ऐसी गायें स्वयं रोगी रहती हैं तथा उनके वछड़े भी मरते हैं और उनका दूध भी पीने के योग्य नहीं होता। एक अपना अनुभव नीचे लिखता हूं।

एक वार तलाव ग्राम से एक श्वेत रंग की मोड़ी (कपिला) गाय मैं खरीद कर लाया। आकृति में वड़ी सुन्दर स्वस्थ, सुदृढ़, शरीर वाली हृष्ट-पुष्ट (तगड़ी) और दुधारू गाय थी। किन्तु उसमें सबसे वड़ा दोष यही था कि उसका कोई भी वछड़ा जीवित नहीं रहता था जो वछड़ा वा बछिया वह जनती थी वह इतना छोटा होता था कि उसका मुख दूध पीने के लिए गौ के स्तनों (थनों) तक नहीं पहुंचता था। जिनके घर से वह गाय मैं लाया उन्होंने यह बात स्पष्ट और सत्य वता दा थी कि यह अनेक वार ब्या चुकी है किन्तु इसी प्रकार छोटे बछड़े इसके उत्पन्न हुए, वे सभी मर गये, कोई जीवित नहीं रहता किन्तु दूध वह सेवा करने वाले सेवक को हर ब्यांत में देती रहती थी। अर्थात् वछड़े के अभाव में वह

अपने सेवक वा स्वामी से प्रेम करती थी और निरन्तर दूध देती रहती थी। दूध केवल अपने सेवा करने वाले को ही वछड़े के समान प्रेम करने से देती थी। उसके अतिरिक्त न किसी से प्रेम करती, न दूध ही देती थी।

हमने भी उसकी गुरुकुल में लाकर खूब अच्छी सेवा सुश्रूषा की और कुछ दिन में हमें भी वह प्रेम पूर्वक दूध देने लगी। मेरा वहुत वर्षों का अनुभव था कि सेवा से बड़ी-बड़ी मारने वाली शरारती गौवें भी दूध देने लगती हैं और सीधी हो जाती है। मैंने स्वयं सेवा करके यह कार्य किया था हमने अपने खेतों में गौवों के लिए बड़ी मात्रा में जौ वोया हुआ था अन्य गायों के साथ उस मोड़ी गाय को भी उसकी इच्छानुसार पेट भर कर हरे जौ खूब खिलाते रहे वेद की आज्ञानुसार हरे जौ सात्त्विक भोजन का यह प्रभाव हुआ कि उस गौ ने जब उस वार व्यायी तो बड़ा सुन्दर स्वस्थ और पूरे कद का बछड़ा दिया, और वह जीवित रहा। इसने यह सिद्ध कर दिया कि जो गौवें शुद्ध सात्विक खान-पान करती हैं और सुयवस हरे जौ खाता हैं उनके गर्भाशय के रोग ठीक हो जाते हैं और उनके बछड़े नहीं मरते। वे वेद की आज्ञानुसार यथार्थ में प्रजावती वन जाती हैं।

"यवेभ्यो गा वारयति मुद्गेभ्यो गा वारयति
माषेभ्यो गा वारयति"

महाभाष्यादि व्याकरण के ग्रन्थों में ये उदाहरण आये हैं इनसे यही सिद्ध होता है कि गौवों का प्रिय भोजन हरे जौ, हरे मूंग, हरे उड़द हैं मैंने ये तीनों हरे जौ, हरी मूंग, और हरे माष (उड़द) आदि अपनी गौवों को अनेक वर्षों पेट भर कर खिला कर अनेक वर्षों तक यह अनुभव किया है कि इनके खिलाने से गौओं का दूध पर्याप्त मात्रा में बढ़ जाता है और गाय इन्हें बड़े प्रेम से खाती हैं। ये तीनों चारे सात्विक हैं आज कल पशु पालक यह मानते हैं चना, चने की चूरी और चने का छिलका, खली और वरसम (घास) खिलाने से अधिक दूध बढ़ता है। यह ठीक है कि खिलाने से अधिक दूध बढ़ता है। परन्तु अपना निजी अनेक वर्षों का यह अनुभव है कि हरे जौ से अधिक दूध बनाने वाला हरा चारा और कोई नहीं है। अनुभव ने वेद की बात पर मोहर लगा दी और सिद्ध कर दिया कि हरा जौ ही गौवों का सर्वप्रिय, स्वास्थ्यप्रद और अधिक दूध बढ़ाने वाला सात्विक आहार है।

सात्विक आहार का गौ माता के स्वास्थ्य, बछड़े और उसके दूध पर जो प्रभाव पड़ता है, वह इस उक्त घटना से भली-भाँति समझा जा सकता है देश विशेष में रहने वाली गौवों के स्वास्थ्य दूध घृतादि के गुणों में जो अन्तर वा भेद रहता है, इसमें भी मुख्य कारण जलवायु तथा आहार का ही भेद समझना चाहिए।

गौवों के दूध में देश भेद से गुणभेद

> जाङ्गलानूपशैलेषु चरन्तीनां यथोत्तरम्।
> पयो गुरुतरं स्नेहो यथाहारं प्रवर्तते ॥

भावप्रकाशनिघण्टु-दुग्धवर्ग २

जाङ्गल देश, अनूप देश और पर्वतों में चरने वाली गायों का दूध क्रमशः एक से एक का अधिक भारी होता है। आहार के अनुसार ही दूध में स्नेह वा घृत की मात्रा विद्यमान रहती है।

जाङ्गल देश—

> अल्पोदकतृणो यस्तु प्रवातः प्रचुरातपः।
> स ज्ञेयो जाङ्गलो देशो बहुधान्यादिसंयुतः ॥

अर्थात् जाङ्गल देश वह कहलाता है जहां जल वा घास-फूस अत्यधिक न हो, वायु का संचार पर्याप्त हो, प्रचुर धूप पड़ती हो और धान्यादि पर्याप्त मात्रा में होते हों। ऐसे देश की गायों के दूध में घृत कम निकलता है। जाङ्गल देश से अनूपदेश की गायों के दूध में घी अधिक माना गया है अनूपदेश 'अनुगता आपो-यत्र'' जल प्रायः देश अर्थात् ऐसा स्थान जहां पर जल ही जल हो, ऐसे जल बाहुल्य देश में जहाँ वृक्ष आदि बहुत हों। वात और कफ के रोग होते हों, उसे अनूपदेश कहते हैं। ऐसे देश की गायों के दूध में जाङ्गल देश की गायों से अधिक घी माना है। पर्वत देश की गाय कद में छोटी और दूध भी थोड़ा देती है किन्तु उस दूध में घी की मात्रा अधिक होती है।

मैं एक बार एक गो प्रेमी सज्जन से पहाड़ी प्रदेश में मिलने के लिए चला गया, वह गौवों का अत्यन्त श्रद्धालु भक्त था। उसने उसी पहाड़ी प्रदेश में अपनी

झोंपड़ी डाल रखी थी और अपनी पत्नी सहित वहीं जंगल में गौओं के साथ रहता था। ये पति-पत्नी दोनों गायों के दूध पर ही रहते थे, अन्न नहीं खाते थे उनके पास सात-आठ गायें थीं, वे दूध तो पाँच सेर' देती थीं किन्तु उनके दूध में से मक्खन सात छटांक निकलता था। अतः यह ठीक ही है कि पर्वतीय देशों की गौओं के दूध में जाङ्गल और अनूपदेश की गायों के दूध से अधिक घी निकलता है।

पाठक गण! उपर्युक्त वर्णनों से आप सबको यह तो निश्चय हो गया होगा कि

क्षीरात्परं नस्ति च जीवनीयम् ।।

गौ के दुग्ध से बढ़कर प्राणिमात्र के लिए कोई जीवनप्रद पदार्थ नहीं है।

धारोष्णं गोपयो बल्यं लघु शीतं सुधासमम् ।
दीपनं च त्रिदोषघ्नं तद्धाराशिशिरं त्यजते ।।२४।।
धारोष्णांशस्य गव्यं धाराशीतं तु नाहिषम् ।
शृतोष्णमाविकं पथ्यं शृतशीतमजापयः ।।२५।।

गौ का धारोष्ण दूध बल को देने वाला, हल्काशीतल, और अमृत के समान, तीनों दोषों के विकारों को हरने वाला और अग्नि वर्धक होता है। गाय का दूध दूह लेने पर ठंडा हो गया हो तो पीने योग्य नहीं। यदि गौ का दूध धारोष्ण हो, और भैंस का दूध दुह लेने पर शीतल हो गया हो, वही प्रशंसनीय वा पीने योग्य होता है। भेड़ का दूध गर्म और बकरी का दूध औटाकर शीतल किया हुआ पथ्य अर्थात् हितकर होता है।

आमं क्षीरमभिष्यन्दि गुरु श्लेष्म आमवर्द्धनम् ।
ज्ञेयं सर्वमपथ्यं तु गव्यमाहिषवर्जितम् ।।२६।।
नारिक्षीरं त्वाममेव हितं न तु शृतं हितम् ।
शृतोष्णकफवातघ्नं शृतशीतं तु पित्तनुत् ।।२७।।

कच्चा दूध अभिष्यन्दि, भारी, कफ तथा आम वर्धक हैं। इस कारण गाय तथा

भैंस के दूध को छोड़कर सभी कच्चे दूध अपथ्य (हानिप्रद) जानने चाहियें । स्त्री का दूध तो कच्चा ही हितकारी है । परन्तु गर्म किया हुआ अहितकारी हानिप्रद ही है । गर्म किया हुवा दूध कफ तथा वातनाशक और गरम करके शीतल किया हुवा दूध पित्तनाशक होता है ।

अर्द्धोदकं क्षीरं शिष्टमामाल्लघुतरं पयः ।
जलेन रहितं दुग्धमतिपक्वं यथा यथा ।
तथा तथा गुरु स्निग्धं वृष्यं बलविर्वद्धनम् ।।२८।।

दूध में आधा जल डालकर उसको अग्नि पर पकायें । जव केवल दूध ही शेष रह जाय तव वह दूध कच्चे से भी हल्का हो जाता है और जल रहित दूध जितना अधिक पकाया जाता है उतना ही भारी, स्निग्ध वृष्य और वल वर्धक होता है । दूध के ये गुण भावप्रकाश निघण्टुः के आधार पर लिखे हैं ।

इन सब के लिखने का सार यही है कि गाय का धारोष्ण दूध अत्यन्त गुणकारी और अमृत है, पड़ा रहने पर जव यह ठंडा हो जाता है तो इस में गुणों के स्थान पर दोष आ जाते हैं । ऐसी अवस्था में दूध को गर्म करके उपयोग में लाया जाता है । किंतु कोई कितना भी करे जो गुण धारोष्ण गो दूध में होते हैं वे गर्म किये हुये दूध में तो कदापि हो ही नहीं सकते अर्थात् वात तो यह है कि जिस समय दूध निकाला जाता है वह इतना उष्ण होता है जितनी उष्णता चाहिये और मधुर भी उतना ही होता है जितना मनुष्य को मधुर गुण चाहिये । धारोष्ण दूध में स्वास्थ्य की दृष्टि से प्राकृतिक मधुरता और उष्णता यथोचित मात्रा में विद्यमान रहती है । आजकल लोग दूध को विगाड़ कर पीते हैं । धारोष्ण दूध का प्रयोग न करके उसे पड़ा हुवा छोड़ देते हैं । ठण्डा होने पर उसे फिर अग्नि पर गर्म करते हैं और बनावटी प्राकृतिक ऊष्णता इस में प्रविष्ट करते हैं और उसमें अप्राकृतिक (अस्वाभाविक) गुड चीनी शक्कर वूरा आदि मीठा डालकर मधुरता लाते हैं अग्नि पर उवालने से दूध के कितने ही जीवन तत्त्व वा गुण जल जाते हैं और मीठा डालने से कितने ही दुर्गुण वा दोष इस में आ जाते हैं इसलिये वे सौभाग्यशाली हैं जिन मनुष्यों को गोमाता का धारोष्ण दूध पीने के लिये नित्य प्रति मिलता है । किन्तु भैंस, वकरी, भेड़ आदि का दूध गर्म करके ही पीने का विधान है । धन्वन्तरि

निघण्टुः में लिखा है—

आमवातकरं चापि धारोष्णममृतं पयः ।
सुशृतं च पयः पीतं पीयूषादपित द्गुरु ॥१८०॥

गाय का दूध धारोष्ण अमृत तुल्य होता है किन्तु आमवात (गठिया) रोग को उत्पन्न करता है जो व्यायाम करता है उसे यह गठिया का रोग नहीं होता। खूब उबाल कर ठण्डा कर के दूध पीयूष (अमृत) तुल्य होता हुवा भी भारी होता है यह उसमें दोष आ जाता है पाचन शक्ति को निर्बल करता है अथवा जिनकी पाचन शक्ति निर्बल है उनको नहीं पचता वे फिर आगे लिखते हैं।

धारोष्णममृतं पथ्यं धाराशीतं त्रिदोषलम् ।
शृतशीतं त्रिदोषघ्नं भृतोष्णं कफवातजित् ॥१८३॥

गौ का दूध धारोष्ण अमृत तुल्य और सबके लिये पथ्य (हितकर) है और धारा शीत (ठण्डा) होने पर त्रिदोष के विकार को उत्पन्न करता है अत्यन्त हानिकारक है।

राज निघण्टु में—

उक्तं गव्यादिकं दुग्धं धारोष्णममृतोपमम् ।
सर्वामयहर पथ्यं चिरसंस्थंतु दोष दम् ॥२२६॥

गौवों का धारोष्ण दूध अमृत के समान कहा गया है सब प्रकार के रोगों का नाश करने वाला और पथ्य हितकर होता है। यदि गाय का दूध देर तक पड़ा रहे तो वह दोष कारक अर्थात् हानिप्रद हो जाता है।

केप्याविकं पथ्यतमं भृतोष्णं क्षीरं त्वजानां शृतशीतमाहुः ।
देहान्तशीतं महिषापयश्च गव्यं तु धारोष्णमिदं प्रशस्तम् ॥२२७॥

कुछ विद्वानों का मत है कि भेड़ का दूध खूब उबाला हुवा गर्म गर्म पीना ही अत्यन्त पथ्य (हितकर) है और बकरी का दूध खूब उबाल कर ठण्डा करके पीना हितकर वा पथ्य है। महिषा का दूध सर्वथा शीतल होने पर हितकर वा पथ्य है और गौवों का दूध तो सर्वथा धारोष्ण ही प्रशंसनीय वा श्रेष्ठ माना गया है।

आगे लिखा है—

धारोष्णं त्वमृतं पयः श्रमहरं निद्राकरं कान्तिदम् ।
वृष्यं बृंहणमग्निवर्धनमतिस्वादु त्रिदोषापहम् ॥२३३॥

धारोष्ण दूध तो अमृत है। श्रम (थकावट) को हरता है और निद्रा लाता है तेज शान्ति सुन्दरता प्रदान करता है। वीर्यवर्धक पुंस्त्व शक्ति को बढ़ाने वाला, शरीर को बढ़ाता है, मोटा करता है और बलवान् बनाता है। जठराग्नि को बढ़ाता है अर्थात् पाचन शक्ति की वृद्धि करता है। अत्यन्त मधुर और स्वाद रुचि कर होता है। तीनों दोषों के विकारों का नाश करने वाला होता है।

पित्तघ्नं भृतशीतलं कफहरं पक्वं तदुष्णं भवेत् ।
शीतं यत्तु न पाचितं तदखिलं विष्टम्भदोषप्रदम् ॥२३३॥

जो दूध औटाकर ठण्डा शीतल हो जाय वह पित्त दोष का नाश करता है। जो दुग्ध पकाकर कुछ उष्ण पीया जाय वह कफ दोष को हरता है शीतल होने पर भी कफ को दूर करता है।

खीस खोया आदि के गुण

क्षीरं तत्कालसूताया घनपीयूषमुच्यते ।
नष्टदुग्धस्य पक्वस्य पिण्डः प्रोक्तः किलाटकः ॥२९॥
अपक्वमेव यन्नष्ट क्षीरशाक हितत् पय :।३०॥
दध्ना तक्रेण वा नष्टं दुग्धं बद्धं सुवाससा ।
द्रवभागेन रहितस्तक्रपिण्ड : स उच्चयते ॥३०॥
नष्टदुग्धभवं नीरं मोरटं जेज्जटोऽब्रवीन्।
पीयूषश्च किलाटं च क्षीरशाकं तथैव च ॥३२॥

जब गायें व्याती हैं उस समय उनका जो दूध निकाला जाता है उस दूध को पीयूष अर्थात् खीस कहते हैं। गर्म करने से जब यह फट जाता है तो बच्चों को खाने के लिये बांट दिया जाता है। सभी पशुपालकों की यही परिपाटी है। जो दूध जलकर नष्ट हो गया हो जिसका पिण्ड बन गया हो उसको किलाट मावा व (खोया) कहते हैं। यह दूध के पकाने से बनता है इसी मावे से हलवाई पेड़े आदि अनेक मिठाइयाँ बनाते हैं। जो दूध कच्चा ही जमकर मावे के सदृश हो जाये उसको क्षीर शाक कहते हैं। दूध को दही वा छाछ से जमाकर स्वच्छ वस्तु

में बांध उसके जल को निकालने से जो पिण्ड बन जाता है। यदि उसमें जल का अंश न हो तो वह तक्र पिण्ड कहलाता है। फट जाने पर दूध में से जो जल निकलता है उसको मोरट कहते हैं। यह जेज्जट आचार्य का मत है। पीयूष किलाट, क्षीरशाक और तक्र पिण्ड के गुण निम्नलिखित हैं।

तक्रपिण्डा इमे वृष्या बृंहणा बलवर्द्धनाः
गुरवः श्लेष्मला हृद्या वातपित्तविनाशनाः ॥३३॥
दीप्ताग्नी नांविनिद्राणां विद्रधौ चाभिपूजिता :।
मुखशोषतृषादाहरक्तपित्तज्वर प्रणुत् ।

गुणः—पीयूष, किलाट, क्षीरशाक और तक्रपिण्ड ये सब वीर्यवर्धक, पुष्टिकारक, और बलदायक हैं। ये सभी भारी, कफकारक,हृदय को प्रिय, वात और पित्त नाशक हैं। जिनकी अग्नि प्रदीप्त है और जिनको निद्रा नहीं आती, उनको तथा विद्रधिरोग वाले को बहुत उत्तम है। बूरा (शक्कर) सहित मोरट—हलका, बलदायक, रुचि वर्धक और मुखशोष, तृषा, दाह, रक्तपित्त तथा ज्वर नाशक है। इनके विषय में धन्वन्तरि निघण्टु में इस प्रकार लिखा है।

कूर्चिकाश्च किलाटाश्च गुरवः श्लेष्मवर्धनाः।
तर्पणाः प्रीणना बल्या बृषणा मारुतापहाः ॥१८१॥
दीप्ताग्निनामनिद्राणां व्यवाये चापि पूजिताः।

ये कूर्च और किलाट आदि पिण्ड सब भारी और कफ वर्धक होते हैं। ये तृप्ति करने वाले बलवर्धक, शरीर की वृद्धि करने वाले, हृदय को प्रिय और वायु विकारों को दूर करने वाले होते हैं। ये सभी तीव्र अग्नि वाले और जिनको निद्रा नहीं आती उनके लिये पथ्य और हितकर हैं।

ज्वर और दूध

जीर्णज्वरे किंतु कफे विलीने।
स्याद् दुग्धपानं हि सुधासमानम्।
तदेव पीतं तरुणज्वरे च
निहन्ति हालाहल वन्मनुष्यम् ॥१८५॥

नवज्वरे च मन्दाग्नौ ह्यामदोषेषु कुष्ठिनाम् ।
शूलिनां कफदोषेषू कासिनामतिसारिणाम्।। १८६।।

पुराने ज्वर में किन्तु कफ के विलीन अर्थात् नष्ट होने पर दूध पीना अमृत के समान होता है । और वही दूध यदि नये ज्वर में अर्थात् जब बुखार जवानी पर होता है पी लिया जाये भयंकर विष के समान मनुष्य को मार देता है । नये ज्वर में, मन्दाग्नि में और आम दोष में, कोठियों, शूल के रोगियों, कफ युक्त खांसी के रोगियों और अतिसार (पतले दस्त) वाले रोगियों को दूध नहीं पीना चाहिये इनके लिये दूध हानिकारक है । इनके लिये लिखा है:—

पयः पानं न कुर्वीत विशेषात्कृमिदोषतः ।।१८७।।

उपर्युक्त रोगियों को विशेषकर कृमि दोष के रोगियों को दूध नहीं पीना चाहिए । भावप्रकाश निघण्टु में खाँड युक्त दूध के गुण इस प्रकार लिखे है ।

खण्डेन सहितं दुग्धं कफकृत्पवनापहम् ।
सितासितोपलायुक्तं शुक्लं त्रिमलापहम् ।
सगुडं मूत्रकृच्छ्रघ्नं पित्तश्लेष्मकरं परम् ।।३६।।

—भावप्रकाशनिघण्टु, दुग्धवर्ग

खांड पड़ा हुआ दूध—कफकारक और वातनाशक है । बूरा (शक्कर) अथवा मिश्री पड़ा हुआ दूध वीर्यवर्धक और त्रिदोषनाशक हैं । गुड़ पड़ा हुआ दूध-मूत्र कृच्छ्र-नाशक और पित्त तथा कफ को अत्यन्त बढ़ाने वाला होता है ।
राजनिघण्टु में लिखा है—

गव्यं पूर्वाह्णकाले स्यादपराह्णे तु माहिषम् ।
क्षीरं सशर्करं पथ्यं यद्वा स्वात्म्ये च सर्वदा ।।२३२।।

—क्षीरादिवर्ग ।१५।

शर्करायुक्त दूध गाय का प्रातः काल और सायंकाल भैंस का दूध हितकारी होता है और स्वाभाविक रूप से सर्वदा ही पथ्य है ।

न पीने योग्य दूध

विवर्णं विरसं चाम्लं दुर्गन्धं ग्रथितं पयः ।
वर्जयदम्लवणयुक्तं कुष्ठादिकृद्यतः ।।४६।।

—भावप्रकाशनिघण्टु दुग्धवर्ग

जिस दूध का रंग बिगड़ जाए, बुरे स्वाद का हो जाये, जिसमें खट्टापन प्रतीत हो, दुर्गन्ध युक्त, और फटा हुआ प्रतीत हो, खट्टा व खारी, लवणादि पदार्थ जिसमें मिल गया हो, वह सर्वदा त्याज्य है। उसका कभी प्रयोग नहीं करना चाहिये। इतना ही नहीं खट्टा खारी तथा जो लवणदार युक्त भोजन हो उसके साथ दूध का प्रयोग करना अत्यन्त हानिकारक है। क्योंकि ऐसा करने से कोढ़ आदि भयंकर चर्म रोग हो जाते हैं और ऐसे भोजन के प्रयोग से बुद्धि का नाश होता है।

राजनिघण्टु में इसकी प्रशंसा इस प्रकार की है—

अनिष्टगन्धमम्लं च विवर्णं विरसं च तत् ।।१८२।।
वर्ज्यं सलवणं क्षीरं यच्च विग्रथितं भवेत् ।।१८३ ।।

अर्थात्—अनिष्ट गन्ध वाला, खट्टा, बिगड़े हुए रंग का बुरे स्वाद का दूध वर्जित है। लवण के साथ दूध का प्रयोग न करें। क्योंकि यह हानिकारक होता है राजनिघण्टु में लिखा है—

क्षीरं न युञ्जीत कदाऽप्यतप्तं तप्तं न चैतल्लवणेन सार्धम् ।।
पिष्टान्नसंधानकमाषमुद्गकोशातकीकन्दफलादिकैश्च ।।२३०

गर्म न किए हुए दूध का कदापि प्रयोग न करें। गर्म किए हुए दूध का लवण के साथ प्रयोग न करें। तथा च—

मत्स्यमांसगुडमुद्गमूलकैः कुष्ठमावहति सेवितं पयः ।
शाकजाम्ववरसैस्तु सेवितं मारयत्यबुधमाशु सर्पवत् ।।२३२।।

अर्थात्—मछली मांस गुड़, मूंग, मूली के साथ सेवन किया दूध हुआ कुष्ठ पैदा करता है। शाक और जामुन के रस के साथ सेवन किया हुआ दूध मूर्ख को

सर्प के समान शीघ्र मार देता है। अर्थात् विपरीत गुण वा रस वाले पदार्थों के साथ दुग्ध सेवन भूल कर भी नहीं करना चाहिये नहीं तो मारक विष के समान प्राण घातक होता है।

समय अनुसार दूध गुण

वृष्यं वृंहणमग्निवर्धनकरं पूर्वाह्णपीतं पयः—
मध्याह्ने बलदायकं कफहरं कृच्छ्रस्य विच्छेदकम् ।।२२८।।

अर्थात्—प्रातः काल पीया हुआ दूध वीर्यवर्धक, पुष्टिकारक अग्नि को बढ़ाने वाला होता है। दोपहर को पीया हुआ बल को देने वाला, कफ का नाश करने वाला, कष्ट से आए हुए मूत्रादि दोषों का नाश करने वाला होता है।

अवस्था भेद से दूध का प्रभाव

बाल्ये वह्निकरं ततो बलकरं वीर्यप्रदं वार्धके।
रात्रौ क्षीरमनेकदोषशमनं सेव्यं ततः सर्वदा।।२२८।।

बाल्यकाल में दूध जठराग्नि को तेज करता है अर्थात् पाचन शक्ति को बढ़ाता है। तत्पश्चात् युवावस्था में बलदायक, वीर्यवर्धक, बुढ़ापे में रात्री में दूध अनेक दोषों का शमन करने वाला है इसलिए इसका सेवन करना चाहिए। इन दोनों बातों की पुष्टि भाव प्रकाश निघण्टु के दुग्ध वर्ग में इस प्रकार की है।

वृष्यं वृंहणमग्निदीपनकरं पूर्वाह्णपीतं पयो
मध्याह्ने बलदायकं कफहरं पित्तापहं दीपनम्
बाल्ये वृद्धिकरं क्षयेऽक्षयकरं वृद्धेषु रेतोपहं।
रात्रौ पथ्यमनेकदोषशमनं चक्षुर्हितं संस्मृतम् ।।३६।।

प्रातःकाल में दूध का पीना वीर्यवर्धक पुष्टि कारक और अग्निप्रदीपक होता है। मध्याह्न में दूध पीने से बल बढ़ता है कफ और विकार नष्ट होते हैं और जठराग्निप्रदीप्त होती है बाल्यकाल में वृद्धि करने वाला और क्षय का नाश करने वाला वृद्धि अवस्था में वीर्य को बढ़ाता है। रात्रि में सेवन किया हुआ दूध अत्यन्त हितकर और अनेक दोषों को शांत करने वाला है। नेत्रों के लिए हितकारी है।

रात्री में केलव दुग्धपान

वदन्ति पेयं निशि केवलं पयो भोज्यं न तेनेह सहौदनादिकम्
अतो भवेज् जीर्णं शयीत शर्वरी क्षीरस्य पीतस्य न शेषमुत्सृजेत् ॥४०॥
विदाहीन्यन्नपानानि दिवा भुक्ते हि यन्नरः ।
तदादाहप्रशान्त्यर्थं रात्रौ क्षीरं सदा पिबेत् ॥४२॥

रात्री में केवल दूध ही पीना चाहिए उसके साथ और भोजनादि न करें। दूध के साथ भोजन करने से अजीर्ण होता है और निद्रा नहीं आती। यह कुछ विद्वानों का मत है। पीने के लिए पात्र में लिया हुआ दूध सभी पी लेना चाहिए। उसमें से शेष छोड़ना नहीं चाहिए। दिन में दाह, जलन करने वाले अन्न खाये जाते हैं उस दाह की शांति लिए के रात्रि को दूध सदैव पीना चाहिए।

दीप्तानले कृशे पुंसि बाले वृद्धे पयः प्रिये ।
मतं हिततमं दुग्धं सद्यः शुक्रकरं यतः ॥४३॥

जिनकी जठराग्नि प्रदीप्त है, दुर्बल शरीर वालों को, बाल युवा तथा वृद्ध को दूध अत्यन्त हितकारी है। इन सबको पथ्य और तत्काल वीर्यवर्धक है।

प्रातः काल और सायंकाल दूध के गुणों में अन्तर

रात्रौ चन्द्रगुणाधिक्याद् व्यायामाकरणात्तथा ।
प्राभातिकात्तु पयः प्रायःप्रादोषाद् गुरु शीतलम् ॥३७॥

—भावप्रकाश दुग्ध वर्ग

रात्रि में चन्द्रमा के गुण अधिक होने से और चलने फिरने का परिश्रम न करने से प्रातःकाल का दूध अधिकतर सायंकाल के दूध से भारी और शीतल होता है।

दिवाकरकराघातादव्यायामानिलसेवनात् ।
प्राभातिकात्तु प्रादोषं लघु वातकफापहम् ॥३८॥

—भावप्रकाश दुग्धवर्ग

दिन में सूर्य की किरणों की और चलने फिरने के परिश्रम से उत्पन्न हुई

उष्णता के कारण सायंकाल का दूध प्रातःकाल के दूध से हलका और वात तथा कफनाशक होता है।

कुछ विद्वानों का मत

स्निग्धं शीतं गुरु क्षीरं सर्वकालं न सेवयेत्।
दीप्ताग्निं कुरुते मन्दं मन्दाग्निं नष्टमेव च ।।२३।।

जो दूध बहुत चिकना अर्थात् घी वाला, शातल और भारी होता है। सब कालों उसका सेवन न करें क्योंकि ऐसा दूध प्रदीप्त अग्नि को मन्द कर देता है। और मन्दाग्नि को नष्ट कर देता है। उपर्युक्त गुणों वाला दूध भैंस का ही होता है। इसके विषय में राजनिघण्टु में लिखा है—

नित्यं तीव्राग्निना सेव्यं सुपक्वं माहिषं पयः।
पुष्णन्ति धातवः सर्वे बलपुष्टिविवर्धनम् ।।२३७।।

जिनकी जठराग्नि बहुत तीव्र है वे भैंस का दूध खूब पकाकर पीयें। उससे सारे धातु पुष्ट होती हैं। बल, पुष्टि तथा शक्ति खूब बढ़ते हैं। किन्तु तमोगुणी होने से आलस्य, निद्रा, और क्रोध की वृद्धि होती है और बुद्धि का ह्रास हो जाता है।

नव प्रसूता का दूध

क्षीरं गवाजकादेर्मधुरं क्षार नवप्रसूतानाम्।
रुक्षं च पित्तदाहं करोति रक्तामयं कुरुते ।।२३८।।
मधुरं त्रिदोषशमनं क्षीरं मध्यप्रसूतानाम्।
लवणं मधुरं क्षीरं विदाहजननं चिरप्रसूतानाम् ।।२३९।।

नई ब्याई हुई गाय और बकरी का दूध मीठा और खारा होता है, रुक्ष, पित्त कुपित करने वाला, जलन करने वाला होता है और रक्त सम्बन्धी रोगों को पैदा करता है। जो गाय मध्य प्रसूत होती है अर्थात् जिसको ब्याये हुए दो-तीन मास बीत जाते हैं उसका दूध मधुर और तीनों के दोषों विकारों का शमन करने वाला होता है। चिर प्रसूत अर्थात् जिनको ९ या दस मास ब्याये हुए से अधिक हो

गए हैं उनका दूध नमकीन, मीठा और जलन करने वाला होता है।

गुणहीनं निःसारं क्षीरं प्रथमप्रसूतानाम्।
मध्यवयसां रसायनमुक्तमिदं दुर्बलं त वृद्धानाम् ॥२४०॥
तासां मासत्रयादूर्ध्वं गर्विणीनां च यत्पयः।
तद्वाहि लवणं क्षीरं मधुरं पित्तदोषकृत् ॥२४१॥

—राजनिघण्टुक्षीरादिवर्ग

जो गाय पहली वार ब्याई हो उसका दूध गुणहीन और निःसार होता है। अर्थात् उसमें वल और शक्ति नहीं होती। जो मध्य आयु की गाय होती हैं। अर्थात् चार-पांच वार ब्या चुकी हैं उनका दूध रसायन-आयु को वढ़ाने वाला होता है। वृद्ध गायों का दूध दुर्वल वा शक्तिहीन होता हैं। उन गौओं का जो तीन मास से अधिक की गर्भवती होता हैं दूध नमकीन, मीठा और जलन करने वाला होता है पित्त दोष के विकारों को वढ़ाता है। कुछ लोग दूध को मथकर पीते हैं। मथे हुए दूध के गुण इस प्रकार हैं:—

क्षीरं गव्यमथाजं वा कोष्णं दण्डाहतं पिबेत्।
लघु वृष्यं ज्वरहरं वातपित्तकफापहम् ॥४३॥

—भावप्रकाश निघण्टु

गाय अथवा वकरी का दूध रई से मथकर किञ्चित गर्म करके पीयें तो हलका, वृष्य, ज्वर नाशक और वातपित्त तथा कफ नाशक है।

दूध को गर्म करने से दूध के ऊपर जो मलाई आती है उसके भी वहुत गुण हैं मलाई एक प्रकार से दूध का सार होती है और अत्यन्त स्वादिष्ट होती है। हमारी और हमारे से पहली पीढ़ी में मातायें अपने वालकों को प्रातःकाल मक्खन, नवनीत (नूनी घी) प्रतिदिन खिलाती थीं। उसके साथ रोटी का छोटा सा टुकड़ा दे देती थीं। इसी प्रकार सायंकाल दूध कढ़ाई में खूब पककर लाल हो जाता था उस पर मोटी तह वाली मलाई आ जाती थी। एक छोटे से रोटी के टुकड़े के साथ सब वालकों को मलाई खाने को देतीं थीं। यह परिपाटी सारे हरयाणा में सैकड़ों और सहस्त्रों वर्षों से चली आती थीं। आवाल, वृद्ध, वनिता,

सभी मन भरकर दूध, दही, घी और मलाई खाते थे। इसी कारण यह प्रसिद्ध था—

देशों में देश हरयाणा जहां दूध दही का खाना

हरयाणा ही क्या पहले सारे भारतवर्ष की यही अवस्था थी। सभी दूध, घी मक्खन, मलाई, प्रचुर मात्रा में खाते थे अन्न बहुत थोड़ा खाया जाता था इस लिए आज तक भी हरयाणे में यह रीति प्रचलित है बालक माँ के पास रोटी नहीं मांगते थे किन्तु माँ से 'माँ टूक दे दे', यह कहकर रोटी का टुकड़ा माँगते हैं। माँ टुकड़े के साथ प्रातःकाल नूनी घी और दही,सायंकाल मलाई और दूध देती हैं। इस प्रकार दरिद्र से दरिद्र व्यक्ति को घी दूध आदि प्राचीन काल में प्रचुर मात्रा में मिल जाता था और अब भी थोड़ा बहुत घी, दूध खाने पीने को मिल जाता है। अधिक घी दूध खाने से मल कम बनता है और मल कम बनने से दुर्गन्ध कम फैलता है। दुर्गन्ध कम फैलने से रोग कम होते हैं और रोग कम होने से मनुष्य स्वस्थ, बलवान्, और दीर्घ आयु वाले होते हैं। यही कारण है कि हमारे पूर्वज पूर्णायु ३००या ४००वर्ष को भोगते थे उनकी लम्बाई सबकी ६फीट से कम नहीं होती थी। वे सभी बलवान् और पहलवान होते थे। उन्हें ब्रह्मचर्य और सदाचार की शिक्षा मिलती थी। सात्विक आहार-व्यवहार था। अतः उनका बलवान् और विद्वान् होना सरल और स्वयं सिद्ध था। अब मलाई और मक्खन जैसे पौष्टिक आहार के सामान्य लोगों को दर्शन भी दुर्लभ हो गए हैं। प्रचुर मात्रा में खान-पान की बात तो एक पुरानी कथा बनकर रह गई है भावावेश में मलाई का गुण कहता कहता दूर चला गया।

मलाई के गुण—

सन्तानिका गुरु शीता वृष्या पित्तास्रवातनुत्।
तर्पणी बृंहणी स्निग्धा बलासबलशुक्रला ॥३५॥

सन्तानिका (मलाई) भारी-शीतल, वृष्य, पित्त, रक्त विकार, वात, नाशक, तृप्तिकारक, पुष्टिदायक, स्निग्ध और कफ, बल तथा वीर्यवर्धक होती है पाश्चात्य विद्वान् भी गोदुग्ध के विषय में इस प्रकार लिखते हैं।

जो व्यक्ति अपने वाल बच्चों को दूध मलाई और मक्खन जैसे आरोग्य वर्धक पदार्थ खाने को नहीं देता उसे जेल में बन्द करने की जरूरत है।

—मि० राल्फ० ए० हेने।

शताब्दियों से कथाओं और उपन्यासों में वर्णित यौवन के उद्गम की खोज मनुष्य कर रहा है। पर उस आदर्श यौवन का निकटतम सान्निध्य रखने वाला जो पदार्थ अव तक मिल सका है वह गौ का दुग्ध है।

—फ्रैंक० ओ० लौडेन।

अपने सन्तान का हार्दिक कल्याण चाहने वाले माता-पिता को अपने लड़के लड़कियों को कभी भैंस का दूध न पिलाना चाहिये। भैंस का दूध मनुष्य के लिए उपयोगी पेय नहीं है।

—ईसाद्वीड

"गौ मनुष्य के लिए अमृत रत्न है। इसके दूध से वल, बुद्धि, आयु वढ़ती है और लोग नीरोग रहते हैं।

—व्यवस्थापक, एस० वी० डेयरी दीनापुर

आप अपने सन्तानों को शक्तिशाली और वलवान् वनाना चाहते हो तो उन्हें गाय का दूध और मक्खन रोज तीन वार खाने को दीजिए।

—मिस्टर राल्फ० ए०

दूध ही एकमात्र पदार्थ है, जो सव पौष्टिक द्रव्यों से परिपूर्ण है और जिसे हम पूर्ण भोजन कह सकते हैं।...वढ़ते हुए वच्चों के लिए उत्तमता में इस से वढ़कर और कोई चीज नहीं शरीर को ठीक तरह से वढ़ाने और पुष्ट करने में दूध की वरावरी करने वाला कोई दूसरा पदार्थ नहीं है।

—प्रो० एम० जे० रोसेनो

यदि वच्चों को काफी मात्रा में दूध दिया जाय तो उनके वजन और ऊंचाई में पर्याप्त प्रवृद्धि होती है तथा पर्याप्त शारीरिक सुधार होता है शीतकाल में उनके हाथ पैर अधिक नहीं फटते।

—एच० सी० कैरीमन ओ० वी० ई०, एम० डी० मेडिकल रिसर्च कौंसिल,

इंग्लैण्ड।

पाठकगण ! इसे पढ़कर आपको अवश्यमेव निश्चय हो गया होगा कि संसार में गोदुग्ध को छोड़कर अन्य कोई पदार्थ अमृत नहीं है। गोदुग्ध द्वारा भयंकर सैकड़ों रोगों की किस प्रकार चिकित्सा की जाती है।

आप यह इसी पुस्तक में पढ़ लें। दूध तो अमृत है ही, दूध के झाग तो दूध निकालते समय बन जाते है अथवा जब गौ माता का दूध स्तनों को मुख से पकड़ कर उसका बछड़ा पीता है तब उसके मुख में झाग आते हैं, जिन्हें पशु पालक वा दूध निकालने वाले सभी जानते हैं। भाव प्रकाश निघण्टु में इस विषय में इस प्रकार लिखा है—

गोदुग्धप्रभवं किंतु वाछागी दुग्धसमुद्भवम्।
भवेत्फेनं त्रिदोषघ्नं रोचनं बलदर्द्धनम्॥४४॥
वह्निवृद्धिकरं वृष्यं सद्यस्तृप्तिकरं लघु।
अतिसारेऽग्निमान्द्ये च ज्वरे जीर्णे प्रशस्यते॥४५॥

गौ वा बकरी के दूध का झाग त्रिदोष नाशक, रुचिकारक, बलवर्धक, अग्नि प्रदीपक वृष्य (वीर्य वर्धक), शीघ्र तृप्ति कारक और हल्का है। यह फेन वा झाग-अतिसार (पतले दस्तों) में अग्निमन्दता में तथा जीर्ण (पुराने) ज्वर में बहुत उत्तम है। जिन झागों को पीने वाले व्यर्थ समझते हैं, यहां तक कि दूध पीते समय उसे पीने में एक बाधा ही मानते हैं। वह तीनों दोषों के कुपित होने से जो विकार व रोग उत्पन्न होते हैं, उन सबकी औषध ये झाग हैं। जब अग्नि-मन्द हो तो ये उसको प्रदीप्त करते हैं। कितनी विचित्र बात है कि जिन रोगों में दूध हानिकारक है और जिनमें इसके सेवन का निषेध किया है उन्हीं रोगों अतिसार, जीर्ण ज्वर और अग्नि मन्दता को ये दूध के झाग दूर करते हैं, ये पीने वाले को तृप्त करते अरुचि रोग का नाश करते हैं। बल वीर्य और शक्ति निर्बलों को प्रदान करते हैं।

अर्श (बवासीर) और दूध

गो दुग्ध अर्श के रोगियों को अमृत तुल्य लाभ करता है। बवासीर में घृत दही, गोमूत्र और गोमय अर्थात् पञ्चगव्य सभी अमृत तुल्य लाभ करते हैं। बवा-

सीर में कोष्ठवद्धता कब्ज प्रायः सभी रोगियों को होता है और उसको पञ्चगव्य घृत समूल नष्ट कर देता है। पञ्चगव्य घृत सभी उदर रोगों में लाभदयक है। पञ्चगव्य घृत की चर्चा घृत चिकित्सा में करेंगे।

(१) रक्तार्श खूनी ववासीर में कुटजादि घृत अत्यन्त लाभदायक है गौ वा वकरा के दूध के साथ इसका प्रयोग करने से वहुत लाभ होता है। खून निकलना समूल नष्ट हो जाता है।

(२) लाजवन्ती, कमल पुष्प, मोचरस, लोधपठानी, चन्दन लाल सव समभाग लेकर कूट छान कर चूर्ण वनालें। मात्रा छः माशे गौ के दूध वा वकरी के दूध के साथ प्रातः सायं लेवें इसके प्रयोग से रक्त आना तुरन्त बन्द हो जाता है।

(३) मुचकन्द के फूलों को छाया में सुखाकर वारीक चूर्ण कर लें और थोड़ा सा गो घृत मिला लें, इससे द्विगुणी मिस्री मिलालें। मात्रा १ तोला प्रातः सायं गो दुग्ध वा वकरी के दूध के साथ लेने से अर्श का रक्त तुरन्त वन्द हो जाता है।

(४) नागकेसर छः माशे, मिश्री १ तोला को वारीक पीस कर ढाई तोले गाय के मक्खन में मिलाकर चाट लें और ऊपर से धारोष्ण गो दुग्ध पिलावें तो रक्तार्श वहुत शीघ्र ही समूल नष्ट हो जाती है। यह हमारा वहुत वार का अनुभूत योग है।

(५) एक नारियल का छिलका उतार कर जलाकर उसे राख बना लो। उसमें समभाग मिश्री मिला लो। इसकी तीन मात्रा बनालो। एक मात्रा गो दुग्ध वा वकरी के दूध के साथ सेवन करने से अर्श का रक्त बन्द हो जाता है।

(६) गोमय अर्थात् गाय के गोसों वा आरणों की राख बना लें। मात्रा छः माशे इसमें मिश्री १ तोला वारीक पीस कर मिलायें गाय के मक्खन २ तोले में मिला कर ऊपर से गाय का धारोष्ण दुग्ध पिलायें यह भी अर्श रोग की अच्छी औषध है।

(७) मुक्ता शुक्ति भस्म १० तोले, रसौंत १० तोले दोनों को खरल में डाल कर मूली के स्वरस के साथ सात दिन तक खरल करें और फिर चार चार रत्ती की गोली बनायें और एक गोली प्रातः एक गोली सायंकाल धारोष्ण गो

दुग्ध के साथ लेवें। खूनी बवासीर निश्चय से समूल नष्ट हो जायेगी। यदि धारोष्ण दूध की व्यवस्था न हो तो गाय के दूध को थोड़ा गर्म करके ले लेवें।

(८) नीम की निंबोली की गिरी, बकायन के बीजों की गिरी, शुद्धगूगल रसौत, एलवा, काली मिर्च और गेरू ये समभाग लेवें और खूब बारी पीसकर कपड़ छान करलें, इसमें मकोय के पत्तों का रस डाल कर तीन दिन तक खरल करें। गाढ़ा होने पर एक एक माशे की गोलियाँ बनायें। प्रातः सायं एक एक गोली गोदुग्ध के साथ लेने से प्रत्येक प्रकार की बवासीर को लाभ होता है।

(९) प्याज को छील कर खूब वारीक वारीक टुकड़े करके धूप में सुखा लेवें और इनको गो घृत में भूनकर इसमें से एक तोला प्याज लेकर इसमें १ माशा तिल सफेद और मिश्री २ तोले प्रतिदिन प्रातः खिला कर ऊपर से गो दूध पिलायें इस से वायु (वादी) की बवासीर नष्ट होगी।

(१०) बादी की बवासीर में मस्से फूल कर रोगी को बहुत कष्ट देते हैं। रोगी बैठ नहीं सकता। सख्त कब्ज होती है। ऐसी अवस्था में दो प्याज लेकर भूबल में थोड़ा भून लें और छिलका उतार कर कुंडी सोटे से वारीक पीस कर इसकी नुगदी वा टिकिया बनालें और गाय के घी में इन्हें थोड़ा भून लें इन टिकियों को गर्म गर्म ही मस्सों की सिकाई करके बांध देवे। इन के बांधते ही मस्सौ को आराम हो जाता है। रोगी सुख से सो जाता है। रोगी को गाय के दूध के साथ विरेचक त्रिफलादि औषध देनी चाहिए। इस प्याज वाली औषध को मैंने अनेक रोगियों पर अजमाया है जादू के समान प्रभाव डालती है।

(११) बृहत् कासीसादि तैल को मस्सों पर लगाने से भी बहुत लाभ होता है। इसमें भी बनाते समय पर्याप्त मात्रा में गो मूत्र डाला जाता है।

(१२) अर्श के मस्सों की औषध—पीपल बड़ा, हल्दी, शंख, सज्जीक्षार, गिरी बीज करंजवा, करंजवे के पत्ते, सैंधा लवण, घोंघची लाल (चिरमिठीलाल) नाग केसर, नागकेसर की जड़, नागकेसर के बीज, नीला थोथा, बीज धतूरा, मुर्गे की बींठ, धतूरे के पत्ते, अजवायण, कड़वी तोरी के बीज सबको वारीक पीस लें और कड़वी तोरी के रस में एक दिन, थोहर के दूध में एक दिन, आक के दूध में एक दिन और सबसे पीछे गाय के दूध में एक दिन खरल करें और इसका मस्सों पर लेप करें। यह बवासीर के मस्सों को दूर करने के लिए रामबाण अर्थात्

अचूक औषध है। इसके प्रयोग से सर्व प्रकार के नाड़ी व्रण (नासूर) कण्ठमाला (वेल) और रसौली समूल नष्ट हो जाते हैं।

(१३) ढाक के पत्तों की राख २० तोले, जल ६० तोले, सोंठ का चूर्ण ५ तोले, काली मिर्च ५ तोले, पीपल वड़ा ५ तोले सवको कूट छानकर कलीदर पात्र में ५ तोले गो घृत डाल अग्नि पर चढ़ायें। मन्दाग्नि जलायें जव सव कुछ जल जाये केवल घृत शेष रह जाय इसको निथार छानकर सुरक्षित रखें। मात्रा घृत २ तोले गाय के एक पाव दूध में मिला कर पीवें। इसके प्रयोग से सर्व प्रकार की ववासीर नष्ट हो जाती है मस्से भी समूल आप ही आप नष्ट होकर गिर जाते हैं।

(१४) नीम की गिरी, रसौंत, हरड़ का छिलका सव समभाग लेवें, वारीक पीस कर इन्हें गुलाव के अर्क में खरल करके तीन तीन रत्ती की गोली वनायें और प्रातः सायं एक एक गोली गो दुग्ध के साथ खायें। सर्व प्रकार की ववासीर लाभ होता है।

(१५) यह योग हमारा वहुत वार वा अनुभूत है इससे ८० प्रतिशत रोगियों कों लाभ हुआ हैं। जिन्होंने श्रद्धा से इसका लगातार ४० दिन प्रयोग किया उनको ववासीर के भयंकर रोग से सदा के लिए छुटकारा मिल गया।
योग—हरड़ कावली का छिलका, वहेड़े का छिलका, आंवला का छिलका, हरड़ छोटी सव पांच पांच तोला लेकर वारीक पीस लें। ककरोंदा वूटा जिसे कूकर भंगरा और गंधोली भी कहते हैं उसके रस में खूव भिगोकर धूप में सुखा देवें। सूखने पर शाहतरे (पित्त पापड़े) के रस में भिगोकर धूप में सुखायें, सूखने पर सत्यानाशी (स्वर्णक्षीरी) के रस में खूव भिगो कर धूप में सुखायें। सूख जाने पर कंघी वूटी के रस में भिगो कर सुखायें पूर्णरूप से सूख जाने पर ५ तोला गाय के घी में तर कर लें। फिर वायविडंग ५ तोले, नीम की गिरी ५ तोले चाकसू ५ तोले, सनाय के पत्ते ५ तोले, गंधक शुद्ध ५ तोले, जीरा सफेद ५ तोले इन सवको वारीक पीस छान लें, और ऊपर वाली औषध में इस को मिलालें। इन सब औषधियों को मिला कर जितना भार हो उतनी ही शुद्ध रसौंत डालकर मूलियों के स्वरस में २१ दिन निरन्तर खरल करें और दो-दो रत्ती की गोलियां वनायें एक एक गोली प्रातः सायं गाय के दूध के साथ जो थोड़ा गर्म किया हो एक

चम्मच गो घृत मिला कर उसके साथ प्रयोग करें। यदि रक्त का दौरा हो और कब्ज भी साथ हो तो एक के स्थान पर दो-दो गोलियां प्रातः सायं लेवें और साथ ही छः माशे से नौ माशे तक ईसबगोल का चूर्ण भी ले लिया करें। खून का दौरा तो प्रथम दिवस में ही बन्द हो जायेगा। कब्ज भी दूर होगा फिर प्रतिदिन एक एक गोली प्रातः सायं गाय के दूध के साथ लें। चालीस दिन तक पथ्य से रहकर रोगी निरन्तर औषध लेगा तो रोग से छुटकारा मिलेगा। मस्सों पर बृहत् कासीसादि तैल लगाये वा पहले लिखी औषध का प्रयोग करें। मस्से भी गिर जायेंगे। रोग भी चला जायेगा सैंकड़ों रोगियों पर इस का अनुभव किया है। सफल औषध है। गुप्त रहस्य खोल कर रख दिया है। लाभ उठायें।

(१६) १ माशा कलमी शोरा पीस कर बकरी वा गाय के तीन पाव दूध के साथ (मीठा मिलाकर) प्रातःकाल सेवन करें। इस से पुराणी से पुराणी बवासीर चाहे खूनी हो वा बादी दोनों में लाभ होता है।

(१७) बन्दगोभी की भुज्जी (शुष्कशाक) गो घृत में पकावें। इसमें काली मिर्च, काला नमक, हल्दी डाल देवें और पीछे पकावें। जब यह पक कर तैय्यार हो जाय तो बेसनी रोटी के साथ खायें और एक घण्टे तक जल न पीवें। यह शाक दोनों समय बनायें और प्रत्येक समय में १०-१० तोला गोघृत खायें। गो दुग्ध धारोष्ण पीवें। अथवा उष्ण करके शीतल करके पीवें। दूध में जल न डालें इस प्रकार २१ दिन तक सेवन करें इसके अतिरिक्त कुछ भी न खायें। यह औषध बवासीर और भगन्दर पर परीक्षित है। भगन्दर की लगाने की औषध का प्रयोग करें तो पूर्ण लाभ होगा।

मूर्च्छा हिस्टेरिया अपस्मार आदि

मूर्च्छा, तन्द्रा, भ्रम, हिस्टेरिया, अपस्मार और संन्यासादि मिलते जुलते से रोग हैं। किन्तु मूर्च्छा थोड़ी बहुत देर में रोषों के न्यून होने से स्वयं दूर हो हो जाता है किन्तु संन्यास रोग में तो रोगी मुर्दे के समान पड़ा रहता है। आयुर्वेद में प्रायः इसे असाध्य ही माना है। इस का रोगी सौभाग्य से ही बच पाता है। मूर्च्छा रोग में रोगी नितान्त लकड़ी के समान पड़ा रहता है। मूर्च्छा पित्त से होती है और भ्रम रोग में वातपित्त दोनों दोष कुपित होते हैं। भ्रम में बेहोश पड़ा

हुआ और तन्द्रा में अर्द्ध वेहोशी होती है। इनमें समीप के वस्तुओं का ज्ञान वना रहता है। तन्द्रा में आवे नेत्र वन्द रहते हैं और आवे खुले रहते हैं। इनमें वह वस्तुओं को घूमता देखता है, मूर्च्छा में उसे कोई ज्ञान नहीं होता।

मुख पर शीतल जल के छींटे मारने से मूर्च्छा दूर हो जाती है। नाक में प्याज का रस वा कोई तेज नसवार सुंघाने से मूर्च्छा चाहे हिस्टेरिया की हो चाहे अपस्मार मृगी की हो वह भी दूर हो जाती है। नमक का जल नाक में डालने से मूर्च्छा तथा हिस्टेरिया मृगी की मुर्च्छा दूर हो जाती है। यह जादू के समान कार्य करता है। इसी प्रकार कायफलादि की नस्वार वा चूना और नौसादर मिलाकर वनाई हुई तेज नसवार सुंघानेसे मृगी हिस्टेरिया आदि की मूर्च्छा दूर हो जाती है। इसी प्रकार तेज अंजन आंख में डालने से मूर्च्छा दूर हो जाती है। यह अस्थायी चिकित्सा है इससे रोग थोड़ी देर के लिए हटता है दूर नहीं होता। इन रोगों की स्थायी चिकित्सा नीचे लिखता हूं।

(१) आध सेर गो दुग्ध और आध सेर जल दोनों को मिलाकर अग्नि पर पात्र में रख कर उवालें। इसमें अश्वगंध नागौरी ६ माशे, सितावर ६ माशे दोनों को कूटकर डाल दें और इतना पकायें कि केवल दूध शेष रह जाय। इसे मल छान कर मिश्री मिलाकर पिलायें। यह दूध उन पर लिखे सभी रोगों की उत्तम औषध है किन्तु इस दूध के साथ सुधानिधि आदि रस मूर्च्छादि रोगों में दिया जायेगा तो सोने पर सुहागे का कार्य करेगा और इस से वहुत ही लाभ होगा। यह अनुभूत योग है।

(२) सुधानिधि रस—रससिन्दूर एक तोला, पीपल १ तोला दोनों को खूव वारीक पासकर रख लें। मात्रा दो रत्ती ३ माशे शहद में मिलाकर चटा दें और ऊपर से एक संख्या पर लिखा अश्वगन्धादि सहित उवाला हुआ दूध पिला दें यह औषध इस दूध के साथ प्रातः सायं दोनों समय देवें इससे स्थायी लाभ होगा। मूर्च्छादि रोग दूर होंगे।

(३) मधुयष्टिघृत छः माशे से १ तोले तक प्रातः सायं गाय के गर्म दूध के साथ देवें। यह मूर्च्छा रोग की उत्तम औषध है।

(४) हिस्टेरिया—सिद्ध मकरध्वज १ रत्ती, मुक्ताभस्म आधा रत्ती, भस्म शाखामूंगे आधा रत्ती, स्वर्ण भस्म चौथाई रत्ती सव को मिला कर रोगी को

यह मात्रा कुछ मुनक्कों के साथ खिलाकर ऊपर से अश्वगंध सितावर तथा दूध जो इस प्रकरण पर लिखा है पिलायें। इस दूध में ३ माशे ६ माशे तक वादाम रोगन भी डाल लें और यह औषध और दूध दोनों समय देवें यह हिस्टेरिया की सर्वोत्तम औषध है इससे सैकड़ों क्या हजारों हिंस्टेरिया के रोगी ठीक हो चुके हैं। यदि अकेला दूध ही पिलाया जाय तव भी लाभ होता है। संख्या ४ का योग वहुत मंहगा है। भोजन के पीछे अश्वगन्धारिष्ट का सेवन दोनों समय करायें तो हिस्टेरिया, मूर्च्छा, मृगी, पागलपन आदि सभी रोगों में लाभ होता है। हिस्टेरिया रोग में दशमूलारिष्ट का प्रयोग भी लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

मासिक धर्म के कारण मूर्च्छा

५ यदि मूर्च्छा मासिक धर्म की अनियमितता से होती हो नीचे लिखी दवा देवें—वायविड़ग, हालों, वड़ की दाढ़ी, सोये के वीज, कलौंजी, मेथे के वीज, प्रत्येक एक-एक तोला लें। सवको कूटकर आठ पुड़ियाँ वना लें। इनमें से एक पुड़िया डेढ़ पाव जल में उवालें। जव चौथाई पानी शेष रह जाये तो आग पर से उतार कर मसल कर छान लें। इसमें एक डेढ़ पाव गाय का दूध वना लें। फिर एक देगची में २ से ४तोले तक गो घृत डाल कर गर्म करें। जव गर्म हो जाये तो दूध उसमें छोड़ देवें दो-तान उवाल आने पर उसमें ४ तोला खांड़ डाल कर रोगी को पिलायें। यह सैकड़ों वार की अनुभूत औषधी इससे मासिक धर्म खुल कर आयेगा। किन्तु यह ध्यान रखें कि इस औषध को मासिक धर्म के प्रारम्भ होने से चार-पाँच दिन पहले आरम्भ करें और औषध दोनों समय लें। इससे मासिक धर्म की सभी प्रकार की अनियमितता तथा हिस्टेरिया दोनों ही रोग नष्ट हो जाते हैं।

६ —कुरंग श्रृग भस्म १ तोला, जौखार (यवक्षार) १० तोले, दोनों को मिला कर उसमें घीकुंवार (कुमारी या गवारपाठा) का रस डाल कर खरल करके चार-चार रत्ती की गोलियाँ वनाले। मात्रा १-१ गोली प्रातः सायं गाय के गर्म दूध के[साथ प्रतिदिन सेवन करें। मासिक धर्म से १ मास वा २० दिन पूर्व इस औषध का प्रयोग कराना चाहिये। इससे मासिक धर्म की गड़वड़ी हिस्टेरिया और नलों की पीड़ा आदि रोग दूर हो जाते हैं।

कृमि मूर्च्छा

६—यदि पेट के कृमियों (कीड़ों) के कारण रोगी को मूर्च्छा वा मृगी का दौरा पड़ता हो तो वमन, विरेचन की औषध का प्रयोग करें।

वमन के लिये नौ माशे मैनफल थोड़े से दूध में घोल कर पिलायें और ऊपर से पेट भर कर गोदुग्ध पिला दें। कुछ मिनटों के पश्चात् मितली होकर वमन (कै) होगी और कुछ थोड़ी देर पीछे खुल कर शौच आयेगा। इस प्रकार पेट साफ होने पर कुछ दिनों तक कृमिमुद्गर रस और विडंगासव का प्रयोग कराना चाहिये। इससे कृमियों के कारण होने वाली मूर्च्छा और हिस्टेरिया समाप्त हो जायेगा।

मृगी अपस्मार

१. आक की जड़ का छिलका बकरी वा गाय के दूध में घोट कर दौरे के समय नाक में टपकाने से मृगी का दौरा समाप्त हो जाता है।

२. कपिला अर्थात् सर्वथा कृष्णाकाली गाय के मूत्र की कुछ बूंदें प्रतिदिन मृगी से पीड़ित रोगी के नाक में टपकायें तथा उसी के गर्म दूध में पञ्चगव्य घृत पिलाने से मृगी समूल नष्ट सो जाती है।

३. दो तोला सितावर का चूर्ण गाय के आधा सेर दूध में खूब उबालें। और छानकर इसमें दो तोला गोघृत मिलाकर प्रति दिन पिलायें इससे मृगी रोग समूल नष्ट हो जाती है।

४. गाय के दूध में १ तोला पञ्च गव्य घृत व महापञ्चगव्यघृत मिलाकर प्रातः सायं मृगी अपस्मार के रोगी को पिलाने से यह रोग सर्वथा समाप्त हो हो जाता है।

५. अश्वगन्ध नागौरी १ छटाँक, मिसरी १ छटांक दोनों को कूट छानकर ६ माशे प्रातः सायं गाय के दूध के साथ लेने से मृगी दूर भाग जाती है। मेरा अनेक रोगियों पर अनुभूत है।

६. वचं का चूर्ण ३ माशे, गोघृत छः माशे, शहद, एक तोला मिलाकर मृगी के रोगी को चालीस दिन तक खिलायें और भोजन में गाय का दूध अधिक

पिलाय। मृगी से सदैव के लिये पीछा छूट जायगा।

७. पञ्च गव्य, घृत और महापञ्चगव्यघृत इन में किसी एक को छः माशे से १ तोले तक गाय के गर्म दूध में मिलाकर प्रातः सायं चालीस दिन तक रोगी को खिलाने से सर्व प्रकार की मृगी अपस्मार और पागलपन सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। ये दोनों घृत इन रोगों की सर्वोत्तम औषध है।

८. इसी प्रकार महाचैतिसघृत, ब्राह्मी घृत, कुष्माण्डघृत सिद्धार्थघृत सभी मृगी की श्रेष्ठ औषधियां हैं। इन की मात्रा ६ माशे से १ तोले तक है इनका प्रयोग गाय के दूध में प्रातः सायं कराने से मृगी काफूर के समान भाग जाती है। इन में से किसी एक का प्रयोग करायें सारस्वतारिष्ट अश्वगन्धरिष्ट इन दोनों का प्रयोग साथ साथ भोजन के पश्चात् रोगी करे तो सोने पर सुहागा है।

उन्माद पागलपन

१. ब्राह्मी २ तोले, सोंठ १ तोला, काली मिर्च छः माशे, पीपल बड़ा छः माशे मालकंगनी २ तोले, शंख पुष्पी १० तोले, पेठे के बीजों की गिरी ५ तोले बादाम की गिरा १० तोले इलायची छोटी के दाने २ तोले सब को कूट छान कर चूर्ण बनाले। भस्मरजत (चान्दी) ३ माशे, भस्म मुक्ता ३ माशे- अकीक और प्रवाल भस्म ३-३ माशे इन सबको मिला लें। और नीचे लिखी औषध में मिलालें। पेठा मिठाई घीया कश में कश लें इसे चार सेर लेकर और गाय के १६ सेर दूध में पकायें यहाँ तक पकायें कि ये खोये के समान हो जायें। फिर इसमें आधा सेर गोघृत मिलाकर खूब पकायें वहाँ तक कि वह लाल हो जाय कच्चा न रहे। आग से उतारकर इसमें २॥ सेर खांड की चासनी तैयार करके पेठा आदि इसमें डाल दें तथा इसी में औषध चूर्ण और भस्म जो पहली लिखी हैं मिला लें मात्रा १ तोले से २॥ तोले तक प्रातः सायं गोदुग्ध के साथ खायें। इसके सेवन से उन्माद पागलपन निश्चय से समूल नष्ट हो जाता है।

२. मालकाँगनी का तेल ५ बूंद से दस बूंद तक गाय के दूध की मलाई वा मक्खन में मिलाकर खायें और ऊपर से गाय का दूध पी लें इससे उन्माद, मृगी, मस्तिष्क निर्बलता आदि सभी दूर होते हैं।

३. स्वर्ण भस्म १ माशे, प्रवाल भस्म २ माशे, मुक्ता भस्म ३ माशे, कुकराद, भस्म ३माशे, भस्म अकीक ६माशे, यशद पत्थर की भस्म १तोला, इन सब को खरल में डालकर ब्राह्मी के स्वरस में डालकर २१ दिन तक खरल करें। सूखने पर शीशी में सुरक्षित रखें।

मात्रा चौथाई रत्ती से १ रत्ती तक—गाय की मलाई या मक्खन के साथ दें और ऊपर से गाय का धारोष्ण वा थोड़ा गर्म दूध पिलायें। यह उन्माद के लिये सर्वोत्तम औषध है। कुछ दिन के प्रयोग से निरन्तर दूर हो जाता है।

४. आठ—दस वर्ष पुराना गाय का एक तोला घी गर्म करके गाय के दूध में डाल दें। इच्छा के अनुसा र इसमें मिश्री वा खांड भी मिला कर पीयें यह पागल-पन की वहुत अच्छी औषध है।

५. लाल रंग की चिरमठी का चूर्ण बनाकर एक पाव गाय के दूध के साथ प्रातः सायं कुछ दिन प्रयोग करने से पागलपन दूर होता है। विशेष रूप से कफ प्रकुपित उन्माद की बहुत अच्छी औषध है।

६. खरेंटी ४तोला, बिसखपरे की जड़ एक तोला, इन दोनों को डेढ़ पाव पानी में उबाल लें। जब केवल आठ तोला पानी रह जाये तो इसे मलकर छान लें। फिर इसमें डेढ़ पाव दूध डालकर पकायें जब पानी जल जाये केंवल दूध शेष रह जाने पर मिश्री मिलाकर रोगी को पिलायें। यह उन्माद को दूर करने के लिये अत्यन्त श्रेष्ठ और अचूक औषध है।

७. पागल पन के लिये ब्राह्मी घृत, सारस्वत घृत, महापैशाचिक घृत और चैतिस घृत आदि घृतों का योग गाय के दूध में डाल कर पकाया जाय तो यह सभी रोगियों के लिये बहुत अच्छी और अनुभूत है। इनका प्रयोग करें और लाभ उठायें।

वात व्याधि अथवा वायु के रोग

यह प्रसिद्ध है कि वायु के रोग ८० प्रकार के हैं। इन सबके विषय में पृथक्-पृथक् लिखना इस छोटे से पुस्तक में असम्भव है। आयुर्वेद शास्त्रों में इनके विषय में खूब विस्तार से लिखा है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में पित्त, कफ और सभी धातुओं

को लंगडा लिखा है।

पित्तं पङ्गु कफंपङ्गु पङ्गवा मल धातव:
वायुना यत्र नीयन्ते तत्र गच्छन्ति मेधवत् ॥

पित्त, कफ, मल और धातु सब लंगड़े हैं यह वायु ही उन को जहां चाहे ले जाती है। जैसे वायु बादलों को जहाँ चाहे ले जाता है। क्योंकि वायु ही इन में सबसे बलवान् है। यही बहुत से रोगों का कारण है। वात का प्रकोप वर्षा ऋतु और वसन्त ऋतु में होता है। दिन और रात के तीसरे भाग में भोजन के पचने पर वायु कुपित होता है। रूखे सूखे और शीतल पदार्थ के अधिक खाने से तथा अन्य बहुत से कारणों से वायु के रोगों की उत्पत्ति होती है। वायु के सभी रोगों को दूर करने के लिये गाय के घी दूध से बढ़ कर संसार में कोई औषध नहीं है। संसार की सबसे मूल्यवान् औषधी और एक पलड़े में रख लें और गाय के घी दूध को एक पलड़े में रख लें। गाय का घी दूध ही सबसे बढ़कर वायु के रोगों को दूर करने वाली औषध सिद्ध हुया है। अर्दितवायु (लकवा), पक्षाघात (अधरंग गृध्रसी (रींगनबाय) कुबड़ापन, लंगड़ापन, कम्पन आदि भयंकर रोग सभी वायु के रोग हैं। वायु के रोगों में ही पीड़ा वा दर्द होता है।

वायु चिकित्सा

वायु के रोगों के लिये आयुर्वेद के ग्रन्थों में गूगल को एक प्रधान औषध माना है। योगराज और महायोगराज गुगल अनुपान भेद से सभी वायु के रोगों को समूल नष्ट करते हैं। इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के वायुओं की नाशक औषध गूगल से तैयार की जाता हैं जैसे रींगन बाय, रासना गूगल, पथ्यादि गूगल अन्य वायु रोगों के लिये त्रियोदशन गूगल, कचनारगूगल, अमृतादि गूगल, सिंहनाद गूगल किशोर गूगल, रस अभ्र गूगल, वातगज केसरी गूगल, इसी प्रकार कितने ही प्रकार के गूगल आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखे हैं ये सभी प्रायः वायु रोगों के नाश के लिये प्रयुक्त होते हैं। गूगल को शुद्ध करने के लिये गोमूत्र, गोदुग्ध आदि का प्रयोग होता है। किसी भी प्रकार का गूगल तैय्यार करें तो गाय का घी लगाकर बार बार कूटा जाता है। तैय्यार होने के पीछे सभी गूगलों का अनुपान गाय का

दूध, मक्खन, घी और मलाई आदि ही है। गाय का घी दूध खाये विना वायु के रोग कभी नहीं जा सकते। वायु के रोगों को दूर करने के लिये घी दूध से अतिरिक्त गोमूत्र का भी प्रयोग होता है। वह भी वायु रोगों को दूर करने के लिये सव औषधियों से वढ़कर हैं इस पर एक पृथक् पुस्तक ही लिखना होगा।

वायु के रोगों की चिकित्सा के लिए जितने पाक वनाये जाते हैं उन सव में गाय का दूध और गाय का घी डाला जाता है और उनका अनुपान भी गाय का गर्म दूध ही होता है। जैसे लहसुन पाक, मेथी पाक, अरण्डप ाक, अश्वगन्ध पाक ये सभी वायु के रोगों को समूल नष्ट करने वाले हैं। इन सभी पाकों का विधि आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है। वहाँ देखकर पाठक बना लें और प्रयोगकर लाभ उठायें।

एक पाक वनाने का विधि नीचे पाठकों के ध्यानार्थ लिख देते हैं।

मेथी पाक—मेथी के वीज ३२ तोले, सोंठ ३२ तोले, दोनों को कूट पीसकर वारीक कर लें और गाय के चार सेर दूध में पकायें जव खोये के समान हो जाय तो नीचे उतार लें और निम्नलिखित औषधियों का वारीक चूर्ण वनायें सोंठ, कालीमिर्च, पीपल वड़ा, पिपलामूल, चित्रक, अजवायन धनिया, जीरा सफेद, कलौंजी, सोंफ, जायफल, कचूर, दालचीनी, तेजपात नागकेसर, नागरमोथा सव १ एक तोला इसके वारीक चूर्ण को गाय के एक पाव घी में भून लें और ऊपर वनाये हुये खोये को भी एक पाव भून लें और नो सेर खाँड की चासनी तैय्यार करके सव वस्तुओं को मिला इसमें मिला दें इसकी मात्रा दो तोला गाय के गर्म दूध के साथ प्रातः सायं प्रयोग करें। इससे सव प्रकार के वायु के रोग समूल नष्ट हो जाते हैं अश्वगन्धादि सभी पाक इसी प्रकार तैय्यार किये जाते हैं।

इसी प्रकार अश्वगन्धादिघृत अमृतादि घृत, महातिक्त, काञ्जीकादि घृत शुण्ठिधान्य घृत और शृंगवेरादि अनेक प्रकार के घृत वायु रोगों के लिये तैय्यार किये जाते हैं इन सव में घी तो गाय का डाला ही जाता है। किन्तु प्रायः अधिकतर में गाय का दूध भी डाला जाता है। इनका अनुपान भी प्रायः गाय का गर्म दूध ही है। इन सव का निर्माण विधि और प्रयोग आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है। घृत चिकित्सा नाम के पुस्तक में इन पर विस्तार से लिखा जायगा। केवल एक घृत पाठकों के ज्ञानार्थ नीचे लिख देते हैं।

अश्वगन्धादि घृत—अश्वगन्धनागौरी २ सेर कूटकर मोटी छालनी में छान लें और ३२ सेर पानी में पकायें जब ये आठ सेर रह जाये तो इसमें आठ सेर गाय का दूध डाल दें। दूध मिलाने से पहले क्वाथ को उबाल कर छान लेना चाहिए। फिर क्वाथ और गाय का दूध मिला कर आग पर चढ़ायें इस में गाय का दो सेर घी भी डाल लें। जब यह पकने लगे तो इसमें आध सेर अश्वगन्धा-वा गौरी का बारीक छना हुआ चूर्ण जो पहले से किया तैय्यार हुआ था पानी में भिगो कर गोला बनाकर डाल दें। नरम मन्दाग्नि जलाये। जब सब कुछ जल कर सूख जाय केवल घी शेष रह जाये तो उसे छानकर सुरक्षित रखें। इसकी मात्रा १ तोले से चार तोले तक गाय के गर्म गर्म दूध में डालकर पिलायें। इससे सब प्रकार के वायु रोग समूल नष्ट हो जाते हैं और शक्ति भी बढ़ती है।

इसी प्रकार वायु के रोगों की चिकित्सा के लिए अनेक प्रकार के तैल तैय्यार किये जाते हैं। जैसे महानारायण तैल, नारायण तैल, महाबला तैल, महामाषादि तैल, प्रसारणी तैल, विषगर्भ तैल, सैन्धवादि तैल, कुष्ठादि तैल, अरिष्ट कटोर तैल आदि अनेक वायु रोग नाशक तैल, मालिश और खिलाने के लिये तैय्यार किये जाते हैं। इन सब में प्रायः गोमूत्र, गोदुग्ध आदि डाले जाते हैं। तभी इन में वायु रोगों को दूर करने के गुण आते हैं।

इनसे अतिरिक्त वायु रोग नाशक बहुत से अच्छे अच्छे रस जैसे बृहद् वातचिन्तामणिरस, मृत्युञ्जय रस, और आमवातादि रस आदि बहुत से रस वात रोगों की चिकित्सा के लिये लिखे हैं। इससे अतिरिक्त भी काष्ठादि औषध से चूर्ण और क्वाथ भी बनते हैं। उनके साथ भी गाय के घी दूध का प्रयोग कराया जाता है। निष्कर्ष यह है कि ८० प्रकार के वायु रोग नाश के लिये गो माता स्वयं एक बहुत बड़ा औषधालय रहा है। इससे उत्पन्न हुय दूध, घी, मूत्रादि सभी प्रकार के वायु रोगों के नाश करने के लिये अमृत रूपी औषध हैं। पाठक इनका यथोचित प्रयोग करें और लाभ उठायें।

गो दुग्ध और गोघृत विष नाशक हैं

(१) गाय के दूध में गोघृत मिलाकर पिलाने से धतूरे का विष नष्ट होता है। धतूरे में नशा भी होता है वह भी इससे दूर होता है।

(२) गोदुग्ध और गोघृत दोनों मिलाकर पर्याप्त मात्रा में पिलाने से भांग का नशा दूर होता है।

(३) जंगली कांटेदार चुलाई की जड़ घोट गोदुग्ध के साथ वार-वार पिलाने से वावले कुत्ते, बावले गीदड़, सर्पविष तथा और सव ही विष दूर होते हैं।

(४) कांटेदार चुलाई की जड़ को धोकर साफ करके जल के साथ वारीक पीस लें और उससे चौगुणा गाय का घी लें, घी से चौगुणा गाय का दूध लें सव को मिलाकर कलई वाले पात्र में मन्द अग्नि से पकायें जब केवल घृत ही रह जाय तब निथार कर छान लें। मात्रा १ तोले से २ तोले तक गाय के गर्म दूध में मिलाकर वा वैसे ही घृत खाने से चूहों के काटने से जो विष शरीर में आ जाता है वह तथा अन्य विष नष्ट होते हैं।

(५) धतूरे को जड़ ६ माशे से एक तोले तक रगड़ कर छान कर गाय के दूध के साथ पिलाने से उन्मंत्त (बावले) कुत्ते के काटने का विष दूर होता है।

(६) गोदुग्ध में घी मिलाकर पिलाने से संखिया का विष दूर होता है किन्तु वार-वार पिलाना चाहिये। वमन हो सके तो वमन कराते रहें। एक वार ऐसा करने से पूज्य पं० जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती के प्राण एक वैद्य ने बचाये थे। उनको १ छटांक संखिया का विष एक धूर्त ने दे दिया था।

(७) मीठा तेलिया का विष खाये कुछ समय वीत गया हो तो उसे निर्विषी का चूर्ण २ तोले घी मिले दूध के साथ प्रयोग कराने से विष दूर होता है।

(८) गाय का घी दूध मिलाकर पिलाने से सव प्रकार के विष दूर होते हैं।

(९) गाय का दूध स्वयं विषनाशक है इसके साथ कोई विष नाशक औषध देने से सोने पर सुहागे का कार्य करता है। अमृत घृत १ तोले से २ तोले तक

दूध में मिलाकर देने से सभी विषविकार दूर होते हैं ।

भिलावे का विष

(१०) अशुद्ध भिलावा जो विष है यदि शरीर के किसी अंग पर इसका तैल लग जाये तो भयंकर सूजन तथा खुजली उत्पन्न करता है गोदुग्ध में अखरोट की गिरी घोटकर सूजन और खुजली दूर होगी ।

(११) भिलावे का धुआँ लग जाने से शरीर आँख और मुख पर आई सूजन अम्बा हल्दी, सांठी चावल, दूध, और हल्दी को चावलों के वासी पानी में पीस कर इसमें गोदुग्ध मिलाकर सूजन पर लेप करने से लाभ होगा ।

(१२) भिलावा भूल से अधिक खा जाने से शरीर में बहुत उष्णता (गर्मी) बढ़ गई हो तो गाय की दही मिश्री मिला कर वार-वार पीने से पूर्ण लाभ लाभ होता है ।

(१३) काले तिल, काली मिट्टी, दोनों को गो दुग्ध में पीस कर लेप करने से भिलावे की सूजन दूर होता है ।

गोदुग्ध से निर्बलता की दूरी

धातुवंर्धक सुधा—अश्वगन्ध आध पाव, शतावरी पाव भर, सफेद मूसली डेढ़ पाव, तालमखाना आधा सेर, मक्खन ढाई पाव, सेमर की मूसली ३ पाव और मिश्री १ सेर सब औषधियों को कूट छान कर रख लें। प्रातः सायं गेहूं के आधा सेर आटे की रोटी वना उसका चूरमे में कर लें । उस चूरमे में आधा पाव खांड और तीन तोले ऊपर लिखी औषधियों को भली प्रकार से मिलालें और इस प्रकार चूर्मा बना कर दूध वाली गाय को खिलाते रहें। जब गाय को खाते-खाते इस प्रकार दस दिन हो जायें, तब उस गाय का धारोष्ण दूध मिश्री मिलाकर निर्बल व्यक्ति को पिलायें। परिणाम स्वरूप ४० दिन उस गाय का दूध सेवन करने से शरीर में बल, पौरुष और वीर्य की बहुत वृद्धि होती है। इस प्रकार की सुधा वैद्य हरिदास मथुरा वाले ने कलकत्ता में एक मारवाड़ी को सेवन करवाई थी। इसके सेवन से हड्डियों का कंकाल हृष्ट पुष्ट हो गया । उसका कुरूप चेहरा

गुलाब के फूल के समान हो गया। इसके सेवन से क्षय, क्षीणता, प्रमेह, दिल और दिमाग की कमजोरी और सिर के रोग नष्ट हो जाते हैं। जिनको वीर्य की कमी से नामर्दी या क्षयरोग होता है, उनके लिये तो यह अमृत रूप है।

दूध को विशेष गुणकारी बनाने के लिये महर्षि चरक ने एक और युक्ति लिखी है कि सवा सौ गौओं को प्रतिदिन उड़द के पत्ते या विदारी कन्द खिलाना चाहिये। इन सवा सौ गायों का जो दूध निकले वह २५ गायों को पिला देना चाहिये और उन २५ गायों का दूध फिर ५ गायों को पिला देना चाहिये और उन पाँच गायों का दूध फिर १ गाय को पिलाना चाहिये। उस १ गाय का दूध धातुक्षय के रोगी को पिलाना चाहिये, जिससे उसके शरीर में एक दम नया बल, नया चैतन्य, नया जीवन और नया वीर्य पैदा होकर थोड़े समय में उसका शरीर कांति और शक्ति का भण्डार हो जाता है। कहा जाता है कि भगवान् बुद्ध जब उग्र तपस्या करके अत्यन्त क्षीण शरीर हो गये थे। उस समय इसी प्रकार के दूध में तैय्यार की हुई खीर मिल जाने से उनमें एक दम नवीन बल और नवीन शक्ति का संचार हो गया था। वह खीर ऊपर लिखित विधि के अनुसार सुजाता नाम की महिला ने बनाकर महात्मा बुद्ध को खिलाई थी, उसी के कारण उनको ज्ञान हुआ और एक तत्त्व के दर्शन हुये।

पारा और गौ का दूध

पारद वा पारा जिसे रस भी कहते हैं मानव शरीर के लिए एक अत्यन्त दिव्य और लाभदायक वस्तु है। एक प्रकार आयुर्वेद के अच्छे रसों वा औषधियों का प्राण है। यदि पारद का विधिपूर्वक सेवन किया जाय तो वह भी अमृत तुल्य रसायन है। यदि इसके विधि में किसी प्रकार की भूल हो जाती है तो वह विष के समान मारक भी है। पारद को संस्कारित करने, उससे चन्द्रोदय के समान अनेक प्रकार के रस बनाने और उनका सेवन करने का विधि अनेक स्थानों पर वर्णित है। किन्तु ये सब विधि बहुत कठिन और योग्य वैद्यों तथा पथ्य करने वाले चतुर रोगियों पर सफल हो सकते हैं। सर्व साधारण व्यक्ति इनको तैय्यार नहीं कर सकते। इसलिये कोई ऐसा उपाय जिसको सर्व साधारण उपयोग में ले सकें और पारे का लाभ उठा सकें तो वह बहुत लाभप्रद हो सकता है।

जंगली जड़ी बूटी नाम के पुस्तक में एक महात्मा के द्वारा बतलाया हुआ एक विधि प्रकाशित हुआ है। वह इस प्रकार है—बढ़िया सिंगरफ तीन तोले को खट्टे नींबू के रस में तीन चार घण्टे तक घोटें और सुखालें। फिर सूख जाने पर इसी प्रकार खट्टे नीबू के रस में पुनः चार घण्टे घोटकर सुखायें, इस प्रकार सात वार खट्टे नींबू के रस में घोट कर सुखाते रहें। इसी प्रकार सात वार भेड़ के दूध में घोट कर सुखायें। उस शुद्ध सिंगरफ के सूखने पर पीस कर तीस पुड़िया बनायें। और फिर एक सेर उड़द की दाल पानी में गला कर उसमें एक पुड़िया शुद्ध हिंगुल (सिंगरफ) को मिलाकर एक स्वस्थ और दूध देनें वाली बकरी को खिला देवें और बकरी को चरने के लिये जंगल में छोड़ देवें। इस प्रकार ये तीस पुड़िया तीस दिन में उड़द की दाल में बकरी को खिला देवें। आरम्भ के आठ दिनों में बकरी का दूध दुह कर फैंक देंवे। नौवें दिन से उस बकरी का दूध पीने के कार्य में लाना चाहिये। अथवा उसके दूध में एक तोला कौंच के बीजों का चूर्ण डाल-कर खीर बनाकर खाना चाहिये खीर पच जाने के पीछे रोटी चावल घी और दूध का भोजन करें। नमक, मिर्च, खटाई, मसाले आदि सब छोड़ देने चाहियें। बकरी को सिंगरफ खिलाने का प्रयोग पूरा हाने के पश्चात् आठ दिन पीछे तक उसके दूध का सेवन करना चाहिये। इस प्रकार एक मास तक इस दूध का सेवन कर लेने के १ मास पीछे तक पथ्य का पूरा पालन करें।

इस प्रकार जो एक मास तक इस दूध का सेवन करेगा, उसमें बल, बुद्धि, तेज और कान्ति की अत्यन्त वृद्धि होगी। नपुंसक पुरुषत्व शक्ति प्राप्त करके अनेक सन्तानों का पिता बनेगा। इससे सब प्रकार की निर्बलता दूर होगी। क्योंकि बकरी को खिलाये हुये सिंगरफ में जो शुद्ध पारा होता है उसका सत्त्व उसके दूध में आ जाता है। जिससे पारद सेवन करने के जो अपूर्व गुण हैं वे उस दूध के सेवन से प्राप्त हो जाते हैं और पारा विधिवत् बना है वा नहीं इन झंझटों में पड़ने की आवश्यकता भी नहीं रहती। क्योंकि बकरी की जठराग्नि के योग से उसमें ऐसी क्रियायें हो जाती है कि उससे हानि होने का कोई संभावना नहीं रहती।

इसी प्रकार भिन्न-भिन्न रोगों को दूर करने के लिये, उन रोगों को दूर करने वाली औषधियां दुधारू गौवों और बकरियों को खिलाई जायें तो उन गौं आदि

के दूध के पीने से सब रोग दूर हो सकते हैं। जैसे बकरी को आक,धतूरा खिलाया जाय तो उसके दूध में श्वास के नष्ट करने की शक्ति उत्पन्न होती है। इसी प्रकार उनको तिक्त दोड़ी वा तिक्त जीवन्ती (रुद्रदन्ती, रुदन्ती) खिलाई जाये तो उसके दूध में क्षयरोग नाशक गुण उत्पन्न हो जाते हैं।

दूध की चिकित्सा

(१) गोदुग्ध में अरण्डी का तैल मिलाकर पीने से पारे और हिंगुल के उपद्रव गिरते हैं।

(२) दूध में मिसरी मिलाकर वा घी मिलाकर नाक में टपकाने से नकसीर वन्द हो जाती है।

(३) स्त्री के दूध में मक्खी की विष्ठा मिलाकर नस्य देने से हिचकी नष्ट हो जाती है।

(४) स्त्री के दूध में चन्दन मिलाकर नस्य देने से हिचकी वन्द हो जाती है।

(५) स्त्री का दूध नेत्रों में टपकाने से नेत्र रोग आंख का दुखना अदि दूर होता है।

(६) बकरी के दूध में मोचरस मिलाकर पीने से प्रदर रोग नष्ट होता है।

(७) दूध में खाड वा मिश्री मिलाकर भोजन के साथ खाने से रक्त प्रदर नष्ट होते हैं।

(८) सितावर १ छटांक, अश्वगन्ध नागौरी १ छटांक, गोखरू १ छटांक विदारीकन्द १ छटांक, विधारा बीज शुद्ध १ छटांक और मिश्री वा खांड ५ छटांक, सबको कूट छान कर मात्रा १ माशे से ३ माशे तक गौ के धारोष्ण दूध के साथ एक मास तक लेने से स्वप्न दोष, प्रमेह आदि सभी धातु-रोग समूल नष्ट होते हैं। बल शक्ति तेज आयु आदि बढ़ते हैं। वीर्य के रोगों के लिये सस्ती और सर्वोत्तम औषध है। इसके सेवन से स्त्रियों का श्वेत प्रदर भी दूर होता है, कुमारी और कुमारों को इसका सेवन दूध से नहीं जल से करना चाहिये नहीं तो उनको हानि होगी। निर्बल और गृहस्थियों को गो दुग्ध के साथ सेवन करना बहुत लाभदायक है। विधारा के बीजों को गोदुग्ध में एक दो

घण्टे उबाल लेना चाहिये फिर इन्हें निकाल कर धोकर सुखा लें। यदि वस्त्र में पोटली बांधकर दोला यन्त्र से शुद्ध करें तो वहुत अच्छा है। बचे हुए दूध को फैंक देना चाहिये।

दूध में विशेष तेजाब

कुछ विद्वानों का मत है कि दूध का तेजाव वहुत शक्ति दायक होता है। वह अजीर्ण, अरुचि, मधुमेह और मसाने की खरावी में वहुत लाभदायक है। बच्चों को होने वाले हरे रंग के दस्तों में यह दिया जाय तो दस्त वन्द हो जाते हैं। सौ भाग जल में दो भाग दूध का तेजाव मिलाकर एक ड्राम की मात्रा में देने से वहुत लाभ होता है। यह दूध का तेजाब 'लेकेटिक एसिड' कहलाता है। यह विना रंग का विना खुशवू का, स्वाद में खट्टा होता है। इसका प्रयोग डाक्टर लोग करते हैं।

महाभारत में एक कथा आती है। अयोद धौम्य ऋषि का एक शिष्य उपमन्यु था। ऋषि ने अपने शिष्य को आज्ञा दी "वत्स उपमन्यो गा रक्षस्वेति" वेटा! उपमन्यु तुम गोरक्षा करो। गुरु की आज्ञा मानकर वह गो रक्षा करने लगा। दिन भर गौओं की रक्षा करके संध्या को आश्रम में वापिस आता गुरुदेव को नमन करता। एक दिन ऋषि ने कहा वेटा तुम वहुत पुष्ट हो अपनी जीविका कैसे चलाते हो? मैं भिक्षा से अपनी जीविका चलाता हूँ शिष्य ने उत्तर दिया। ऋषि वोले—मेरी आज्ञा के विना भिक्षा के अन्न का भोजन नहीं करना चाहिये। 'ऐसा ही होगा' यह कह कर शिष्य गो रक्षा करने लगा। एक दिन पुनः उपमन्यु को पुष्ट देखकर उपाध्याय ने कहा—वेटा उपमन्यु, तुम्हारा भिक्षा अन्न तो मैं ले लेता हूँ। तुम अव भी पुष्ट हो, अव किस प्रकार से भोजन का निर्वाह करते हो। उपमन्यु ने कहा—पहली वार की भिक्षा तो आपको दे देता हूँ और दूसरी वार भिक्षा मांगता हूँ उससे मेरा निर्वाह होता है। गुरु ने कहा तुम लोभी हो, तुम दूसरे भिक्षार्थियों की वृत्ति को मार देते हो, शिष्य ने कहा—फिर ऐसा नहीं करूंगा। और पूर्ववत् गौ रक्षा करने लगा।

एक दिन गुरु ने उसे पुष्ट देखकर कहा—अव तुम भिक्षा भी नहीं मांगते, पुनः क्या खाते हो? शिष्य ने उत्तर दिया—मैं गायों का दूध पीकर निर्वाह करता

हूँ। गुरु ने कहा—मेरी आज्ञा के विना तुम्हारा दूध पीना उचित नहीं है। शिष्य "तथास्तु" कह कर फिर गो रक्षा करने लगा। शिष्य फिर नमस्कार करने के लिये आया गुरु ने फिर उसको वैसा ही हृष्ट-पुष्ट देखकर पूछा—"भैक्षं नाश्नासि न चान्यच्चरसि। पयो न पिबसि। पीवोऽसि। केन वृत्तिं कल्पयसि।

भिक्षा अन्न का भोजन नहीं करते। दूसरी वार भिक्षा भी नहीं मांगते। दूध भी नहीं पीते तो भी पुष्ट हो अव किस प्रकार से भूख मिटाते हो? शिष्य ने उत्तर दिया।

"भोः फेनं पिबामि यदिमे वत्सा मातॄणां स्तनं पिबन्त उद्गिरन्तीति।

शिष्य ने कहा बछड़े अपनी-अपनी माताओं के स्तन पीते हुये जो फेन (झाग) गिराते हैं उसी को पीकर प्राण बचाता हूँ। उपाध्याय ने कहा—एते त्वदनुकम्पया गुणवन्तो वत्सा प्रभूततमं फेनमुद्गिरन्ति। तदेवमपि वत्सानां वृत्त्युपरोधं करोष्येवं वर्तमानः फेनमपि त्वं न पातुमर्हसीति॥

यह सव गुणवान् वछड़े तुम पर दया करके वहुत अधिक फेन गिराते हैं। इस प्रकार तुम उसी फेन को पीकर वछड़ों की वृत्ति का लोप करते हो। सो फेन पीना भी तुम्हारे लिये अनुचित है।

इस कथा से यह सिद्ध होता है कि गायों के दूध के जो फेन (झाग) हैं। उनको पीकर ब्रह्मचारी उपमन्यु हृष्ट-पुष्ट वना रहा। भावप्रकाशनिघण्टु में भी दूध के फेन वा झाग के ये ही गुण लिखे हैं कि ये वल, वीर्य, कान्ति, तेज और शक्ति को वढ़ाने वाले हैं। जठराग्नि को प्रदीप्त करते हैं। जीर्ण ज्वर और अतिसार की उत्तम औषध है। इन्हीं फेनों को पीकर ब्रह्मचारी उपमन्यु हृष्ट-पुष्ट अर्थात् मोटा ताजा वना रहा। उस समय आश्रमों में वड़ी भारी संख्या में गौयें रहती थीं। वहुत सी गायों के वहुत से वछड़े दूध पीते थे तो उनके मुख से फेन व धार भी वहुत अधिक मात्रा में गिरते थे। इसलिये उनसे एक ब्रह्मचारी का पेट भरना और उनसे हृष्ट-पुष्ट होना सामान्य सी वात थी। ब्रह्मचारी अपने गुरुओं के अनन्य भक्त और आज्ञाकारी शिष्य थे। गो-रक्षा करना गौओं को चराना वहुत श्रद्धापूर्वक भूखे रह कर भी करते थे। इसी प्रकार की अनेक कथायें प्राचीन ग्रन्थों में आती हैं।

गो-दुग्ध से ब्रह्मतेज की प्राप्ति

छन्दोग्योपनिषद् में ब्रह्मचारी सत्यकाम की एक कथा आती है। सत्यकाम जावाल हारिद्रुमत् ऋषि के पास ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याध्ययन के लिये पहुंचा। ऋषि ने ब्रह्मचारी का उपनयन संस्कार कराया और अपनी गोशाला में से ४०० गायें जो कुछ क्षीण और दुर्बल थीं निकाल कर ब्रह्मचारी सत्यकाम को कहा इन गौओं को चराने के लिये पीछे जाओ। उन गौओं को वन की ओर ले जाते-ले जाते सत्यकाम बोला "ह सहस्रेण नावर्तं इति" अर्थात् सहस्र गौओं के बिना मैं लौट कर नहीं आऊंगा। वह अनेक वर्ष वन में ही रहा वे गौयें जब सहस्र हो गई तो उन गौओं को लेकर वह वापिस लौट कर आया। गुरु जी महाराज ने सत्यकाम से पूछा—सत्यकाम तुम्हारी आकृति और तेज को देखकर तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि तुम्हें ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हो गई है और तुम ब्रह्मज्ञानी बन गये हो। क्या तुमने इस काल में ब्रह्मज्ञान की शिक्षा किसी और गुरु से ले ली। सत्यकाम ने विनयपूर्वक उत्तर दिया—गौओं और वृषभों का सेवा करते हुये मुझे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हो गई। (अर्थात् गोमाता का अमृतरूपी दूध आहार के रूप में सेवन किया और ब्रह्मचर्य का पालन किया। क्योंकि आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः, सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः।

आहार की सात्विकता से अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है और अन्तःकरण चतुष्टय की शुद्धि से स्मृति-प्रज्ञा ऋतम्भरा प्रज्ञा सात्विक हो जाती है।

गोमाता के दूध घी के सात्विक आहार से अन्तःकरण शुद्ध और पवित्र हो गया इसी से मुझे ब्रह्म के दर्शन हो गये। अतः मेरे वास्तविक गुरु तो गौ आदि ही हैं, जिनके अमृत रूपी दूध से मुझे यह सब प्राप्त हुआ है।

गो दुग्ध से चिकित्सा

वैसे गो दुग्ध पर आयुर्वेद शास्त्रों के प्रमाण देकर पहिले विस्तार से लिखा जा चुका है फिर भी पाठकों को भली प्रकार से याद हो जाये, कुछ पंक्तियों में दूध के गुणों पर और चिकित्सा में इसका प्रयोग कहां और किस प्रकार होता है लिखना उचित समझता हूँ।

गाय के दूध के गुण

गाय का दूध मधुर स्वादिष्ट, रुचिकर, स्निग्ध, वलकारक, अति पथ्य, कान्ति-प्रद, बुद्धि, प्रज्ञा, मेधा, वीर्य तेज और ओज को बढ़ाने वाला, आयु को दृढ़ करने वाला, हृदय कफ नाशक, को हितकर, रसायन, गुरु, पुरुषत्व प्रदान करने वाला और कुछ नमकीन होता है। वात, पित्त, विष, वात रक्त, दाह रक्त, पित्त रक्त, अतिसार, उदावर्त, भ्रम, कास, मद श्वास, मनोव्यथा, जीर्ण ज्वर, हृदय-रोग, पिपासा, उदर, अपस्मार मूत्रकृच्छ्र गुल्म, अर्श, प्रवाहिका, पाण्डु शूल, वात रोग का नाश करता है।

दूध का प्रयोग रोगों को दूर करने के लिये किस प्रकार प्रयुक्त होता है, नीचे लिखता हूं।

(१) **आधा शीशी में**—गाय के दूध का खोया वनाकर खिलायें, किन्तु रोगी की पाचन शक्ति अच्छी होनी चाहिये। खोया कठिनाई से पचता है। १० वादाम गिरी जल में भिगोकर छिलके उतार कर पानी के साथ खूब रगड़ छान कर दूध में गर्म कर मिलाकर पिलायें। अथवा खीर में डालकर मिश्री मिलाकर पिलायें। प्रातः काल दूध को गर्म करें जव उवाल आ जाये तो गोघृत उसमें डाल कर मिला कर पिलायें। शिर दर्द, आधा शीशी दूर होगी। जव दूध निकालें तो पात्र में मिश्री पीस कर डाल लें उसी में धार (दूध) निकालें। फिर उसी समय शीघ्र छान कर धारोष्ण ही पिलायें। सर्व प्रकार का शिरदर्द दूर होगा।

सिर के रक्तज और पित्तज रोगों पर—रूई की मोटी तह कर के गाय के

दूध में भिगोकर शिर के ऊपर रखें, उसके ऊपर पट्टी बांध दें और जब भूख लगे तब बार-बार गोदुग्ध ही पिलायें। इसी प्रकार प्रातः काल से सायं काल तक रखें। सायं काल सिर धोकर गाय का मक्खन नूनी घी लगायें। इस प्रकार दो-तीन दिन करें लाभ होगा।

(३) रक्त पित्तादि में—आधा दूध और आधा पानी मिला कर उबालें जब पानी जल जाय तो बचे हुये दूध का उपयोग करें रक्त पित्त, शूल, प्रवाहिका आदि रोगों में इसी दूध का प्रयोग करने से लाभ होता है।

(४) कफ के रोग में—काली मिर्च वा सोंठ वा पीपल अर्थात् इनमें से किसी एक का चूर्ण उबाल कर खांड वा मिश्री डाल कर पीवें।

(५) पाण्डु रोग क्षय और संग्रहणी में—आधा दूध और आधा जल मिलाकर लोहे की कड़ाही में उबालें। जल जलने पर छान कर सात दिन तक पिलायें पथ्य से रखें। लाभ होगा।

(६) हिचकी के लिये— गाय का औटाया हुआ गर्म-गर्म दूध थोड़ा-सा गोघृत मिलाकर पीवें। हिक्कादि रस का मधु से सेवन करायें। मोर के चन्दे की भस्म मधु में चटायें। गो दुग्ध का सेवन कराते रहें।

(७) सुजाक पर—४ सेर गाय का ताजा ठण्डा दूध लेवें और उसमें ४ सेर ताजा शीतल जल मिला लें और एक पाव चने का बेसन (चने की दाल का आटा) मिलाकर पीयें उस दिन और कुछ न खायें रोगी इस बेसन मिले दूध को पीकर घूमता रहे। बार-बार पीये और छाया में ही घूमे। पेशाब की जुलाब लगेगी। यदि सुजाक के आरम्भ में ऊपर लिखी चिकित्सा की जाये तो सुजाक की जलन, पीप आना, अन्दर के जख़्म प्रायः एक दिन में बहुत ठीक हो जाते हैं। फिर कुछ कष्ट शेष रह जाये तो और चिकित्सा करवायें। यह प्रयोग मूत्रकृच्छ्र में भी लाभदायक है। बहुत बार का अनुभूत है।

(८) मूत्र के अवरोध (रुकावट) से हुये उदावर्त्त वायु के कष्ट को दूर करने के लिये दूध और जल एक साथ मिलाकर पिलाना चाहिये।

(९) सामान्य शिर दर्द पर गाय के दूध में सोंठ मिलाकर वा घिस कर शिर पर लेप करें और ऊपर से रूई बांध देवें। इस प्रकार सात आठ घण्टे में भयङ्कर

सिर पीड़ा दूर हो जाती है।

(१०) थकावट—थके हुये मनुष्य को गर्म दूध पिलाने पर श्रम थकावट दूर होकर स्फूर्ति उत्साह आ जाता है। थकावट दूर करने के लिये अचूक औषध है।

(११) हड्डी टूटने पर—प्रातः काल वाखड़ी गौ का दूध खांड डाल कर गर्म करें और उसमें गोघृत और लाख का चूर्ण डालकर ठंडा होने पर पिलावें। यह टूटी हुई हड्डी को जोड़ने में सहायक औषध है।

(१२) रक्त पित्त—किसी अंग से खून निकलता हो तो दूध में पांच गुणा जल मिलाकर उवालें। जल के जल जाने पर दूध पिलायें लाभ होगा।

(१३) छाती तथा हृदय रोग पर—प्रवाल पंचामृत २ रत्ती, कुरंग शृंग भस्म १/२ रत्ती से १ रत्ती तक शहद में मिलाकर चटायें, ऊपर से धारोष्ण वा गर्म करके ठण्डा किया हुआ गो दुग्ध पिलायें। जादू के समान प्रभाव होगा।

(१४) गौ के दूध में शुद्ध भिलावे का तैल १० वूंद तक डालकर पिलाना चाहिये। हृदय रोग में लाभ होगा।

(१५) पुष्टि और वल के लिये दूध आध सेर, घी १ तोला, मधु २ तोला मिला कर पिलावें। दवा और भोजन दोनों का काम करेगा।

(१६) मधुमेह और मूत्रकृच्छ्र में दूध में घी मिला कर उसे थोड़ा गर्म करके पिलावें अथवा गर्म किये हुये दूध में घी और कुछ मधु (घी से द्विगुण) मिलाकर पिलायें, लाभ होगा।

(१७) वल वीर्य और शक्ति की वृद्धि के लिये, गौ के दूध को गर्म करके खांड डालें और घी मिलाकर पिलायें। इसके जैसा पथ्य, तेज, शक्ति और वल वीर्य को वढ़ाने वाला कोई प्रयोग वा और औषध नहीं है।

(१८) आँख दुःखती हों, उनमें लाली वा जलन हो तो गाय के दूध में रूई का फोया भिगोकर उसके ऊपर फिटकड़ी का चूर्ण डाल कर आंख के ऊपर पट्टी वांध देनी चाहिये।

(१९) दूध को फाड़ कर जो दूध का गल्ला वने, उसे आंख पर वांधें। यह भी चक्षु पीड़ा दूर करने के लिये अच्छी औषध है।

(२०) गौ के दूध की कुछ गर्म मलाई आंख पर बांधने से सूजन पीड़ा और लाली भी दूर होती है ।

(२१) पित्त विकार के ऊपर तीन छटांक गोदुग्ध डेढ़ तोला सोंठ डाल कर उबालें । गाढ़ा बन जाने पर उसमें खांड वा मिश्री डालकर खोया बनालें और इसकी २० वा पच्चीस गोली बनालें । रात्री को सोने से पूर्व १गोली खिलावें । खाने के पश्चात् जल न पीवें । इस प्रकार कुछ दिन खाने से लाभ होगा ।

(२२) चेचक और मोती झारा के ज्वर में बालक को धारोष्ण दूध में थोड़ा सा घी और मिश्री मिलाकर देने से लाभ होता है ।

(२३) जीर्ण ज्वर—दूध में गाय का घी, सोंठ, छुहारा और काली मुनक्का डालकर आग पर उबाल कर, पिलाना चाहिये, यह लाभदायक है ।

विषों पर दूध का प्रयोग

(१) धतूरा और कनेर के विष पर पाव भर दूध में एक तोला मिश्री मिला कर पिलाना चाहिये ।

(२) गन्धक के विष पर—दूध में घी डालकर पिलाना चाहिये ।

(३) मैनसिल के विष पर—दूध में मधु डालकर तीन दिन पिलाना चाहिये ।

(४) कांँच शीशा का चूर्ण अन्न के साथ पेट में या किसी प्रकार की भूल से चला गया हो तो ऊपर से दूध पिलाना चाहिये ।

(५) कोदों के विष पर—ठण्डा दूध पिलाना चाहिये ।

(६) संखिया, वत्सनाभ, नीला थोथा, मुर्दा शंख आदि के विष पर जब तक उल्टी न हो तब तक सादा वा मिश्री मिला दूध पिलाते रहना चाहिये । दूध में घी भी डाला जा सकता है। इसी से मारक विषों से रोगी के प्राण बच सकते हैं । जिस प्रकार गाय का दूध रोगों में उपयोगी है, उसी प्रकार दूध की मलाई के गुण भी शीतल, स्निग्ध, वृष्य, बलकारक, शुक्रप्रद, तृप्ति कर, रुचिकर, कफ-वर्धक और धातु वर्धक है तथा पित्त, वायु, रक्त पित्त, दाह, और रक्त रोगों का नाश करते हैं ।

प्राचीन काल में घी दूध का भाव

प्राचीन वैदिक काल में गौ के घा और दूध का विक्रय नहीं होता था। सर्वत्र गोचर भूमि होने के कारण गौओं के रखने पालने और उनके खाने पर न कोई खर्चा ही होता था और न उन पर कोई विशेष परिश्रम करना पड़ता था। प्रातः काल गौ जंगल में चरने के लिये चली जाती थीं। और सायंकाल आकर अपने स्वामी के घर पर अमृत रूपी दूध देती थीं। ५० वर्ष पूर्व तक भारत के ग्रामों में ऐसी ही अवस्था थी। दूध मांगने से तो मिल जाता था। किन्तु किसी मूल्य पर मोल नहीं मिल सकता था। आज हम रामराज्य की प्रशंसा करते हैं। क्यों कि रामराज्य में कोई भी दुःखी नहीं था। सबको जीवन के आवश्यक वस्तु पर्याप्त परिमाण में इतने सस्ते और सुगमता से मिल जाते थे कि उस समय भिक्षा वृत्ति का कोई पेशा नहीं बन सका। रामायणकाल के बाद महाभारत काल में भारतीय जीवन का मानदण्ड कुछ भिन्न प्रकार का हुआ। यद्यपि हमारे पास उस समय के भाव उपस्थित नहीं हैं तो भी तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को देखते हुये यह मानने के दृढ़ कारण हैं कि उस समय "रामराज्य" के मुकाबले चीजें कुछ मंहगी हो गयी थीं। किन्तु मौर्य काल की अपेक्षा वे पर्याप्त सस्ती थीं।

प्राचान भावों का सबसे अधिक वर्णन हमको ईसा से पूर्व पन्द्रहवीं शताब्दी मौर्यकाल के कौटिलीय अर्थशास्त्र में मिलता है। उस समय ये भाव थे।

चावल	१ आना मन।
तैल	आठ आने मन।
घी	बारह आने मन।
दाल	१ आना मन।
नमक	दो पैसे मन।
शक्कर	दस आने मन।
कपड़ा	१ आने के पाँच थान।

घी एक रुपयें में एक मन सवा तेरह सेर आता था। हमें तो उस समय भावों को पढ़कर आश्चर्य होता था। यह बात ध्यान देने की है कि कौटिल्य के समय में जीवन का व्यय वहुत सस्ता था। उस समय निर्धन व्यक्ति की आय १।।) प्रति मास थी। महाराजा पृथ्वीराज के समय तक मूल्यों में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ। किन्तु मुस्लिम सत्ता के भारत में आने के साथ-साथ यहाँ के सामाजिक जीवन में वड़ा भारी परिवर्तन हुआ। इस समय गौयें अधिक मारी जाने लगी। इससे घी, दूध तथा खेती से पैदा होने वाले वस्तु तेज हो गये। यहां तक की चौदहवीं शताब्दी में मुहम्मद तुगलक के समय में इब्नवतूता ने अपने भारत-यात्रा विषयक पुस्तक में वंगाल में निम्नलिखित भाव होना लिखा है।

चावल	१आना ३पैसे मन।
तिल का तैल	ग्यारह आने दो पैसे मन।
घी	१ रु० ३ पैसे मन।
शक्कर	१ रु० ३ पैसे मन।
महीन सूती कपड़ा	दो रु० का १५ गज।

इस प्रकार कौटिल्यकाल की अपेक्षा इस समय वस्तु के दाम कई गुने तक वढ़ गये थे। केवल चावल सस्ता था। घी इस समय १ रु० का २७ सेर साड़े तेरह छटांक था अर्थात् मौर्य काल की अपेक्षा उस समय घी का भाव आधा तथा आज कल के भाव की अपेक्षा उस समय घी का भाव २२५ गुना अधिक सस्ता था

इसके पश्चात् सोलहवीं शताब्दी में आईने-अकवरी में खाद्य पदार्थों के निम्न-लिखित भाव अकवर वादशाह के समय में मिलते हैं।

वढ़िया चावल	ग्यारह आने मन।
साधारण चावल	दस आने मन।
दालें	तेरह आने दो पैसे मन।
घी	५ रु० मन।
नमक	आठ आने मन।
खांड	५ रु० ग्यारह आने मन।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अकबर के समय में खाने पीने और दैनिक आवश्यकता की अन्यान्य वस्तुओं के भाव पर्याप्त मात्रा में चढ़ गये थे। किन्तु उसके अनुपात में जनता की आय और तदनुसार उसके क्रय-विक्रय भी वढ़ गये थे। घी का भाव चन्द्रगुप्त की अपेक्षा साढ़े पाँच गुना वढ़ गया। तव भी वह आज कल के भाव की अपेक्षा ४० गुना अधिक सस्ता था।

औरंगजेव के शासनकाल में शाइस्ताखाँ वंगाल का सूबेदार नियुक्त होकर आया तो उसने सवसे अधिक ध्यान खाद्य वस्तुओं के चढ़े हुये भावों को कम करने की ओर ही दिया। उसके प्रयत्न के फलस्वरूप वंगाल में चावल का भाव दो आना प्रति मन तक हो गया। अपनी इस सफलता को चिरस्थायी वनाने के लिये १६८९ में जव शाइस्ता खाँ वंगाल से जाने लगा तो उसने ढाका के पश्चिम में एक तोरण (मीनार) वनाने की आज्ञा दी।

१७३८ ई० में चावल का भाव सवा मन से लेकर डेढ़ मन प्रति रुपये तक रहा। सन् १७२९ में मुर्शिदावाद में वस्तुओं के भाव निम्नलिखित थे —

वाँसफूल चावल	एक रुपये का	एक मन	१० सेर
करकशाली चावल	एक रुपये का	७ मन	२० सेर
तैल (वढ़िया)	"	"	२१ सेर
तैल (साधारण)	"	"	२४ सेर
घी (वढ़िया)	"	"	१०॥ सेर

अर्थात् शाइस्ताखाँ के प्रयत्न से घी का भाव अकवर के २०० वर्ष वाद भी आधा सेर और सस्ता हो गया।

किन्तु भारतीय जनता ने इन भावों की विशेष चिन्ता नहीं की और वह अपने सन्तान को आनन्द पूर्वक दूध पिलाती रही तथा घी खिलाती रही। काल क्रम से मुसलमानों का शासन भी समाप्त हुआ और भारत का भाग्य ब्रिटिश ईस्ट-इंडिया कम्पनी के हाथों में आया। अंग्रेजों के आने से भारत पर दुहरी मुसीवत आ गई। ये लोग एक ओर तो गौ का मांस अधिक खाते थे, दूसरी ओर उसको सुखा कर विदेश भी भेजते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी

राज्य के आरम्भ में ही सन् १८१० में वस्तुओं के भाव चढ़कर निम्नलिखित हो गये—

मजदूर छोटा	आठ आने दैनिक ।
मजदूर बड़ा	वारह आने दैनिक ।
वढ़ई	६ रु० मासिक ।
जुलाहे	३ रु० मासिक ।
वढ़िया चावल	१ रु० १ आना मन
घटिया चावल	१ रु० मन ।
दाल	१ रु० ८ आने मन ।
आटा	२ रु० मन ।
सरसों का तैल	आठ आने सेर ।
घी	१ रु० वारह आने सेर ।
मोटी धोती	१ रु० आने प्रति धोती ।

अर्थात् इस समय घी का भाव एक रुपये का दो सेर साढ़े चार छटाँक हो हो गया । वास्तव में यह भाव इतना तेज था कि भारत वासी इसके वल पर अपने स्वास्थ्य की रक्षा नहीं कर सकते थे । अतः अंग्रेजी राज्य के आरम्भ से ही भारतवासियों का वल घटने लगा । जिससे उनकी जीवनी शक्ति भी कम हो गई ।

यद्यपि अंग्रेजी राज्य के आरम्भ में घी एक रुपये का सवा दो सेर के लगभग हो गया, किन्तु यह भाव भारतीय नगरों का था । भारतीय गावों में और और विशेष कर तराई भाव में सन् १९१० तक भी जंगलात के नियम कठोर नहीं हुये थे । अतः वहां घोसी गूजर आदि अनेक गोपालक जातियाँ वहुत वड़े परिमाण में गौयें तथा भैंसे रखकर घी का उत्पादन करती थीं । यह हमने अपनी वाल्यावस्था में स्वयं देखा है कि उनमें से एक-एक गोटिये (घोसी) के पास पाँच-पाँच सौ तथा एक सहस्र तक पशु होते थे । ये गोटिये केवल प्रातः काल ही दो थन निकालते थे । सायंकाल का पूरा दूध तथा प्रातःकाल के दो थन वे गौ अथवा भैंस के बच्चे को पिला दिया करते थे । इसी कारण अनेक वछड़े भी अत्यन्त

हृष्ट-पुष्ट होते थे और हमारे पशुओं की नस्ल भी अच्छी थी। उस समय ये लोग हम लोगों से पर्याप्त मात्रा में माल उधार लिया करते थे। अस्तु उधार का प्रभाव घी के भाव पर पड़ता था। उस समय घी का साहुकारे का भाव ढाई सेर तथा वाजार का भाव एक रुपये का सवा सेर था।

किन्तु आगे चलकर सन् १६१० के लगभग भारत भर में जंगलों की रक्षा के लिये वे उपाय किये गये कि कहीं भी गोचर भूमि का मिलन सुगम न रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि गोटियों जैसे घी-दूध के वड़े-वड़े व्यापारियों को गोचर भूमि के अभाव के कारण अपने-अपने पशु कौड़ियों के मोल वेचने पड़े और घी वरावर तेज होता गया। यहाँ तक कि उसका भाव देहातों में भी शहरों जैसा हो गया।

यहाँ यह बात और भी बतला देनी चाहिये कि प्राचीन भारत में घी तो विकता था, किन्तु दूध नहीं विकता था। दूध मुसल्मानी काल तक भी कम विकता था। किन्तु तराई भावर के गाँवों में तो १६१० तक वे लोग दूध वेचना अपना अपमान समझते थे। माँगने वालों को वे एक-एक दो-दो कनस्तर दूध मुफ्त दे देते थे। किन्तु मोल पर वे केवल घी ही देते थे। पर जब से गोचर भूमि का अभाव हुआ तव से दूध भी विकने लगा। और आजकल तो दूध की दशा नगरों तथा ग्रामों दोनों में घी के समान हो चली है।

यद्यपि उपर्युक्त भाव पर्याप्त रूप में तेज थे, किन्तु आज की परिस्थिति में वे भी हमारे मन में आशा का सञ्चार करते हैं। किन्तु उनके साथ जब हम आज-कल के भावों का मिलान करते हैं तो हृदय में वड़ा खेद होता है। आजकल दिल्ली के भाव ये हैं—

घी	३० रु०	१ किलो	गुड़	२.६० रु०	१ किलो
दूध	२ ,,	१ ,,	सोना	१२१० रु०	१० ग्राम
तैल	११.५०	१ ,,	चांदी	२२.रु०	१० ग्राम
चीनी	३ रु०	१ ,,	गेहूँ	१.६० रु०	१ किलो
दाल (उड़द)	५.१५	१ ,,	चावल वासमती	६रु०	१ किलो
दाल (चना)	२.८०	१ ,,			

भारत के महापुरुषों का गोप्रेम

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का जन्म इक्ष्वाकु कुल में हुआ था। महाराज मनु के पुत्र इक्ष्वाकु भारत के प्रथम चक्रवर्ती राजा हुये हैं। इसी काल में प्रसिद्ध राजा दिलीप, रघु और भागीरथ हुये हैं। महाराजा दिलीप की गोभक्ति और गोसेवा जगत् प्रसिद्ध है। महाराज दिलीप ने अहर्निश, नन्दिनी नाम की गौ की अनेक वर्षों तक श्रद्धापूर्वक सेवा की। उसी के फलस्वरूप उन्हें रघु के समान तेजस्वी पुत्र प्राप्त हुआ जिसके शौर्यादि गुणों के कारण प्रसिद्ध इक्ष्वाकु कुल का नाम वदल कर रघुकुल हो गया। इसी कारण आज तक सर्वत्र इस कुल की ख्याति इतनी प्रसिद्ध है कि आर्य जाति का वच्चा-वच्चा आज भी गर्व से इस कुल का गौरवगान मस्त होकर इस प्रकार करता है।—

रघकुल रीति सदा चली आई। प्राण जाय पर बचन न जाई ॥

अर्थात् रघुकुल की विशेष वात वा विशेष गुण यही है कि रघुकुल का व्यक्ति प्राणों को न्यौछावर करके भी अपने वचन वा व्रत (प्रतिज्ञा) की रक्षा करता है। इसीलिये सामान्य लोगों में भी यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है।

"बात गई शिर सौ वार गया"

अर्थात् जिसने अपनी वात वचन को पूरा नहीं किया उसका शिर सौ वार कट गया अर्थात् वह एक वार नहीं वह सौ वार मर गया। वचन हारने वाला व्यक्ति को सौ वार मरा हुआ समझना चाहिये।

जिसकी बात का नहीं पास। उसके बाप का नहीं पास ।"

जो अपनी वात वा वचन प्रतिज्ञा को पूरा नहीं करता वह अपने सच्चे पिता की सन्तान नहीं होता अर्थात् वह हराम की औलाद होता है। आर्य संस्कृति में वचन का मूल्य चक्रवर्ती राज्य से भी वढ़कर है। इसलिये रघुकुल का व्यक्ति वचनहारी कभी नहीं वना वे सदैव वचन वद्ध रहे। इसका मुख्य कारण धर्म शिक्षा और गोमाता के पालन-पोषण के कारण सात्त्विक आहार ही था।

अध्यात्मरामायण में आता है—

अङ्गणे रिङ्गमाणं तं तरुणकानुसर्वतः
दृष्ट्वा दशरथो राजा कौसल्या मुमुदे तदा।
शिक्यस्थं पातयामास गव्यं च नवनीतकम्।

(वाल० ३।४६-४७-५४)

आशय यह है कि राम आंगन में गोवत्सों के पीछे-पीछे सब ओर घूमते थे, यह देखकर राजा दशरथ और कौशल्या माता प्रसन्न होते थे। एक वार श्रीराम ने छींके पर रखे हुये दूध, दही, मक्खन को नीचे उतारकर अपने भाइयों में बांटा था। तुलसीदास जी ने उन्हें "गो द्विज हितकारी" गौ और द्विज का हितकारी लिखा है। महर्षि नारद ने राम के गोदान के विषय में बताया "गवाँ कोट्ययुतं दत्त्वा—(वा० रा० अर्थात् राम ने दस सहस्र करोड़ गौवों का दान किया। यह अतिशयोक्ति भी हो सकती है। जब दस करोड़ गौवों का दान राम ने किया, तो उनके पास कितनी अधिक गायें थी। इससे अनुमान हो सकता है कि उस युग में गौ आदि दुधारू पशुओं के अधिक होने से घी दूध की नदियां भारत में बहती थीं। इसीलिये रामराज को आज तक आदर्श राज्य माना जाता है।

इक्ष्वाकु वंश के राजा सौदास को महर्षि वसिष्ठ ने इस विषय में बड़ा महत्त्व पूर्ण उपदेश दिया था।

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृङ्गाः पयोमुचः ॥
सुरभ्याःसौरभेय्यश्च सरितः सागरे यथा ॥
गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा।
गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम् ॥

नदियां जिस प्रकार समुद्र में जा मिलती हैं। उसी प्रकार सुवर्ण (युक्त) शृंगवाली और दूध देने वाली गौवें मुझे प्राप्त हों। ऐसा हो कि नित्य मैं गौवों को देखूं और गौवें मेरी ओर देखें, कारण गौवें हमारी हैं और हम गौवों के हैं। यतो गावस्तो वयम्'। गौवें हैं इस लिये हम हैं। यह बात सब को सदैव याद रखनी चाहिये। यदि गाय न हो तो हम भी नहीं रह सकते। हमारा जीवन सर्व प्रकार से गौवों पर ही आधारित है। यह बात भारत की वर्तमान आर्थिक,

राजनीतिक, आयु-आरोग बल तेज-सम्बन्धी सर्वविध उन्नति से विशेष सम्बन्ध रखती है।' गौवे हमारी और हम गौवों के हैं" हमारी यही भावना प्राचीनकाल में हमारे देश भारत और पूर्वजों की उन्नति का मुख्य कारण थी। इसी भावना के नष्ट होने के कारण हमारी अत्यन्त दुर्दशा हो रही है। हमें गौवों से प्रेम नहीं रहा उनका रखना, श्रद्धा से सेवा सुश्रूषा करना, उनका पालन पोषण सर्वथा छोड़ बैठे फिर उनका अमृत रूपी घी दूध हमें कैसे और कहां से प्राप्त होगा। हमने घरों से गौवों को विदा कर दिया। परिणाम स्वरूप धन सम्पत्ति और सुख सब हमारे घर से विदा हो गये। जब हमारे घर गौवों से भरपूर थे तब यह देश और हमारे घर स्वर्ग के समान थे अब वही देश गौवों के विना नरकतुल्य बन गया। जो गोदुग्ध, गोघृत, गोदधि, गोतक्र, गोमूत्र और गोमयादि पञ्च गव्य हैं, वे अत्यन्त लाभप्रद और रोगनाशक हैं वे अमृतरूपी पदार्थ विना गौमाता के कहां से प्राप्त होंगे।

इसी लिये पूर्वकाल में हमारे ऋषि महर्षि राजे और महाराजे गोधन को सर्वश्रेष्ठ धन मानते थे। तात्पर्य यह है कि सर्वप्रकार की उन्नति और सुख का मूल वा मुख्य साधन गोरक्षा और गोपालन ही है। सब देश हितैषी व्यतियों को गोपालन के पवित्र कार्य में तन मन और धन से जुट जाना चाहिये।

गोभिर्विप्रैर्वेदैश्चै सतीभिः सत्यवादिभिः।
अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही॥

गौ, ब्राह्मण, वेद, पतिव्रता स्त्री, निर्लोभी पुरुष तथा दान शील धनी इन सातों ने पृथ्वी को धारण कर रखा है। पृथ्वी के धारण करने वाले इन सातों में भी प्रथम स्थान गौ का है। और वह ठीक ही है। हमने गोरक्षा और गोपालन के महिमा को समझा नहीं। हमारे पूर्वज अच्छी प्रकार से समझते थे इस लिये वे पूर्ण रूप से सुखी थे। हम उल्टे चलते हैं इस लिये दुःख भोग रहे हैं। क्योंकि इस सुख का मुख्य कारण गोमाता थी। कहा भी है—

गावः प्रतिष्ठाभूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्।
गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी॥

गौ मनुष्य के जीवन का सहारा है। कल्याण का परम निधान है, पहिले

लोगों का ऐश्वर्य गौ पर आधारित था। आगे की उन्नति भी गौ पर आधारित है। गौ ही सब समय पुष्टि का साधन है। वेद में कहा है "पुष्ट्यै गोपालम्" पुष्टि के लिये गोपाल बनना चाहिये। हम गौ पालेंगे तो हम तथा हमारा देश पुष्ट हो जायेगा। पुष्टि का मुख्य कारण गोरक्षा और गोपालन ही है। पवित्र गौ माताओं के वाहुल्य के कारण ही भारत भूमि पुण्य भूमि कहलाती थी। क्योंकि गौ ही इस लोक और परलोक दोनों की उन्नति करने वाली है।

अतः हमें येन केन प्रकारेण गौमाता की पालना और रक्षा अवश्य करनी चाहिये, जिससे आरोग्यवर्द्धक गोदुग्ध और गोघृत सबको यथेष्ट मिलता रहे।

गौ की रक्षक गोचर भूमि

आदि सृष्टि से लेकर पृथ्वीराज आर्य सम्राट् तक प्रत्येक भारतीय के घर में पर्याप्त संख्या में गायें रहतीं थी। प्राचीनकाल की यह भावना "गाय मेरे आगे हों और गाय मेरे पीछे हो और मैं गोवों के मध्य में सदैव वास करू' और गौवें सदैव मेरे हृदय में वसती रहें" प्रत्येक भारतीय में ओत-प्रोत थी। जिसके पास ९ नौ लाख गौवें होती थीं वह नन्द कहलाता था। लाख गौवों का स्वामी महानन्द कहलाता था, इसी कारण उस समय घी दूध की नदियां भारत में वहती थीं। इस पर विस्तार से अन्यत्र प्रकाश डाला गया है।

वे पुराना वातें तो आज हमारे लिये स्वप्नवत् हो गईं। किन्तु हमारे देखते देखते इतना प्रिवर्त्तन आ गया कि कोई भी घर ऐसा दिखायी नहीं देता था कि जिसमें न्यून से न्यून एक गाय न हो। यह लोकोक्ति प्रसिद्ध थी "जो सम्पत् हो थोड़ी तो पाले गाय और घोड़ी।"

इस कथनानुसार कुछ समय पूर्व तक निर्धन व्यक्ति भी गौ को अपनी गरीबी दूर करने के लिये अपनी सहायिका समझते थे और अपने पास दो चार गायें अवश्य रखते थे। इसी भावना को लेकर मोरोपन्त कवि ने भी कहा है कि 'घर में बहुत सा धन हो वा न हो, घर-घर में एक दुधारू गाय तो अवश्य होनी चाहिये गौवों के दुहने और पालन-पोषण का कार्य घर की बहू-बेटियां करतीं थीं। दुहने का कार्य कन्या पुत्रियां करती थीं। इसीलिये उनका नाम दुहिता (दुहने वाली) नाम रूढ़ि हो गया। इससे घर की स्त्री पुरुषों को गो सेवा वा शुश्रूषा का सर्व प्रकार का क्रियात्मक ज्ञान तथा अनुभव हो जाता था। भारत देश की सम्पन्नता तथा धनी होने का मुख्य कारण अच्छी गौ और बैलों का बाहुल्य ही था और अच्छी गौ और बैलों की अधिकता का मुख्य कारण पर्याप्त मात्रा में चरने के लिये गोचर भूमि का होना था। और वे गोचर भूमियां सबके लिये खुली थी सभी उनके स्वामी होते थे। महाभारत में आता है।—

अटवी पर्वताश्चैव नद्यस्तीर्थानि यानि च।
सर्वाण्यस्वामिकान्याहुर्नास्ति तत्र विचारणा ॥

जंगल, पर्वत, नदियां, तीर्थ आदि सभी अस्वाभाविक होते थे अर्थात् इनका कोई स्वामी वा मालिक नहीं होता था। सारा समाज ही उसका स्वामी होता था, निर्धन धनी सभी लोग आवश्यकतानुसार उसका लाभ उठाया करते थे। यह रिवाज सन् १९४७ तक स्वराज्य मिलने तक प्रचलित (चालू) था। इसलिये गाय आदि पशुओं के भूखा रहने वा भूख के कारण निर्बल होने वा मरने का अवसर ही नहीं आता था। कभी-कभी अनावृष्टि के कारण जब दुर्भिक्ष पड़ता था तो पशुवों पर भूखा मरने की आपत्ति आती थी। खाने पीने और घूमने फिरने की गोचर भूमि पर्याप्त होने से पशुवों को पर्याप्त सुविधा थी। इसीलिये गौवें स्वस्थ सुन्दर और वेदाज्ञानुसार "दोग्ध्री धेनुः" अच्छी दूध देने वाली गौवें आदि पर्याप्त संख्या में होती थी। निर्धनों की झोपड़ियों में भी घी दूध की विपुलता वा अधिकता थी। गौ के घी दूध का सात्त्विक और पौष्टिक आहार मिलने के कारण जनता बल, आरोग्य और पराक्रम से संयुक्त होती थी। अब गोचर भूमि वन और जंगल नहीं रहे। क्योंकि व्यापार के बहाने भारत में विदेशी अंग्रेजादि आये और वे चालाकी से सारे भारत के स्वामी बन गये और यहां का धन सम्पत्ति सब यहां से लूट कर अपने देश में ले गये।

फिर भी उनको धन की भूख शान्त नहीं हुई। सन् १८८३ में प्रकाशित पुस्तक ग्राम रचना उसकी व्यवस्था और वर्तमान स्थिति" का लेखक लिखता है—"सरकार ने वनों जंगलों में ताले जड़ दिये, इससे गौ आदि पशुओं के लिये चारा मिलना कठिन हो गया और पशु पालन करने में लोग असमर्थ हो गये। अतः गो दूध अप्राप्य हो गया। शिशुवों को माता के दूध के अतिरिक्त कोई सहारा न रहा, पशुओं की संख्या भी गोचर भूमि न रहने से घटने लगी। वन जंगलों पर प्रतिबन्ध लगने से गौ आदि की संख्या इसी कारण चारे के अभाव में भयङ्कर रूप से घटने लगी। क्योंकि वन विभाग ने वन चराई सम्बन्धी नाना प्रकार के कर जनता से लेने आरम्भ कर दिये जिससे जनता त्रस्त और भयभीत हो गई। घर के गाय बैल समाप्त हो गये और दूध दही का अभाव हो गया। इससे खेती-बाड़ी की उपेक्षा होने लगी और किसानों को पेट पालना कठिन हो गया।

केसरी ३०।१०।१८९०।

मुसलमान शासन काल में भी जिन चरागाहों से मुफ्त चारा मिलता था

वे भरपूर लगान पर उठा दिये गये वा वन विभाग (फारेस्ट) में सम्मिलित कर दिये गये। (केसरी ३१-५-१८९२) खानदेश जिले में कुछ दिन पूर्व गरीब किसानों ने वन विभाग के अर्जुन वृक्षों की पत्ती पशुओं को खिलाने के लिये काट ली, इसलिये उन पर अभियोग चलाकर उन्हें अर्थदण्ड (जुर्माना) ही नहीं कारागृह दण्ड (जेल दण्ड) भी दिया गया।

(केसरी २६।६।१९६०)

वन्दी जंगल में घुसे हुये चौपायों (पशुवों) में से १३४००० पशु इस वर्ष काञ्जीसाऊस (फाटक) में भेजे गये—केसरी १८।५।१९०९ इस प्रकार जो पशु इतनी भारी संख्या में सरकारी फाटक में गये वे भारी जुर्माना देकर पशु मालिकों को छुड़वाने पड़े। किसानों को बहुत भारी आर्थिक हानि हुई।

पाटन तालुका के कुम्भार गांव के आस-पास कोई फारेस्ट (सरकारी वन) नहीं था वहां गांव की गोचर भूमि (वनी) थी। वह सरकार ने बलपूर्वक फारेस्ट (वन विभाग) में सम्मिलित कर ली। वहां कुछ भूमि ऐसी रखी गई जहां कुछ (शुल्क) फीस देने पर गांव वाले अपने गौ आदि पशु चरा सकते थे। सन् १९०८-९ में गांव वालों ने ८० रु० फीस सरकार को दी। परन्तु थोड़े दिन में सरकारी आदेश हुआ कि गांव वाले अपराध बहुत करने हैं इसलिये पशुवों के चरने की सुरक्षित भूमि तीन वर्ष के लिये पशुवों के चराने के लिये बन्द कर दी गई है। इस विचित्र आदेश को सुनकर गांव वालों ने प्रार्थना पत्र दिया कि कम से कम यह भूमि इस वर्ष तो पशुवों के लिये खुली रखी जाये। यदि यह सम्भव न हो तो हमारे ८० रु० लौटा दिये जायें।

इन मांगों में सरकार ने एक भी स्वीकार नहीं की। जब कि उनकी दोनों मांगें न्यायोचित थी। फारेस्ट की सीमा झोंपड़ों के द्वारों से जा भिड़ी है। वाड़े से बाहर आते ही वनाधिकारी पशुवों को पकड़ कर कॉंजी हाउस (फाटक) में बन्द कर देते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि जिस सरकारी जंगल की वार्षिक आय १५० रु० थी वहां केवल दस महीने में ४०० वा ५०० रु० सरकारी खजाने में जमा हो गया—केसरी १।६।१९०९ केसरी समाचार पत्र के ये उद्धरण स्पष्ट बताते हैं कि अंग्रेज सरकार की व्यापारी (लूट खसोट) की मनोवृत्ति प्रारम्भ से ही राजनीति क्षेत्र में अपना अच्छा प्रभाव दिखा रही थी। वास्तव

में गाय बैल राष्ट्रीय सम्पत्ति होती हैं। उसकी सर्व प्रकार से रक्षा करना प्रजा का हित चाहने वाली प्रत्येक सरकार का मुख्य कर्त्तव्य होता है। किन्तु दुर्भाग्य से गाय बैलों के हाड़ मांस और चर्म का व्यापार जारी रखने की बुद्धि हमारी अंग्रेज सरकार के दिमाग में घर कर गई थी। अंग्रेजी सरकार ने हड्डी मांस चमड़े के व्यापार में सहायक कसाइयों और दलालों को उत्साहित कर बढ़ावा दिया, इसीलिये बूचड़ों कसाइयों और बूचड़खानों की संख्या बढ़ गई।

इसी विषय में महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर पुस्तक गोकरुणानिधि में लिखा है—"धन्य है! आर्यवर्त्त देशवासी आर्य लोगों को, कि जिन्होंने ईश्वर के सृष्टि क्रमानुसार परोपकार में ही अपना तन मन धन लगाया और लगाते हैं। इसलिये आर्यवर्त्तीय राजा महाराजा प्रधान और धनाढ्य लोग आधी पृथ्वी में जंगल रखते थे कि जिससे पशु और पक्षियों की रक्षा हो। औषधियों के साथ दूध आदि पवित्र पदार्थ उत्पन्न हों जिनके खाने पीने से आरोग्य बुद्धि बल पराक्रम आदि सद्गुण बढ़ें और वृक्षों के अधिक होने से वर्षा जल और वायु में आर्द्रता और शुद्धि अधिक होती है। पशु और पक्षी आदि के अधिक होने से खाद भी अधिक होता है परन्तु इस समय के मनुष्यों का इससे विपरात व्यवहार है कि जंगलों को कटवा डालना, पशुवों को मार और मरवा कर खाना और विष्ठा आदि का खाद खेतों में डाल वा डलवाकर रोगों की वृद्धि कर संसार का अहित करना, स्वप्रयोजन साधन और परप्रयोजन पर ध्यान न देना इत्यादि काम उलटे हैं।

वे आगे लिखते हैं जो कोई मनुष्य भोजन करने को उपस्थित हो उसके आगे से भोजन के पदार्थ उठा लिये जायें और उसको वहां से दूर किया जाय तो क्या वह सुख मानेगा। ऐसे ही आज कल के समय में कोई गाय आदि पशु सरकारी जंगल में जाकर घास और पत्ता जो कि उन्हीं के भोजनार्थ हैं विना महसूल दिये खावें वा खाने को आवें, तो बेचारे उन पशुवों और उनके स्वामियों की दुर्दशा होती है। जंगल में आग लग जावे तो कुछ चिन्ता नहीं किन्तु वे पशु न खाने पावें। हम कहते हैं किसी अति क्षुधातुर राजा वा राज पुरुषों के सामने आये चावलादि वा डबल रोटी आदि छीन कर न खानें देवें और उनकी दुर्दशा की जाये तो क्या इनको दुःख विदित न होगा? क्या वैसा उन पशु पक्षियों और उनके

स्वामियों को न होता होगा। ध्यान देकर सुनिये जैसा दुःख सुख अपने को होता है वैसा ही औरों को भी समझा कीजिये। और यह भी ध्यान में रखिये कि वे पशु आदि और उनके स्वामी तथा खेती आदि कर्म करने वाले, प्रजा के पशु आदि और मनुष्य के पुरुषार्थ से ही राजा का ऐश्वर्य अधिक बढ़ता और न्यून से नष्ट हो जाता है। इसीलिये राजा प्रजा से कर लेता है कि उनकी रक्षा यथावत् करे न कि राजा और प्रजा के जो सुख के कारण गायादि पशु हैं उनका नाश किया जाये। इसलिये आज तक जो हुआ सो हुआ आगे आंखे खोल कर सबके हानिकारक कर्मों को न कीजिये। और न करने दीजिये।

यह चेतावनी महर्षि दयानन्द जी ने अंग्रेजी सरकार को अपने पुस्तक गोकरुणानिधि में दी थी यह आज की अपनी भारत सरकार के लिये भी वैसी ही लागू होती है जैसी अंग्रेजी राज्य के अधिकारियों के लिये थी वे लिखते हैं क्योंकि २०० वर्ष के पीछे इस देश में गौआदि पशुवों को मारने वाले मांसाहारी विदेशी मनुष्य बहुत आ बसे हैं वे इन सर्वोपकारी पशुवों के हाड़ मांस तक भी नहीं छोड़ते (नष्टे मूले पत्रं न पुष्पम्)। जब कारण का नाश कर दें तो कार्य नष्ट क्यों न हो जावे ? इसी से जब पशु न्यून होते हैं तब दूधादि पदार्थ और खेती आदि कार्यों की भी घटती होती है। इसी लिये ७०० वर्ष पूर्व घी दूध गाय और बैल आदि पदार्थ जितने मूल्य से मिलते थे आज उतना दूध घी गाय बैलादि पदार्थ २०० गुने अधिक मूल्य से भी नहीं मिल सकते।

गौ आदि पशुवों की रक्षा में अन्न घी दूध आदि कोई भी महंगा नहीं होता। दूधादि अधिक होने से दरिद्र को भी खान पान में मिलने पर न्यून ही अन्न खाया जाता है और अन्न के न्यून खाने से मल कम बनता है, मल के न्यून होने से दुर्गन्ध भी न्यून होता है। दुर्गन्ध के स्वल्प होने से वायु और वृष्टि जल की शुद्धि भी विशेष होती है और उससे रोगों की न्यूनता होने से सब सुख बढ़ता है। महर्षि यह लिख कर चेतावनी देते हैं। इससे यह ठीक है कि गो आदि पशुवों के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है। महर्षि दयानन्द जी की इस चेतावनी से भारतवासियों की आंखें नहीं खुलीं इसी कारण भारत का सर्व प्रकार से सर्वनाश हो गया। गोरक्षा, गोपालन और गोसंवर्धन से ही देश बच सकता था और सर्वतोमुखी उन्नति हो सकती थी।

मुस्लिम शासक और अंग्रेजी सरकार तो विदेशी थे। मुसलमान तो भारत में वस गये वे कुछ तो भारत का हित चाहने लगे थे। किन्तु अंग्रेजों में भारत के प्रति ममत्व कभी हुआ ही नहीं। भारत में रहने वाला हरेक अंग्रेज चाहे वह सरकारी नौकरी में था चाहे अन्य व्यवसाय करता था चाहे दिखावे के लिये भारत के प्रति बोल चाल में प्रेम भी प्रकट करते थे किन्तु उनका खिचाव वा प्रेम अपने देश इंगलैंड के प्रति ही रहता था। अंग्रेज शासक अपने देश के कल्याण में लगे रहते थे। इस लिये उनके शासन प्रणाली कानूनादि कितने ही अच्छे दिखाई देते थे वे सब भारत का द्रव्य शोषण वा धन लूटने के लिये ही था। अंग्रेजों की कुशिक्षा के कारण भारत के लोगों की प्रज्ञा मारी गई अर्थात् बुद्धि भ्रष्ट हो गई। भारत के शिक्षित समाज ने अंग्रेजा की दूषित शिक्षा से शिक्षित होकर अपनी संस्कृति सभ्यता धर्म शील चरित्र वलादि सब कुछ समाप्त कर दिया। और अंग्रेजी शिक्षा ने इन्हें सर्वथा अन्धा, पंगु और निष्क्रिय कर डाला।

इस अंग्रेजी शिक्षा का सबसे वड़ा दुष्परिणाम यह हुवा कि जिस किसी को छोटी मोटी डिग्री का प्रमाण पत्र मिल गया वह इतना अभिमानी हो जाता है कि वह अपने आप को जार्ज वाशिंगटन वा लाट साहिब समझने लग जाता है। अपने इतिहास धर्म संस्कृति आदि जो प्राचीन वा पुराना है उसे वह निकम्मा गंवारू और सर्वथा त्याज्य समझ कर उसकी खिल्ली वा मज़ाक उड़ाता है। वह इस मान्यता का "cow has no soul, गौ में आत्मा नहीं" इस पर श्रद्धा रखता और इस मिथ्यातत्त्व ज्ञान का प्रचार करता है। गाय बैल के विषय में उदासीन ही नहीं विरुद्ध उठ खड़ा होता है। अंग्रेजी पढ़ा लिखा व्यक्ति सर्वथा निठल्ला वेकार अस्वस्थ बीमार और वदकार वन जाता है। कर्त्ता धर्त्ता न हो कर व्यर्थ का वक्ता वकवास करने वाला वन जाता है। बातों में कुतर्क कर वाल की खाल उतारता है परिश्रम करना तो दूर इस का नाम सुन कर ही इसके पसीने आ जाते हैं। अच्छा पहनना और अच्छा खाना चाहता है इस की यह इच्छा रहती है इसे कोई हलवे का पर्वत मिल जाय और वह इसे वहां बैठकर खाता रहे और पेट भरने पर पैर पसार कर चद्दर तान कर सो जाये इस प्रकार के निकम्मे नालायक लोग ही इस अंग्रेजी शिक्षा ने प्रायः उत्पन्न किए हैं जो देश के ऊपर सर्वथा भार ही हैं।

अंग्रेजों और मुसलमानों में एक बड़ा अन्तर यह था कि दोनों ही आत्यचारी विदेशी लुटेरे और आक्रमणकारी थे दोनों का उद्देश्य भी एक ही था। किंतु पीछे आकर मुसलमान शासक और उनके अधिकारी भारत में वस गए और यहीं अपना घर निवास स्थानादि वना लिए अर्थात् कुछ थोड़े रूप में भारतीय वन गये इसी कारण उन्होंने भारत की पुरानी नीति नहीं बदली और भूमि व्यावस्था में कोई परिवर्तन न कर प्रजा के हित का ध्यान रखा, यहां तक कि मुसलमानों ने ७०० वर्ष तक राज्य किया। दूसरी ओर अंग्रेजों ने ऐसी निर्दयता और अमानुषता दिखायी जो किसी ने भी नहीं की थी पहले लोगों को घास लकड़ी नमकादि आवश्यक वस्तु मुफ्त यथेष्ट मिलते थे। किंतु अंग्रेजी राज्य में विना पैसे के चारे का एक तिनका, लकड़ी की एक छिपटी वा नमक की एक डली भी नहीं मिलती थी। इसी कारण घी दूध लकड़ी घास सभी कुछ मंहगा हो गया प्रजा पर अनेक प्रकार के कर लगाकर प्रजा को अंग्रेजों ने लूटकर शोषण कर डाला। अंग्रेजों से बढ़कर कोई लुटेरा भारत में नहीं आया अंग्रेजों ने गो वध के लिये भारत में स्थान-स्थान पर बूचडखाने खुलवा कर गोवंश का नाश कर डाला हिन्दुओं के मथुरा जैसे तीर्थ स्थानों पर बूचड़खाने वना दिये। इस प्रकार अंग्रेजीं राज्य में गोधन और जनता दोनों ही विनाश को प्राप्त हुये और राष्ट्र मरणासन्न हो गया। और उन्हीं का अनुकरण हमारी भारत सरकार ने स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् किया अनेक आन्दोलन गोहत्या वंद करने के लिये किये गए किंतु हमारे राज्य के कर्णधारों के कानों पर एक जूं तक नहीं रेंगी, गोहत्या आज भी पूर्ववत् हो रही है। गोचर भूमि वन और जंगल काटे जा रहे हैं।

गो रक्षा के कोई उपाय नहीं हो रहे। जो अंग्रेजी राज्य में यहां एक रुपये का दो सेर घी आता था आज दो रुपये का छटांक घृत मिलता है। ५० वर्ष में ही घी का मूल्य सवा सौ गुणे से भी अधिक बढ़ गया। ऐसी अवस्था में देश क्या खाक उन्नति करेगा। घी दूध का स्थान चाय बीड़ी सिगरेट और शराव ने लिया। देश का भविष्यत् भयावह और शोचनीय है इन सव रोओं की चिकित्सा वा औषध केवल गो रक्षा ही है। गौवों के लिए गोचर भूमि पूर्वतः छोड़ी जाये। गो हत्या राज्य नियम बनाकर सर्वथा वन्द हो। वेद की आज्ञानुसार

गो हत्यारे को मृत्यु का दण्ड दिया जाय, गोपालन करने वालों को सर्व प्रकार से प्रोत्साहित किया जाय, प्रत्येक ग्राम में पूर्वतः गोचर भूमि वा वनी सुरक्षित की जायें तब कहीं देश के सुदिन आ सकते हैं। यदि आजकल की भांति करोड़ों गोवें प्रतिवर्ष मारी जाती रहीं तो भारत भूमि श्मशान भूमि व न जाएगी। मांस हड्डी चमड़े का व्योपार भी देश के लिए वहुत ही घातक सिद्ध हो रहा है। क्या कभी हमारे राज्य के स्वामियों को सद्‌वुद्धि आयेगी? क्या ये स्वयं सन्मार्ग पर चलकर देश के भक्षक न होकर रक्षक वनेंगे। महर्षि दयानन्द जो दया के भण्डार थे जिन्हें दया करशे में आनंद आता था, इसीलिये उनका दयानंद नाम सार्थक था इसलिये गोकरुणानिधि के अंत में उन्हों ने लिखा है—

धेनुःपरा दयापूर्वा यस्थानन्दाद्विराजते।
प्राख्यायां निर्मितस्तेन ग्रन्थो गोकरुणानिधिः।१।

उनका गौवों पर कितना करुणा भाव और दया दृष्टि थी यह इस श्लोक और उनके नीचे लिखे शब्दों से ज्ञात होता है। "हे मांसाहारियो! तुम लोग जव कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं? हे परमेश्वर! तू क्यों न इन पशुवों पर, जो कि विना अपराध मारे जाते हैं, दया नहीं करता? क्या उन पर तेरी प्रीति नहीं है? क्या इनके लिये तेरी न्याय सभा वंद हो गई है? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान देता, और उनकी पुकार नहीं सुनता। क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खतादि दोषों को दूर नहीं करता? जिससे ये इन बुरे कामों से वचें। जो गोरक्षा कार्य वहुत उपकारी है इसलिये करने वाला इस लोक और परलोक में स्वर्ग अर्थात् पूर्ण सुखों को अवश्य प्राप्त होता है। अन्त में महर्षि दयानंद जी ईश्वर से प्रार्थना करते हैं—'हे महाराजाधिराज जगदीश्वर जो इन को कोई न वचाय तो आप इनकी रक्षा करने और हम से कराने में शीघ्र उद्यत हूजिये।" महर्षि दयानंद और आर्य समाज गोरक्षार्थ जो कार्य किये वे पाठक अन्यत्र पढ़ेंगे।

गोदुग्ध पर मेरे निजी अनुभव

आर्यसमाज की शिक्षा से और महर्षि दयानन्द की दया से मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुवा कि वैदिक धर्म में दीक्षित और आर्य समाज के रङ्ग में रंगे हुये श्रद्धालु आर्य कृषक के घर में मेरा जन्म हुवा। मेरे इस शरीर के जन्म से पू ' ही इस शरीर से सम्बन्ध के माता पिता दोनों ही आर्यसमाजी थे। उस समय घर पर गाय भैंस आदि दूध-घी के पशु पर्याप्त में थे। उस समय तक गोचर भूमि सभी ग्रामों में पशु चरने के लिये थी जिसे बनी कहते थे। सभी गौवें अधिक रखते थे, घी के लिये भैंसों का पालन-पोषण भी होने लग गया था। माता-पिता सच्चे आर्य समाजी थे। घर पर घी दूध की खूब मौज थी अतः बचपन से यथेच्छा घी दूध दही मलाई और मक्खन खूब खाने को मिला, मुझे घर वाले बलपूर्वक खिलाते थे मैं अकेला पुत्र और बहुत लाडला भी था। अतः खाने पीने की कोई कमी कैसे हो सकती थी।

उन दिनों दाल, शाक सब्जी किसानों के घरों अथवा ग्रामों में बहुत कम तथा कभी-कभी बनती थी। सब भोजन दूध,दही और तक्र (छाछ) के साथ ही खाते थे। प्रायः सभी को घी दूध खाने को प्रचुर मात्रा में मिलता था। मेरे बाल्यकाल में घी दो तीन सेर एक रुपये का बिकता था। दूध कोई बेचता ही नहीं था। यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध थी जिसने दूध बेच दिया उसने पूत बेच दिया। अब देश का दुर्भाग्य कि ये दोनों ही दूध और पूत (पुत्र) खूब बिकने लगे हैं। जिस देश में दूध और पूत (पुत्र) बेचना महापाप समझा जाता था वहां दूध तो प्रायः सभी बेचने लगे हैं। और पैसे वाले तथा पढ़े लिखे लोग जहेज (दहेज) के नाम पर प्रायः सभी अपने पुत्रों को भी बेचने लगे हैं। दूध मांगा हुआ मिल जाता था किन्तु मूल्य से किसी भाव से नहीं मिलता था।

एक दिन की घटना है कि मैं और पं० बोधेन्द्र जी (उस समय वे ब्रह्मचारी थे) रिवाड़ी से झज्जर पैदल चल पड़े। मार्ग में कुछ ककड़ी फूट आदि लेकर खाये श्री बोधेन्द्र जी को रास्ते में चलते-चलते पेट में सख्त दर्द हो गया वे भूमि पर

लेट कर पैर पीटने लगे उन्हें बड़ा ही कष्ट था। मैं भी उनकी अवस्था देख कर बहुत दुःखी था औषध कोई पास थी नहीं रात्री और जंगल में कोई उनके कष्ट दूर करने का उपाय नहीं सूझ रहा था। मैंने उन्हीं से पूछा कि यह इस प्रकार की पीड़ा आप को पहिले भी हुई होगी यह कैसे शान्त होगी इसकी इस समय क्या हो सकती हैं ? बतायें मैं कहीं से जाकर कुछ लाऊं।" श्री बोधेन्द्र जी ने कहा कहीं से दूध मिल जाय तो मेरा यह कष्ट वा पीड़ा दूर हो सकती है। कुछ दूरी पर एक गांव था, मैं अपना कमण्डलू लेकर वहां पहुंचा। मैंने कभी कोई वस्तु किसी से मांगी ही नहीं थी और गांव मेरे लिये सर्वथा अपरिचित नया ही था। मैंने गांव में कुछ व्यक्तियों से मिलकर कहा कि मेरा साथी रोगी है और बड़े कष्ट में है क्या उसके लिये कुछ दूध मूल्य से मिल सकता है। गांव वाले कहने लगे यहां दूध कोई भी किसी कीमत पर नहीं बेचता है दूध मांगा हुआ अवश्ल मिल जायेगा। मुझे कुछ दूध मांगा हुवा मिल गया मैं शीघ्र ही दूध लेकर अपने साथी श्री बोधेन्द्र जी के पास पहुंच गया अभी तक वे पीड़ा के कारण बहुत व्याकुल थे और तड़फड़ा रहे थे। ज्यों ही मैंने उन्हें दूध पिलाया कि वह भयङ्कर पीड़ा कुछ ही क्षण में समाप्त हो गई।

दूध ने रामबाण वा जादू का कार्य किया। मैं इससे पूर्व बहुत वर्ष तक धर्मार्थ चिकित्सा करता रहा था किन्तु मुझे इतना ज्ञान वा अनुभव नहीं था कि केवल दूध से ही इतनी भयङ्कर पीड़ा तुरन्त समूल नष्ट हो जाती है। मेरे बाल्यकाल में मेरे से पहली पीढ़ी के बहुत से लोग प्रति दिन एक-एक सेर घी खाते थे। युवावस्था में सभी पहलवानी कुश्ती करते थे। अतः सभी अच्छा घी दूध खाते थे और अपने बच्चों को भी खिलाते थे। मैं अधिक मात्रा में घी दूध आदि खाता था और भी कुछ न कुछ सारे दिन खाता ही रहता था क्योंकि मैं लाडला होने से बहुत चटोरा भी था। मीठा और चटपटा खाना ही अधिक खाता था। माता पिता घर पर जिस वस्तु को न खाने देते वह मैं बाजार में जाकर पैसों से खरीद कर खा लेता था। मिठाई चाट बर्फ दही बड़े आदि खूब पेट भर कर खा लेता था।

१४ वर्ष की आयु तक यह क्रम चला फिर धर्म निर्णय नाम का पुस्तक अपने एक साथी की प्रेरणा से पढ़ने को मिला। उसको पढ़ते ही आंखें खुल गईं जीवन

का तख्ता पलट गया। चटोरापन और शरारतें समाप्त हो गईं। भोजन न पचने से जो स्थिर रूप से कोष्ठवद्धता कब्ज रहता था जिसके लिये प्राय: प्रति सप्ताह रविवार को सौंफ सनाय की पुड़िया विरेचन के रूप में लेनी पड़ती थी, आहार व्यवहार के वदलने से और प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक व्यायाम प्राणायाम करने से कोष्ठवद्धता (कब्ज) का कष्ट दूर हो गया। ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन वड़ी तत्परता और लग्न से करने लगा। दूध घी सब पचने लगा, स्वास्थ्य भी दिन प्रति दिन उन्नत होने लगा।

गाय के घी दूध से विशेष प्रेम हो गया। जब घर पर गाय का दूध घी न होता तो मैं भैंस का भी ले लिया करता क्योंकि व्यायाम प्राणायाम बहुत करता और मन में बलवान् बनने की धुन और लग्न लगी थी। सन् १९३१ ई० में सरदार भगतसिंह जी को फांसी लगने पर कालिज की शिक्षा अधूरी छोड़ कर योगाभ्यास में लग गया उस समय यह प्रसिद्ध था कि गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य पं० अभय-देव जी शर्मा आर्य समाज में वहुत बड़े योगी हैं। मेरी इच्छा थी कि समाज के किसी बड़े महात्मा के चरणों में रह कर मैं योगाभ्यास करूं। महात्मा नारायण स्वामी जी से इस विषय में मैं जिज्ञासा कर चुका था। दसवीं श्रेणी को बीच में छोड़ कर ही योगाभ्यासार्थ मैं जंगलों पर्वतों में जाना चाहता था। बालक होने और पथप्रदर्शक न मिलनेसे उस समय पढ़ता ही रहा। लाहौर में जन्मशताब्दी पर स्वामी ब्रह्मानन्द जी की प्रेरणा पर और उनका पत्र लेकर आचार्य देवशर्मा जी की सेवा में गुरुकुल कांगड़ी हरद्वार पहुंच गया। एक मास तक उनकी सेवा में रहकर योगाभ्यास करता रहा। उनके चरणों में रहते हुये कुछ शंकायें भी करता रहता था। मैं उन दिनों नमक मीठा नहीं खाता था जब तक मिलता तो गौ का घी दूध ही खाता था। उनका मेरे लिये आदेश हुवा कि मैं गाय का ही घी दूध खाने का व्रत लेलूं।

मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य्य कर गाय का घी दूध खाने का ही व्रत ले लिया। ४५ (पैंतालीस) वर्ष से अधिक हो गये वह व्रत गुरुओं के आशीर्वाद और ईश्वर की कृपा से चल रहा है। वड़ी कठिनाइयां भी आयीं, इष्ट मित्र सगे सम्बन्धी इस व्रत के कारण कई वार रुष्ट भी हुए। घी दूध गाय का न मिलने से प्रचार यात्रा में रूखा सूखा (विना घी दूध) भोजन भी १५ वा २० वर्ष तक

करना पड़ा। स्वास्थ्य की हानि तथा कष्ट भी हुये किन्तु मैंने इस गाय के घी दूध खाने के व्रत का श्रद्धा और निष्ठा से पालन किया। अपने गुरुकुलों में गौवें ही पालीं लाखों रुपये उनके पालन-पोषण पर खर्च किये। गौजाति की उन्नति के लिये सब कुछ किया कोई कमी नहीं छोड़ी। गोरक्षा आन्दोलन में तीन वार जेल भी काटी और हरयाणे के १० हजार के लगभग सत्याग्रही जेल भी भेजे। लाखों रुपये गोरक्षा आन्दोलन पर जनता से लेकर व्यय भी किये। जेल में भी मैंने यह व्रत नहीं तोड़ा। गाय के ही दूध तक्र दही गो मूत्र और गोवर से हजारों रोगियों की चिकित्सा की और मैं अपने जीवन में अनुभव के आधार पर इस परिणाम पर पहुंचा, मेरा निष्कर्ष और निचोड़ यह है कि पञ्चगव्य अर्थात् गाय के घी दूध, दही (तक्र) मूत्र और गोवर सब ही अमृत है।

गोदुग्ध पर इस पुस्तक में शास्त्रों के आधार पर अपने साथा अनुभवी वैद्यों हकीमों और डाक्टरों तथा अनेक लेखकों के लेखों पुस्तकों के अनुसार सार रूप में "गोदुग्ध अमृत है" इस विषय में विस्तार से लिख दिया है कुछ थोड़े से अपने अनुभव अन्त में पाठकों के लाभार्थ लिखना उचित समझता हूं।

नेत्र ज्योति और गोदुग्ध

आयुर्वेद शास्त्रों ने नेत्र ज्योति को स्थिर रखने के लिये गोदुग्ध और घृत परमौषध वा अमृत तुल्य माना है। एक किसान लूखी ग्राम जि० महेन्द्रगढ़ में सात वर्ष तक सर्वथा अन्धा ही रहा, सात वर्ष के पश्चात् मैं उससे मिला और सात वर्ष तक अन्धा रहने के पश्चात् फिर नेत्र ज्योति कैसे लौट आयी और उसे पुन: दिखायी देने कैसे देने लग गया, उससे यह विस्तार से पूछा। उसने बताया निर्धनता के कारण और बूढ़ा होने के कारण हमारे घर पर घी दूध का प्रवन्ध न रहने से और सूखा अन्न बाजरा (जो गर्म खुश्क होता है) खाने से मैं अन्धा हो गया। मेरे कई बच्चे थे जब वे पशु चराने योग्य हो गये तो उनके चराने से जो गाय की बच्छिया थी, वह गाय (धेनु) बन गई घर पर गाय का घी दूध होने लगा, मेरे बच्चों ने आप भी घी दूध खाया पीया और मुझे भी गाय का घी दूध प्रचुर मात्रा में खिलाया, मस्तिष्क की खुश्की जिसके कारण नेत्र ज्योति चली गई थी वह सर्वथा दूर हो गई। ईशकृपा से मैं फिर सुलाखा हो गया। यह सब ईश्वर और गाय के घी दूध की दया है कि मेरा अन्धापन समाप्त हो गया

हम प्रति दिन जा यह प्रार्थना करते हैं 'पश्येमः शरदः शतम्, जीवेम शरदः शतम्' हम सौ वर्ष तक देखें और सौ वर्ष तक जीवें। अर्थात् हम दीर्घ जीवी हों और हमारी आंख अन्त समय तक देखता रहे खराब न हों।

यह हमारी प्रार्थना तभी सार्थक हो सकती है जब हम सभी स्वास्थ्य के नियमों का पालन करें और गोदुग्ध तथा गोघृत का प्रचुर मात्रा में प्रयोग करें। गाय के घी दूध तो आखों के लिये अमृत ही हैं। पूज्य सिद्धान्ती जी का चश्मा ४२ वर्ष के पीछे गोमूत्र आंखों में डालने से ही उतर गया। मैं जब दसवीं में दिल्ली में सैंट स्टीफन हाई स्कूल में पढ़ता था। तब सबकी डाक्टरी हुई तो मेरी आखों में (स्लाई माईओपिया) निर्बलता बतायी। जो गाय के घी दूध और ब्रह्मचर्य पालन से दूर हो गई। सारी आयु पढ़ाई लिखाई विद्या पढ़ने पढ़ाने का कार्य किया जिसके कारण अधिक कार्य आंखों को ही करना पड़ता है।

आज मेरी आयु ७० वर्ष के लगभग होने को आयी और दिन रात लिखने पढ़ने का कार्य करने पर भी आंखें निरन्तर कार्य कर रही हैं। गत वर्ष मोटर दुर्घटना होने के कारण एक आँखके पास भयङ्कर घाव आया था उससे अधिक रक्त निकलने के कारण आंखों को विशेष रूप से दायी आंख को हानि पहुंची क्योंकि जख़म दायीं आंख के पास ही हुआ था। देखने वालों ने जो उस समय मेरे साथ मेरी गाड़ी में थे, बताया कि खून की धारा जख़म से वह निकली थी, न्यून से न्यून १ किलो रक्त निकल गया होगा। लिखने का सार यह है कि नेत्रों के लिये गाय का घी दूधादि सभी अमृत हैं।

हमारी गुरुकुल झज्जर की रसायन शाला में तथा कन्या गुरुकुल नरेला में महात्रिफलादि घृत, त्रिफलाघृत और काजल गाय के घृत दूध से बनता है। इनके प्रयगो से बहुत से रोगियों की आखों को बहुत ही लाभ पहुंचा है। कितनों के चश्मे उतर गये हैं। बहुत रोगियों की नेत्र दृष्टि बढ़ी है। आंख की खुजली आंख दुखना, आंखों में पानी आना, कम दिखना, फोलों, जाला आदि चक्षुरोगों को बहुत से रोगियों को इन औषधों ने दूर किया है। ये गाय के दूध और घृत से ही बनती हैं। डाक्टरों की मूर्खता से अनेक रोगी बहरे और अन्धे हो जाते हैं किसी-किसी को भयङ्कर शिरदर्द हो जाता है जो जाने का नाम नहीं लेता। अनेक रोगी पागल हो जाते हैं। क्योंकि डाक्टर अन्धाधुन्ध कुनैनादि विषैली औषधियों

का प्रयोग करते हैं ।

ऐसे अनेक रोगियों की चिकित्सा गोदुग्ध और गोघृत के द्वारा अथवा इनके योगों के द्वारा मैं सदैव करता ही रहता हूं। रोगियों का आश्चर्यजनक लाभ होता है। एक रोगी का वृत्तान्त देता हूं। गंगानगर जिले के एक आर्य सज्जन को मलेरिया में मूर्ख डाक्टर ने वहुत कुनैन का प्रयोग कराया वह कानों से वहरा हो गया और दोनों आंखों में गड़वड़ हो गई एक आंख से तो नाम मात्र ही दिखाई देता था दूसरी आंख की दृष्टि भी वहुत कम हो गई थी। शिर में वहुत गर्मी व खुश्की के कारण पीड़ा खोखलापन भी हो गया था। पञ्चगव्य घृत और त्रिफला आदि घृत दोनों का प्रयोग गाय के दूध के साथ उसे कराया गया। उसे सुनने भी लग गया और आंखों से अच्छी प्रकार दिखायी देने लग गया। गोमाता के घृत दुग्ध से उसके सब कष्ट दूर हो गये, वह आर्य सज्जन म० श्रीचन्द जी आर्य सरदार गढ़िया जिला गंगानगर के वहुत सच्चे आर्य थे। उन्होंने अपनी सभी पुत्रियों और पुत्र को गुरुकुल में ही पढाया।

उदर रोगों पर गोदुग्ध

सभी उदर रोगों को दूर करने के लिये गाय का दूध, गाय का घृत, गाय की दही, गाय का तक्र और गोमूत्र और गोवर का रस प्रयोग सभी से अमृत तुल्य सिद्ध हुये हैं। गांय के दूध घृत आदि से वना हुवा पञ्चगव्य घृत तो उदर रोगों पर राम बाण सिद्ध हुवा है। मलवद्धता (कब्ज) आन्तों की खुश्की, उदावर्त्त गैस वनना, अनाह अफारा, गुल्म गोला, शूल पीड़ा ववासीर भूख न लगना, अम्ल-पित्त अजीर्ण, प्लीहा और यकृत् रोग गाय के दूधादि के सेवन तथा इनकी वनाई हुई औषध पञ्चगव्यादि घृत के सेवन से समूल नष्ट होते हैं। एक फौजी सैनिक जिसे सेना में किसी ने ईर्ष्या द्वेष के कारण विष दे दिया था। वह गर्मी के कारण सदैव दुःखी रहता था। उसकी भूख समाप्त हो गई थी सदैव अजीर्ण अरुचि रहती थी। उसको दस किलो से अधिक पञ्चगव्य घृत वनाकर गोदुग्ध के साथ सेवन कराया गया। उस पर जादू के समान प्रभाव पड़ा जो रोग अनेक प्रकार की चिकित्सा करवाने पर असाध्य सिद्ध हो रहे थे, वे इस रामवाण औषध से दूर हो गये वह म० मांगेराम आर्य पहलवान सबोली ग्राम जि०

सोनीपत का है वह अव अपने सब कार्य बड़े उत्साह से करता है तथा हमारा वहुत ही उपकार मानता है। कोई भी कार्य आर्य समाज की सेवा का कहें सदैव करने पर तत्पर रहता है। उदर रोगियों और पागलों पर गाय के पांचो पदार्थ दूध घी, (मक्खन) तक्र (दही) गोमूत्र और गोबर से बने पञ्चगव्यादि घृत रामवाण, औषघ सिद्ध हुये हैं। हम जितने भी घृत वनाते हैं वे सभी वहुत शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं।

स्त्री रोग और दूध

(१) रक्त प्रदर—अशोक की छाल २ तोले अधकुटी (जौकुट) करके एक पाव जल, एक पाव गाय के दूध में पकायें जब केवल दूध रह जाय, इसे आग पर से उतार कर छान लें और ठण्डा करके इसमें आवश्यकतानुसार मिश्री मिलाकर रोगी स्त्री को पिलायें। यह रक्त प्रदर और श्वेत प्रदर दोनों को दूर करता है। हमारा अनुभूत है।

(२) पका हुवा केला दूध में पकाकर कई दिन तक प्रयोग करने से रक्त प्रदर दूर होता है।

(३) केले के पत्ते धूप में सुखालें, खूब वारीक पीसकर इसमें से १ माशे से तीन माशे तक गाय वा वकरी के दूध के लेने से पित्त प्रधान प्रदर शान्त होता है।

(४) भिण्डी की सूखी जड़ १० तोले, कसेरू रूखा, सिंघाड़ा सूखा १० तोला तीनों को खूब वारीक पीस कर छः माशे प्रातः सायं गाय के दूध के साथ प्रयोग करने से रक्त प्रदर दूर होता है।

(५) नीम का तैल १ तोला, एक पाव गाय के दूध में मिलाकर पीने से प्रदर रोग वहुत शान्त हो जाता है।

(६) नागकेसर को वारीक पीस कर मात्रा छः माशे गाय के दूध वा दही के साथ प्रयोग करने से रक्त प्रदर दूर होता है।

(७) रसौंत तीन माशे लाख तीन माशे दोनों को गौ वा वकरी के दूध में मिलाकर कुछ दिन प्रयोग करने से रक्तप्रर दूर होता है।

(८) सूखे आंवलों को हरे आंवलों के रस में लगातार २१ दिन खरल करके

सुखालें। इसमें से छः माशे गाय के दूध के साथ प्रयोग करने से रक्त प्रदर दूर होता है।

(६) आंवले की गिरा तीन माशे से छः माशे तक गाय के दूध के साथ सेवन करने से रक्त प्रदर तथा श्वेत प्रदर दोनों दूर होते हैं।

(१०) चूहे की मींगनों को आग में जलाकर चूर्ण वनालें और इनके समान मिश्री मिलाकर मात्रा तीन माशे गाय के दूध के साथ सेवन करने से रक्त प्रदर दूर होता है।

(११) लोध पठानी, गेरू और माजू इन तीनों को सम भाग लेकर खूब वारीक पीस लें और दिन में दो तीन वार चावलों के पानी वा गाय के दूध के साथ सेवन करायें। यह प्रदर रोग की अत्यन्तोत्तम औषध है। इससे रक्त प्रदर और श्वेत प्रदर दोनों ही दूर होते हैं।

(१२) प्रदरान्तक लौह, प्रदरान्तक रस, सुपारी पाक, प्रदरारिलौह, और कुटजावलेह आदि शास्त्रीय योगों का गोदुग्ध के साथ प्रयोग करने से श्वेत प्रदर और रक्त प्रदरादि स्त्री रोग दूर होते हैं।

सोम रोग

सोम रोग और श्वेत प्रदर दोनों रोग महिलाओं के मिलते जुलते ही रोग हैं इनकी चिकित्सा भी समान ही है।

(१) प्रवाल चन्द्रपुटी १ रत्ती से ४ रत्ती तक गाय के मक्खन वा मधु में मिलाकर प्रातः सायं खिलाकर ऊपर से गौ का धारोष्ण दूध अथवा थोड़ा गर्म दूध पिलायें इससे सोमरोग और श्वेत प्रदर रोग नष्ट होंगे।

(२) सितावर का चूर्ण तैय्यार करके हरे आंवले के रस में सात दिन खरल करें। एक-एक माशे की गोलियां बनायें और एक दो गोली प्रातः सायं गाय के दूध के साथ सेवन करने से सोमरोग और श्वेत प्रदर रोग नष्ट होते हैं।

(३) मुलहटी चूर्ण, दोनों सम भाग लेकर द्विगुण मधु में मिलायें। मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक गोदुग्ध के साथ खिलायें। इससे सोम रोग नष्ट होता है।

(४) नागकेसर का चूर्ण ३ माशे गोदुग्ध वा दही के मट्ठे के साथ लेने से सोमरोग नष्ट होता है।

(५) सुपारी पाक छः माशे गाय के दूध के साथ प्रातः सायं लेने से सोड रोग तथा श्वेत प्रदर दोनों नष्ट होते हैं। सुपारी पाक आयुर्वेद का प्रसिद्ध योग है। जिसे सभी जानते हैं। सभी फार्मेसी इसे तैय्यार करती हैं। इस प्रकार अशोकारिष्ट भी उपरिलिखित रोगों की बहुत अच्छी औषध हैं।

गोदुग्ध और हृदय रोग

(१) अर्जुन वृक्ष की छाल लेकर छाया में सुखालें और कूट छान कर वारीक चूर्ण वना लेंवे। मात्रा तीन-तीन माशे प्रातः सायं गाय के धारोष्ण दूध के साथ लेवें। अथवा दूध को गर्म करके ठण्डा करके प्रयोग करें। हृदय के सभी रोग शान्त हो जाते हैं।

(२) छिलका हरड़, वर्च, रासना, पीपल बड़ा, सौंठ, कचूर, पोखर मूल सब औषध समभाग लेकर कूट छान कर वारीक करलें। मात्रा ३ माशे प्रातः सायं गाय के दूध के साथ प्रयोग करने से प्रत्येक प्रकार का हृदय रोग नष्ट होता है। अकेला गोदुग्ध भी हृदय रोगों के लिये अमृत है।

(३) गेहूं का निशास्ता, अर्जुन की छाल का चूर्ण सम भाग लेवें और गो घृत में भून लें, चूर्ण से त्रिगुणा मधु इसमें मिल कर मात्रा ६ माशे से १ तोले तक प्रातः सायं प्रति दिन गोदुग्ध के साथ लेने से कठिन से कठिन हृदय रोग समूल नष्ट हो जाते हैं।

(४) बढ़िया कुरंग श्रृंग भस्म मात्रा १ रत्ती से,२ रत्ती तक, घी तीन माशे खांड छः माशे में मिलाकर प्रयोग करें और ऊपर से गोदुग्ध पिलावें, हृदय पीड़ा, व्याकुलता आदि सब विकार दूर होते हैं।

(५) कुठ कड़वा, नीम की छाल, सोंठ कचूर, छिलका हरड सब सम भाग लेकर कपड़ छान करलें। इसको गोघृत में थोड़ा भिगोलें, मात्रा ३ माशे प्रातः सायं गाय के दूध के साथ सेवन करायें। वात विकार के कारण हृदय रोग के सभी विकार दूर होते हैं।

(६) हरड़ बड़ी का छिलका कूट कर छानलें और गोघृत में थोड़ा भिगोलें और इसमें सम भाग खांड मिलालें। मात्रा ३ माशे से छः माशे तक गाय के दूध के साथ प्रातः सायं प्रयोग करने से पित्त के कारण हुआ हृदय रोग दूर होता है।

(७) मुलहठी ९ माशे कूट छान कर १/२ सेर गोदुग्ध में पकायें और छान

लें और उस दूध में १ तोले से २ तोले तक गोघृत मिलालें और चार तोले मिश्री मिलाकर पित्त कुपित्त हृदय रोग सब दूर होते हैं।

(८) अर्जुन वृक्ष की छाल का मोटा चूर्ण १ तोला दूध में चाय के स्थान पर डालकर उबाल कर रोगी को पिलाने से पित्त के कारण उत्पन्न हृदय रोग दूर होता है।

(९) इसी प्रकार खरेंटी का चूर्ण २ तोले गोदुग्ध में चाय के स्थान में उबाल कर छान कर खांड वा मिश्री मिलाकर पिलाने से पित्त के कारण उत्पन्न हुए हृदय की पीड़ादि सब विकार नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं।

(१०) सासहस्र पुटी अभ्रक भस्म को अर्जुन वृक्ष की छाल के क्वाथ में सात दिन निरन्तर खरल करके १/२ रत्ती से १ रत्ती की गोली वनायें। इन गोलियों को गाय के दूध के साथ सायं प्रातः दोनों समय प्रयोग करने से प्रत्येक प्रकार का हृदय रोग दूर होता है।

(११) इसी प्रकार चिन्तामणि रस, कल्याण सुन्दररस, हृदयेश्वर रस और और अर्जुन घृतादि हृदय रोग की प्रसिद्ध (आयुर्वेद की) औषध है। इन सब का प्रयोग गाय के दूध के साथ करने से, हृदय पीड़ा, दिल की धड़कनादि सब ही दिल के रोग समूल नष्ट होते हैं। अधिक क्या लिखूं, दिल के सभी रोगों के लिये गोदुग्ध अमृत के समान लाभप्रद है।

मूत्र कृच्छ्र तथा मूत्राघात पर गोदुग्ध

जिस रोग में मूत्र अत्यन्त कष्ट से आये अथवा मूत्र त्याग के समय रोगी को बहुत ही कष्ट होता हो तो ऐसे रोग को मूत्र कृच्छ्र (सूजाक) भी कहते हैं। इसमें रोगी रक्त मिला हुवा एक-एक बून्द मूत्र कष्ट से आता है। पेशाव की नली में सख्त दर्द वा पीड़ा होती है। मूत्राकृच्छ्र का दौरा बहुत देर तक नहीं रहता। मूत्राघात में मूत्र नली से आता है और दौरा बहुत देर तक रहता है। मूत्राघात में पीड़ा न्यून होती है। दोनों रोगों की चिकित्सा कुछ मिलती जुलती सी ही है।

(१) खस, दूब (घास) नरसिल की जड़ तीनों वस्तु तीन तोले लेकर अध कुटी (जौकोब) कर लें और इसमें १ पाव जल और आधा सेर गाय का दूध

डालकर सबको पकायें । जब जल, जल जाय, दूध को छान कर इसमें दो तोले मिसरी मिलाकर रोगी को प्रातः सायं पिलायें कुछ ही दिनों में पित्त कुपित्त मूत्र कृच्छ्र दूर होगा । इस रोग की रामबाण औषध है ।

(२) गाय के गरम दूध में गुड़ मिलाकर पिलाने से प्रत्येक प्रकार का मूत्र-कृच्छ्र समूल नष्ट होता हैं ।

(३) डेढ़ पाव गाय के दूध में ३ तोले गुड़ और २ तोले गोघृत मिला कर प्रयोग करने से मूत्राघात को अवश्य लाभ होता है ।

(४) त्रिनेत्राख्यारस मात्रा १ रत्ती गाय के दूध के साथ प्रयोग करने से मूत्राकृच्छ्र रोग दूर होता है ।

(५) गोखरू ९ माशे, एरण्ड की जड़ की छाल ६ माशे, सितावर ९ माशे इन तीनों को मोटा-मोटा काट कर डेढ़ पाव जल में उबालें । चौथा भाग रहने पर मल कर छान लें इसमें डेढ़ पाव गाय का दूध डालकर इतना उबालें कि केवल दूध ही रह जाय फिर उसमें मिश्री मिलाकर पिलायें इससे मूत्राघात में तुरन्त लाभ होता है ।

(६) गन्दा बेरोजा शुद्ध १ माशा, इलायची छोटी ४ रत्ती, वंशलोचन ४ रत्ती तीनों का बारीक चूर्ण करलें । और गाय के दूध की लस्सी के साथ प्रयोग करने से पेशाब का बन्धा टूट जाता है और मूत्र खुल कर आता है ।

(७) धान्य गोक्षरू घृत, वरुणादि लोह और लघु लोकेश्वर रस का गोदुग्ध के साथ प्रयोग करने से मूत्राघात रोग समूल नष्ट हो जाता है ।

गोकृष्यादिरक्षिणी सभा के उपनियम

महर्षि दयानन्द सरस्वती सन् १८७९ में रेवाड़ी में पधारे थे। उस समय भारत की सर्वप्रथम गोशाला की स्थापना उन्होंने वहां की थी। गौमाता के महत्त्व को देखते हुये उन्होंने गोकरुणानिधि नामक अपने ग्रन्थ में गोकृष्यादि-रक्षिणी सभा के उपनियम इस प्रकार दिये हैं—

१—इस सभा का नाम "गोकृष्यादिरक्षिणी" है।

२—इस सभा के उद्देश्य वे ही हैं जो कि इसके नियमों में वर्णन किये गये हैं।

२—जो लोग इस सभा में नाम लिखवाना चाहें और इसके उद्देश्यानुकूल आचरण करना चाहें वे इस सभा में प्रविष्ट हो सकते हैं, परन्तु उनकी आयु १८ वर्ष से न्यून न हो। जो लोग इस सभा में प्रविष्ट हों वे 'गोरक्षकसभासत्' कहलावेंगे।

४—जिन का नाम इस सभा में सदाचार से एक वर्ष रहा हो और वे अपने आय का शतांश वा अधिक मासिक वा वार्षिक इस सभा को दें, वे 'गोरक्षकसभा-सद्' हो सकते हैं। और सम्मति देने का अधिकार केवल गोरक्षकसभासदों ही को होगा।

(अ) गोरक्षकसभासद् बनने के लिये गोकृष्यादिरक्षिणी सभा में वर्ष भर नाम रहने का नियम किसी व्यक्ति के लिये अन्तरङ्गसभा शिथिल भी कर सकती है। इस सभा में वर्ष भर रहकर गोरक्षकसभासद् बनने का नियम गोकृष्यादिर-क्षिणी सभा के दूसरे वर्ष से काम आवेगा।

(ब) राजा, सरदार, बड़े २ साहूकार आदि को इस सभा के सभासद् बनने के लिये शतांश ही देना आवश्यक नहीं, वे एक वार वा मासिक वा वार्षिक अपने उत्साह वा सामर्थ्यानुसार दे सकते है।

(ज) अन्तरङ्गसभा किसी विशेष हेतु से चन्दा न देनेवाले पुरुष को भी गो-रक्षकसभासद् बना सकती है।

(द) नीचे लिखी हुई विशेष दशाओं में उन सभासदों की भी, जो गोरक्षक-सभासद् नहीं बने, सम्मति ली जा सकती है—

(१) जब नियमों में न्यूनाधिक शोधन करना हो।

(२) जब कि विशेष अवस्था में अन्तरङ्गसभा उनकी सम्मति लेनी योग्य

और आवश्यक समझे।

(३) जो इस सभा के उद्देश्य के विरुद्ध कर्म्म करेगा वह न तो गोरक्षक और न गोरक्षकसभासद् गिना जावेगा।

(४) गोरक्षकसभासद् दो प्रकार के होंगे--एक साधारण और दूसरे माननीय। माननीय गोरक्षकसभासद् वे होंगे जो शतांश वा १०) रुपया मासिक वा इससे अधिक देवें, अथवा एक वार २५०) रुपया दें, वा जिनको अन्तरङ्ग-सभा विद्या आदि श्रेष्ठ गुणों से माननीय समझे।

५--यह सभा दो प्रकार की होगी--एक साधारण, दूसरी अन्तरङ्ग।

६--साधारणसभा तीन प्रकार की होगी--१ मासिक, २ षाण्मासिक और ३ नैमित्तिक।

७--मासिक सभा--प्रतिमास एक वार हुआ करेगी, उसमें महीने भर का आयव्यय और सभा के कार्यकर्त्ताओं की क्रियाओं का वर्णन किया जावे जो कि कथन योग्य हो।

षाण्मासिक सभा--कार्तिक और वैशाख के अन्त में हुआ करे, उस में आप्तोक्त विचार, मासिक सभा का कार्य, प्रत्येक प्रकार का आयव्यय समझना और समझाना होवे।

९--नैमित्तिक सभा--जब कभी मन्त्री, प्रधान और अन्तरङ्गसभा आवश्यक कार्य जाने उसी समय यह सभा हो और उसमें विशेष कार्यों का प्रवन्ध होवे।

१०--अन्तरङ्गसभा--सभा के समस्त कार्यप्रवन्ध के लिये एक अन्तरङ्ग-नियत की जावे, और इसमें तीन प्रकार के सभासद् हों एक प्रतिनिधि, दूसरे प्रतिष्ठित और तीसरे अधिकारी।

११--प्रतिनिधि सभासद् अपने २ समुदायों के प्रतिनिधि होंगे और उन्हें उनके समुदाय नियत करेंगे। कोई समुदाय जब चाहे अपने प्रतिनिधि को बदल सकता है। प्रतिनिधि सभासदों के विशेष कार्य ये होंगे :--

(अ) अपने २ समुदायों की सम्मति से अपने को विज्ञ रखना।

(व) अपने २ समुदायों को अन्तरंगसभा के कार्य, जो कि प्रकट करने योग्य हों, वतलाना।

(ज) अपने २ समुदायों से चन्दा इकट्ठा करके कोषाध्यक्ष को देना।

१२—प्रतिष्ठित सभासद् विशेषगुणों के कारण प्रायः वार्षिक, नैमित्तिक और साधारण सभा में नियत किये जावें। प्रतिष्ठित सभासद् अन्तरंगसभा में एक तिहाई से अधिक न हों।

१३—प्रति वैशाख की सभा में अन्तरंग सभा के प्रतिष्ठित अधिकारी वार्षिक साधारण सभा में फिर से नियत किये जावें, और कोई पुराना प्रतिष्ठित और अधिकारी पुनर्वार नियुक्त हो सकता है।

१४—जब वर्ष के पहिले किसी प्रतिष्ठित सभासद् और अधिकारी का स्थान रिक्त हो, अन्तरंगसभा आप ही उसके स्थान पर किसी और योग्य पुरुष को नियत कर सकती है।

१५—अन्तरंगसभा कार्य के प्रवन्ध निमित्त व्यवस्था बना सकती है, परन्तु वह नियमों और उपनियमों से विरुद्ध न हो।

१६—अन्तरङ्गसभा किसी विशेष कार्य के करने और सोचने के लिये अपने में से सभासदों और विशेष गुण रखने वाले सभासदों को मिलाकर उपसभा नियत कर सकती है।

१७—अन्तरङ्गसभा का कोई भी सभासद् मन्त्री को एक सप्ताह के पहिले एक विज्ञापन दे सकता है कि कोई विषय सभा में निवेदन किया जावे, और वह विषय प्रधान की आज्ञानुसार निवेदन किया जावे। परन्तु जिस विषय के निवेदन करने में अन्तरंगसभा के पांच सभासद् सम्मति दें, वह अवश्य निवेदन करना ही पड़ेगा।

१८—दो सप्ताह के पीछे अन्तरंगसभा अवश्य हुआ करे, और मन्त्री और प्रधान की आज्ञा से वा जब अन्तरंगसभा के पांच सभासद् मन्त्री को पत्र लिखें, तो भी हो सकती है।

१९—अधिकारी छः प्रकार के होंगे—१ प्रधान, २ उपप्रधान, ३ मन्त्री, ४ उपमन्त्री, ५ कोषाध्यक्ष, ६ पुस्तकाध्यक्ष।

मन्त्री, कोषाध्यक्ष, पुस्तकाध्यक्ष इनके अधिकारों पर आवश्यकता होने से एक से अधिक भी नियत हो सकते हैं। और जब किसी अधिकार पर एक से अधिक भी नियत हों तो अन्तरंगसभा उन्हें कार्य बांट देवे।

२० प्रधान—प्रधान के निम्नलिखित अधिकार और काम होवें:—

१—प्रधान अन्तरंगसभा आदि सब सभाओं का सभापति समझा जावे।

२—सदा सभा के सब कार्यों के यथावत् प्रवन्ध और सर्वथा उन्नति और रक्षा में तत्पर रहे। सभा के प्रत्येक कार्य्य को देखे कि वे नियमानुसार किये जाते हैं वा नहीं, और स्वयं नियमानुसार चले।

३—यदि कोई विषय कठिन और आवश्यक प्रतीत हो, तो उसका यथोचित प्रवन्ध तत्काल करे, और उसकी हानि में वही उत्तर देवे।

४—प्रधान अपने प्रधानत्व के कारण सब उपसभाओं का, जिन्हें अन्तरंग-सभा संस्थापन करे, सभासद् हो सकता है।

२१—उपप्रधान—इस के ये कार्य्य कर्त्तव्य हैं :—

प्रधान की अनुपस्थिति में उसका प्रतिनिधि होवे। यदि दो वा अधिक उप-प्रधान हों तो सभा की सम्मति के अनुसार उनमें से कोई एक प्रतिनिधि किया जावे परन्तु सभा के सब कार्य्यों में प्रधान को सहायता देनी उसका मुख्य कार्य है।

२२—मन्त्री—मन्त्री के निम्नलिखित अधिकार और कार्य हैं:—

१—अन्तरंगसभा की आज्ञानुसार सभा की ओर से सब के साथ पत्र व्यव-हार रखना।

२—सभाओं का वृत्तांत लिखना और दूसरी सभा होने से पहले ही पूर्व वृत्तान्त पुस्तक में लिखना वा लिखवाना।

३—मासिक अन्तरंगसभाओं में उन गोरक्षकों वा गोरक्षक-सभासदों के नाम सुनाना जो कि पिछली मासिकसभा के पीछे सभा में प्रविष्ट वा उससे पृथक् हुए हों।

४—सामान्य प्रकार से भृत्यों के कार्य पर दृष्टि रखना, और सभा के नियम उपनियम और व्यवस्थाओं के पालन पर ध्यान रखना।

५—इस बात का भी ध्यान रखना कि प्रत्येक गोरक्षक-सभासद् किसी न किसी समुदाय में हों, और इसका भी प्रत्येक समुदाय ने अपनी ओर से अन्तरंग-सभा में प्रतिनिधि किया होवे।

६—पहिले विज्ञापन दिये पर मान्यपुरुषों को सत्कारपूर्वक बिठाना।

७—प्रत्येक सभा में नियत काल पर आना और बराबर ठहरना।

२३—कोषाध्यक्ष—कोषाध्यक्ष के नीचे लिखे अधिकार और कार्य हैं:—

१—सभा के सब आयधन का लेना, उसकी रसीद देना और उसको यथो-चित रखना।

२—किसी को अन्तरंगसभा की आज्ञा के विना रुपया न देना, किन्तु मन्त्री और प्रधान को भी उस प्रमाण से देवे जितना अन्तरंगसभा ने उनके लिये नियत किया हो, अधिक न देना। और उस धन के उचित व्यय के लिए वही अधिकारी, जिसके द्वारा वह व्यय हुआ हो, उत्तरदाता होवे।

३—सब धन के व्यय का रीतिपूर्वक वहीखाता रखना, और प्रतिमास अन्तरंगसभा में हिसाब को बहीखाते समेत परताल और स्वीकार के लिए निवेदन करना।

२४—पुस्तकाध्यक्ष—पुस्तकाध्यक्ष के अधिकार और कार्य ये होवें:—

१—जो पुस्तकालय में सभा के स्थिर और विक्रय के पुस्तक हों उन सवों की रक्षा करे, और पुस्तकालय सम्बन्धी हिसाब भी रक्खे और पुस्तकों के लेने देने का कार्य भी करे।

मिश्रित नियम

२५—सब गोरक्षक-सभासदों की सम्मति निम्नलिखित दशाओं में ली जावे:—

१—अन्तरंगसभा का यह निश्चय हो कि किसी साधारणसभा के सिद्धान्त पर निश्चय न करना चाहिये, किन्तु गोरक्षक-सभासदों की सम्मति जाननी चाहिए।

२—सब गोरक्षक सभासदों का पांचवां वा अधिक अंश इस निमित्त मन्त्री के पास पत्र लिख भेजे।

३—जब बहुत से व्ययसम्बन्धी वा प्रवन्धसम्बन्धी नियम अथवा व्यवस्था-सम्बन्धी कोई मुख्य विचारादि करना हो। अथवा जब अन्तरंगसभा सब गोरक्षक सभासदों की सम्मति जाननी चाहे।

२६—जब किसी सभा में थोड़े से समय के लिए कोई अधिकारी उपस्थित न हो, तो उस समय के लिए किसी योग्यपुरुष को अन्तरंगसभा नियत कर सकती है।

२७—यदि किसी अधिकारी के स्थान पर वार्षिक साधारण सभा में कोई पुरुष नियत न किया जावे, तो जब तक उसके स्थान पर नियत न किया जाए, वही अधिकारी अपना काम करता रहे।

२८—सब सभा और उपसभाओं का वृत्तान्त लिखा जाया करे, और उसको सब गोरक्षकसभासद् देख सकते हैं।

२९—सब सभाओं का कार्य तब आरम्भ हो, जब न्यून से न्यून एक तिहाई सभा-

सद् उपस्थित हों।

३०—सब सभाओं और उपसभाओं के सारे काम बहुपक्षानुसार निश्चित हों।

३१—आय का दशाँश समुदाय में रक्खा जावे।

३२—सब गोरक्षक और सभासनों को इस सभा की उपयोगी वेदादि विद्या जाननी और जनानी चाहिये।

३३—सब गोरक्षक और गोरक्षक-सभासदों को उचित है कि लाभ और आनन्द समय में सभा की उन्नति के लिए उदारता और पूर्ण प्रेमदृष्टि रक्खें।

३४—सब गोरक्षक और गोरक्षक-सभासदों को उचित है कि शोक और दुःख के समय परस्पर सहायता करें, और आनन्दोत्सव में निमंत्रण पर सहायक हों, छोटाई बड़ाई न गिनें।

३५—कोई गोरक्षक भाई किसी हेतु से अनाथ वा किसी की स्त्री विधवा अथवा सन्तान अनाथ हो जावे अर्थात् उनका जीवन न हो सकता हो, और यदि गोकृष्यादिरक्षिणी सभा उनको निश्चित जान ले, तो यह सभा उनकी रक्षा में यथाशक्ति यथोचित प्रबन्ध करे।

३६—यदि गोरक्षक-सभासदों में किन्हीं का परस्पर झगड़ा हो, तो उनको उचित है कि वे आपस में समझ लेवें, वा गोरक्षक-सभासदों की न्याय उपसभा द्वारा उसका न्याय करालें परन्तु अशक्यावस्था में राजनीति द्वारा भी न्याय करालेवें।

३७—इस गोकृष्यादिरक्षिणी सभा के व्यवहार में जितना २ लाभ हो वह २ सर्व हितकारी काम में लगाया जावे, किन्तु यह महाधन तुच्छ कार्य में व्यय न किया जावे। और जो कोई इस गोकृष्यादि की रक्षा के लिए जो धन है उसको चोरी से अपहरण करेगा, वह गोहत्या के पाप लगने से इस लोक और परलोक में महा-दुःखभागी अवश्य होगा।

३८—संप्रति इस सभा के धन का व्यय गवादि पशु लेने, उनका पालन करने, जंगल और घास के क्रय करने, उनकी रक्षा के लिए भृत्य वा अधिकारी रखने, तालाब, कूप, बावड़ी अथवा बाड़ा के लिए व्यय किया जावे। पुनः अत्युन्नत होने पर सर्वहित कार्य में भी व्यय किया जावे।

३९—सब सज्जनों को उचित है कि इस गोरक्षक धन आदि समुदाय पर स्वार्थ-दृष्टि से हानिकरना कभी मन से भी न विचारें, किन्तु यथाशक्ति इस व्यवहार की उन्नति में तन, मन, धन से सदा परम प्रयत्न किया ही करें।

४०—इस सभा के सब सभासदों को यह बात अवश्य जाननी चाहिये कि जब गवादि पशु रहित होके बहुत बढ़ेंगे, तब कृषि आदि कर्म और दुग्ध घृत आदि की वृद्धि होकर सब मनुष्यादि को विविध सुख लाभ अवश्य होगा। इसके विना सबका हित सिद्ध होना संभव नहीं।

४१—देखिये, पूर्वोक्त रीत्यनुसार एक गौ की रक्षा से लाखों मनुष्यादि को लाभ पहुँचाना, और जिसके मरने से उतने ही की हानि होती है, ऐसे निकृष्ट कर्म के करने को आप्त विद्वान् कभी अच्छा न समझेगा।

४२—इस सभा के जो पशु प्रसूत होंगे उन २ का दूध एक मास तक उसके बछड़े को पिलाना और अधिक उसी पशु को अन्न के साथ खिला देना चाहिए, और दूसरे मास में तीन स्तनों का दूध बछड़े को देना और एक भाग लेना चाहिये, तीसरे मास के आरम्भ से आधा दुह लेना और आधा बछड़े को तब तक दिया करें कि जब तक गौ दूध देवें।

४३—सब सभासदों को उचित है कि जब २ किसी को स्वरक्षित पशु देवे तब २ न्यायनियमपूर्वक व्यवस्थापत्र ले और देकर। जब वह पशु असमर्थ हो जाय उस के काम का न रहे और उसके पालन करने में सामर्थ्य न हो, तो अन्य किसी को न दे किन्तु पुनरपि सभा के आधीन करे।

४४—इस सभा की अन्तरंग सभा को उचित है किन्तु अत्यावश्क है कि उक्त प्रकार से अप्राप्त पशुओं की प्राप्ति, प्राप्तों की रक्षा, रक्षितों की वृद्धि और बढ़े हुए पशुओं से नियमानुसार और सृष्टिक्रमानुकूल उपकार लेना, अपने अधिकार में सदा रखना, अन्य किसी को इसमें स्वाधीनता कभी न देवे।

४५—जो कि यह बहुत उपकारी कार्य है इसलिए इसका करने वाला इस लोक और परलोक में स्वर्ग अर्थात् पूर्ण सुखों को अवश्य प्राप्त होता है।

४६—कोई भी मनुष्य इस सभा के पूर्वोक्त उद्देश्यों के लिए विना सुखों की सिद्धि नहीं कर सकता।

४७—क्या ऐसा कोई भी मनुष्य सृष्टि में होगा कि जो अपने सुख दुःखवत् दूसरे प्राणियों का सुख दुःख अपने आत्मा में न समझता हो।

४८—ये नियम और उपनियम उचित समय पर वा प्रतिवर्ष में यथोचित विज्ञापन देने पर शोधे वा घटाये जा सकते हैं॥

॥ समाप्त ॥